वेदान्त ५०६

तत्त्वमसि

(ब्रह्मविद्या)

छान्दोग्य उपनिषद् अध्याय

छठवाँ पर प्रवचन

स्वामी श्री त्रिवेणी पुरीजी महाराज

वेदान्त ८०६

तत्त्वमसि

(ब्रह्मविद्या)

छान्दोग्य उपनिषद् अध्याय

छठवाँ पर प्रवचन

दि. ग. ९४३५

स्वामी श्री त्रिवेणी पुरीजी महाराज

प्रकाशक

श्री प्रकाश संन्यास आश्रम

कालीमाटी डोल

काठमाण्डू, नेपाल

प्राप्तिस्थानः–

१. श्री प्रकाश संन्यास आश्रम
कालीमाटी डोल
काठमाण्डू, नेपाल । फोन ४७३८११

२. श्री संन्यास आश्रम
संन्यास मार्ग
कनखल-२४९४०८
(हरिद्वार) उ. प्र. फोनः ७१३८

३ वेदान्त कुटीर 'विपुल'
१७३ गरोडिया नगर
घाटकोपर
बम्बई-४०००७७ फोन : ५१२८३७३

४. वेदान्त आश्रम
सरदार कुञ्ज सोसाइटी फोनः २०१३७
शाहपुर, अहमदाबाद (गुजरात)

५. संन्यास आश्रम
जामनगर (सौराष्ट्र)

प्रथम आवृत्ति २०४८ अक्षय तृतीया

मूल्य—३०.... (प्रकाशन विभाग संचालनार्थ)

मुद्रक : माहेश्वरी प्रिन्टर्स (प्रा०) लि०, टंकेश्वर, कालीमाटी, काठमाण्डू, नेपाल

फोन – २७२८३६

श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ
श्री १०८ स्वामी त्रिवेणी पुरी जी महाराज

श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ
श्री १०८ स्वामी महेश्वरानन्द पुरी जी महामण्डलेश्वर

श्री मत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ
श्री १०८ स्वामी महेश्वरानन्द पुरी जी महामण्डलेश्वर

ब्रह्मलीन श्री १०८ स्वामी पूर्णानन्द शास्त्रीजी महाराज

दो शब्द

'सर्वं खल्विदं ब्रह्म तज्जलानिति शान्त उपासीत'

(छान्दो० ३-१४-१)

-तीसरे अध्याय छान्दोग्य में इस रहस्य को स्पष्ट किया कि यह जो कुछ प्रतीत हो रहा है, यह सब ब्रह्म से ही उत्पन्न हुआ है। जिससे जो वस्तु उत्पन्न होती है उस कारण से वह कार्य जुदा नहीं होता। जैसे मृत्तिका से घट रूप कार्य जुदा नहीं हो सकता। अतः यह जगत् ब्रह्म से पृथक नहीं हो सकता, ब्रह्म में ही प्रतिष्ठित है तथा प्रलय काल में ब्रह्म में ही विलीन हो जायगा। अतः रागद्वेषादि दोषों से रहित होकर मुमुक्षु महान ब्रह्म की उपासना करे। अनन्तर वैश्वानर- विद्या प्रकरण में इस रहस्य को भी स्पष्ट किया कि वैश्वानर- विद्या का तत्वज्ञानी जब भोजन करता है, ॐ प्राणाय स्वाहा कहकर आहुति देता है तो जगत् तृप्त होता है

'एकस्मिन् विदुषि भुक्ते जगत् तृप्तं स्यात्'

किन्तु यह सब प्राणियों को तृप्ति तब ही सम्भव है जब एक ही आत्मा स्वीकार किया जाये। भिन्न २ आत्मा को स्वीकार करने से एक के भोजन करने से सर्व प्राणियों की तृप्ति नहीं हो सकेगी, एवं सर्व भूतों में आत्मा का एकत्व किस प्रकार हो सकता है इसको स्पष्ट करने के लिए छान्दोग्य का छठवाँ अध्याय शुरु होता है। पिता- पुत्र की आख्यायिका तो केवल आत्म विद्या का महत्त्व प्रकट करने के लिये ही है। सामान्यतः बाल- स्वभाव खेल- कूद में मस्त रहना है, श्वेतकेतु भी बाल- स्वभाव से मुक्त नहीं है। काल- क्रम से बढता हुआ बारह वर्ष का हो गया।

एक दिन महर्षि उद्दालक प्रिय पुत्र का देख कर कहता है कि हे बेटा। हमारे वंश में आज तक वेदों को न पढकर कोई भी ब्रह्म- बन्धु नहीं हुआ, अतः

हे पुत्र । तुम ब्रह्मचर्य धारण कर वेदों को पढो । इस प्रकार पिता की फटकार होने से श्वेतकेतु का जन्मान्तरीय संस्कार जाग्रत हो गया और तत्काल गुरुकुल चला गया । बारह वर्ष तक बडी तत्परता से वेदों का स्वाध्याय किया । अब श्वेतकेतु के मन में अभिमान जाग्रत हो गया कि मेरे पिता तो इतने नहीं पढे हैं, मैं बहुत बडा विद्वान हो गया हूं । अतः जब गुरुकुल से लोटकर घर में आया तो पिता श्री उद्दालक के सामने नमस्कारादि कुछ न कर, अभिमान से अकड कर खडा हो गया । पिता भी समझ गये कि बेटे के अन्दर विद्या के साथ अहंकार भी आ गया है । यह अहंकार ही है जो मनुष्य का सर्वनाश करता है, अतः पिता जी ने अपने बेटे को अहंकार के बारे में कुछ न कहकर, पूछ बैठे कि हे पुत्र । जिसके महान आदेश से समग्र जगत् का प्रकाश होता हे, तुमने उस महान आदेश के बारे में क्या समझा हे ? इस महान आदेश के प्रभाव से जो कभी सुना नही है वह मानो सुना हुआ हो जायेगा । जिसकी कभी मन में कल्पना भी नहीं किया है, वह कल्पना में आ जायेगा ऋषि- पुत्र श्वेकेतु इस महान गूढ आदेश के महत्त्व को सुनते ही आश्चर्यचकित हो गया और बहु विज्ञता का अहंकार मानो कर्पूर (खतम) हो गया, तथा प्रार्थना करने लगा , हे भगवन् ? गुरुकुल के वे गुरु इस रहस्य को नहीं जानते थे, यदि जानते तो मेरे को अवश्य ही समझाते । मैं उनका एक आज्ञाकारी शिष्य था । अतः हे भगवन् । आप ही कृपा कर उपदेश करो । महर्षि सुनकर बहुत प्रसन्न हुए तथा कहने लगे, हे सौम्य ? मैं तेरे को समझाऊंगा-

'यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद् वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्' (छान्दो. ६-१-४)

'सदेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीम्'- (छान्दो. ६-२-१)

इत्यादि श्रुतियों के द्वारा सजातीय- विजातीय- स्वगत त्रिविध भेद शून्य अखण्ड- ब्रह्म का उपदेश किया । किन्तु श्वेतकेतु को महर्षि बार -२ गूढ ज्ञान का उपदेश करते है, तत्त्वबोध न होने से नो बार 'तत्त्वमसि' महावाक्य के द्वारा आत्मा का साक्षात्कार हो गया । अतः इस प्रकारण का नामा तत्त्वमसि रख दिया है ।

यह मेरा प्रवचन हरिद्वार सन्यास आश्रम में हुए थे जिनका संकलन धोराजी सौराष्ट्र निवासी प्रिय बेटी डा. सुश्री मञ्जु ने किया है । अत. प्रिय बेटी की बहुत-२ हार्दिक शुभाशीर्वाद एवं धन्यवाद करता हूं । स्वर्गीय आत्मा श्रीमान् बसन्त संघेर राणा अपने समय में बडे धर्मनिष्ठ ज्ञानपरायण पुरुष थे, इनकी पुण्य स्मृति में

उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रानी तेज कुमारी राणाने मुमुक्षु भक्तजनों के सुमङ्गलार्थ "तत्त्वमसि" पुस्तक का प्रकाशन करवा रही है। प्रिय बच्चों के सहित सपरिवार श्रीमती रानी को मेरा हार्दिक शुभाशीर्वाद एवं धन्यवाद है। इस तत्त्वमसि पुस्तक का परिशोधन हमारे प्रियात्मीय पण्डितप्रवर श्री गोपालनिधि तिवारी ने किया है। अतः उनको भी शुभाशीर्वाद के साथ भूरिशः धन्यवाद है। धर्मनिष्ठ श्रीमान् प्रेमनारायण कावरानें तत्त्वमसि पुस्तक का अपने मुद्रणालय में ही मुद्रण कराया। इनको सपरिवार शुभाशीर्वाद के साथ हार्दिक धन्यवाद है।

सतामनुचरः

स्वामी त्रिवेणी पुरीजी

यतश्चोदेति संसारस्तस्मिन्नेवतु जीवति ।
लीयतेच पुनस्तस्मिन् तद्ब्रह्मैव च केवलम् ।।१।।
षष्ठाध्याये च तद्ब्रह्म प्रकाश्यतेसुबोधाय ।
मन्दबुद्धिस्तु जिज्ञासुर्झटितिबोधवान् भवेत् ।।२।।
स्वपुत्रं श्वेतकेतुं चोद्दालको ब्रह्मवित्तमः ।
तत्त्वमसीतिवाक्येनोपदिदेश गुहाहितम् ।।३।।
तदा ब्रह्मोपदेशेन श्वेतकेतुश्च बुद्धवान् ।
हृदि स्थिते चिदानन्दे ब्रह्मैवास्मीति निश्चितः ।।४।।

भावार्थ

छठवां अध्याय का तात्पर्य–सार यह है कि जगत के मूल में जो सत्य है वह चेतन अमरतत्त्व है । और यह जगत उसकी माया का विलास मात्र है । किन्तु यह माया इस ब्रह्म से बाहर जाकर कहीं ससार की सृष्टि नहीं करती, ब्रह्म के अन्दर ही नाना मायामय विकारों को खडा करती है जिसको देखकर यह जीव भ्रमित होकर नाना जन्म–मरण के चक्कर में परिभ्रमित होता रहता है । अतः छठवां अध्याय में श्वेतकेतु को महर्षि ने–यह आत्मा ही ब्रह्म है, इसी में जगत् यह मिथ्या होते हुए भी भास रहा है-अतः श्वेतकेतु की तरह ही मुमुक्षु इस षष्ठाध्याय के तत्त्वचिन्तन द्वारा आत्मा को ब्रह्म समझ के कृतार्थ होने का प्रयत्न करे ।

इति शुभमस्तु

ॐ

भवसागर तारण कारण हे ।
रविनन्दन बन्धन खण्डन हे ।
शरणागत किंकर भीन मने ।
गुरूदेव दया करो दीन जने ।

अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।

ॐ

श्री परमात्मने नमः

छान्दोग्य उपनिषद्
छठवाँ अध्याय

प्रवचन सं.-१

ॐ श्वेतकेतुर्हारुणेय ग्रास तं ह पितोवाच श्वेतकेतो वस ब्रह्मचर्यं न वै सोम्यास्मत्कुलीनोऽननूच्य ब्रह्म बन्धुरिव भवतीति ।।१।।

स ह द्वादशवर्ष उपेत्य चतुर्विंशतिवर्षः सर्वान् वेदान-धीत्य महामना ग्रनूचानमानी स्तब्ध एयाय । तं ह पितोवाच श्वेतकेतो यन्नु सोम्येदं महामना ग्रनूचानमानी स्तब्धोऽस्युत तमादेशमप्राक्ष्य : ।।२।।

येनाश्रुतं श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं विज्ञातमिति ।
कथं नु भगवः स ग्रादेशो भवतीति ।।३।।

यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद्वा-चारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम् ।।४।।

(छान्दो. ६-१-११४)

तो विचार चलता है छान्दोग्य उपनिषद का ये छठवाँ ग्रध्याय, इसमें बडी महत्त्वपूर्ण ब्रह्मविद्याका वर्णन है, जिसके जाननेसे ये मनुष्य जीवन सफल ग्रौर

नही जाननेसे मनुष्य जीवन सफल नही होता । तो इस विद्याको इस अध्यायमें प्रकट करना है । इसके पहले कहके आये कि–

इसके वाद वैश्वानर विद्या आयी है उसमें समझाया है कि वैश्वानरको जाननेवाला जो विद्वान है वह जब खाएगा तो सारी सृष्टि तृप्त हो जायेगी । एक विद्याका ज्ञाता उसके खानेसे सब जगत तुष्ट होगा तो कैसे? आत्मा वैश्वानर भोक्ता तो एक है, भोजन अनेक है भोजनके साधन भी अनेक है इसलिये एक विद्वानके भोजन करनेपर सारे जगतकी तृप्ति होती है ।

इसको दृष्टांन्त द्वारा समझाने एक महाभारतकी पौराणिक कथा सामने आती है ।

महर्षि दुर्वासा एकबार अपने सहस्त्रशिष्योंको साथमें लेकर पहुंच गये जंगलमें पांडवोके पास, जब द्रौपदी भोजन कर चूकी थी । ऋषि ने तो बताया हम स्नानादिसे निवृत्त होकर भोजनके लिये आयेंगे इतना कहकर वे तो स्नानादिके लिये चले गये । यहांपर युधिष्ठिरको मुनियों से अन्नपात्र मिला हुआ था इसलिये वे वनमें भी निश्चिन्त थे, किन्तु मुनि ने बताया था जबतक द्रौपदी भोजन नहीं करले तब तक ये खाली नही होता– किन्तु आज तो द्रौपदी भोजन कर चूकीथी जब उनको पता चला तो अब द्रौपदी व्याकुल हो गई सत्यव्रता स्त्री थी– एक दोको खीलानेकी बात नही यहांपर सहस्त्र शिष्योके साथ अब दुर्वासा मुनिको भोजन कैसे कराये ? पात्र तो खाली कर दीया था । दुर्वासा मुनि तो वडा महान तपस्वी मुनि थे किन्तु बडे क्रोधी भी थे तो इससे मालुम पडा कि तपस्वी होने पर भी क्रोधादि विकार छोडते नही । इसमें दुर्वासा मुनिकी निन्दा नही । जबतक आत्मा-को मन पकडेगा नही तब तक किनार छोडेंगे नही । जब दुर्वासा मुनि क्रोध कर लेते है तो हमारे में क्रोध होती क्या बात है ? ऐसे बडोंकी आडमें अपने दोषों को पनपने मत दो । क्रोधादि दोष है । जबतक आत्म ज्ञान आयेगा तो हम–हम तब तक नही कर रहे है किन्तु ये हम–हम क्या समझगे नही तब तक ये मायिक बिकार नही छोडेंगे । मनके क्रोधादि जो भी बिकार है सब मायिक है । यह आत्मा हमारी क्या जब तक इसका वोध नही होगा ये चित्त निर्मल भी नही होगा ।

इसलिये आत्माके बोधको जाग्रत करना ये उपनिषद विद्याका प्रधान लक्ष्य है । ना ये मनोरंजन करनेकी विद्या है ।

तो ऐसी हालतमें अशान्तमना बिचारी द्रौपदी भगवान कृष्णको याद करने लगी की हे भगवन् ! हमारी लाज रखो । भगत जब संकल्प करता है तब भग-

वान खड़े पहुँच जाते है। भगवान कृष्ण पहुँच गये जैसीही द्रौपदीने संकल्प किया। पांडवोका हित करनेके लिये तो सखा श्रीकृष्ण भगवान तत्पर थे। पांडव भी श्रीकृष्णको साक्षात् चतुर्भुज विष्णु रूपमें देखते थे। इसलिये तो श्रीमद् भागवद् गीताके ग्यारहवें अध्यायमें अर्जुनने कहा है "तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते ।।४६।।" अर्जुन श्रीभगवान से प्रार्थना करता है कि हे सहस्रबाहो इस समय तो आपको सहस्रबाहु है। अर्जुन जिसको देखकर बेहोश हो गया था। तो आप चतुर्भुजरूप दिखादे ऐसी प्रार्थना करता है। इसका अर्थ यह निकला की अर्जुन श्रीकृष्णको हमेशा चतुर्भुज विष्णु रूप से ही देखता था। वो कृष्णको दो हाथ पैरवाला ऐसे मनुष्य रूपमे नही देखता था। तो ऐसे पांडवोके हितके लिये श्रीकृष्ण तत्पर थे तो द्रौपदी के पास पहुंच गये और कहा द्रौपदी कुछ खानेको दो। द्रौपदी कहने लगी हे भगवान् खानेकी समस्याके लिये तो मैं रो रही हुं और आप भी भूखे आयोगे तो कैसे चलेगा? ये इतने महान ऋषि सब भूखे आये है कैसे खिलायें? कहांसे खिलाये? कुछ भी नही है। और आप भी भूखा चले आये है अब बतलाओ भला?

भगवान कृष्ण कहने लगे नही नही हंडीमें देखो तो कुछ निकल आयेगा अब भगत तो भगत ही है। हंडीमें कुछ दिखाइ पड गया अब मानलो श्रीकृष्णके संकल्पसे ही वहां हो गया हो। क्योंकि ईश्वर तो।

"कर्तुम् अकर्तुम् अन्यथा कर्तुम् ईश्वर:"

आजकल जैसे भगवान बने हुए है उनके साथ अगर ऐसी व्याख्या करे तो मुश्कील पड जायेगा।

जैसा वो भूतोका परिवर्तन करना चाहे कर दे उल्टा करना चाहे तो उल्टा कर दे सीधा करना चाहेतो सीधा करदे वो ईश्वर है। जैसी इच्छा करे वैसा कर दे।

ईश्वरके बारे में दूसरीं व्याख्या ये भी है।

प्रवृत्तिच निवृत्तिच भूतानामागतिं गतिम्
वेत्ति विद्यामविद्यां स वाच्यो, भगवानिति।

भगवान की व्याख्या करते हुए कहेते है भगवान छ प्रकारका ऐश्वर्य। युक्त है वे हो जिनके पास उसको भगवान कहेते है।

प्रवृतिच– सब प्राणी प्रवृत्ति कर रहे है– तो सम्पूर्ण प्राणीयोकी प्रवृत्तिको समझने वाला वो ईश्वर है।

हम लोग तो अपनी प्रवृत्तिको भी नही समझ पाते। संकल्प हुआ और हमलोग चल पडे– चल क्यु पडे– कहेते है कोइ पता नही। तो संपूर्ण प्राणीयोके संकल्पोका जो ज्ञाता है उसको ईश्वर कहते है।

इसी प्रकार निवृत्तिच– संपूर्ण प्राणीयोकी निवृत्तिका जो जाने वो ईश्वर है। निवृत्ति क्या ? तो इच्छा न होना ही निवृत्ति है। इच्छा होगी तो कार्य करोगे क्योंकि जानाति इच्छति यतते–पहेले तो मनुष्यप्राणी जानता है फिर इच्छा करता है और फिर कर्म में प्रवृत्त होता है ज्ञान नहो तो उसको इच्छा नही इच्छा नही तो कर्म भी नही होगा उससे।

इच्छा जिसको कहते है उसको सर्ववस्तु विषयक ज्ञान है– सर्ववस्तु विषयक इच्छा भी है और इसलिये वे सबका नियन्ता बन गया– वो अंतर्यामी परमात्मा जीवोंकी इच्छाको जानता है इसलिये हमारी कर्मको भी जानता है। ईश्वर हमारी प्रवृत्ति याने धर्म और निवृत्ति याने अधर्मसे बचना– उसको भी यथार्थ रूपम जानता है। जन्मादि हमको जो कुछ भी मिल रहा है हमारे धर्माधर्मका अधीन है। पूर्वजन्मके हमारे धर्माधर्मके अधीन हमारा यह शरीर और उसके साथ धर्माधर्मका फल गति अगति गतिका मतलब परलोक गति– गए जीव किस योनिमें जा रहा है, ये हम नही जानते। जो पारिवारिक जीवनमें बेटाबेटी समझे जीवन तक साथमें रहे–किन्तु अगर ये हमारी साथमें रहनेवाली आत्मा किधर गया पूछो उनसे तो कहेगा– नही पता। अरे पतिपत्नी लम्बे अरसे तक साथमें रहे– किन्तु जब आंखसे दिखाई देना बन्द हुआ तो कहेने लगे मर गयारे मर गया– कहाँ गया तो पता नही। तो फिर मरा कैसे ? मरा वो गया कैसे ? बोलना नही चाहिये गलत शब्द है। हम यहा गति को नही जानते किन्तु परमात्मा जानता है ये किधर गया और किस सकलमें इधर आना है– इसको कहेते है गति। उत्तम– मध्यम या अधम योनियोंमें ये आयेगा. जीव इसको आजका भगवान नही समझ सकता– किन्तु वो अंतरयामी परमात्मा है वह जानता है।

प्रवृत्तिच निवृत्तिच भूतनामागतिं गतिम्।
वेत्ति विद्यामविद्यांच स वाच्यो भगवानिति ॥

तो जीवके पास कौनसा ज्ञान है– अज्ञान है वो अंतरयामी परमात्मा जानता है। मान लो वह सत्संगी है सत्संगतत्पर है। सत्संगी सबसे मिलनेवाला है।

सोचो क्या ये शरीरका ढांचा सत् है– क्या इन्द्रिया सत् है– ये इसके अंदर दिखनेवाला मन सत् है या बुद्धि सत् है ? कौन सत् है। तो कहना पडेगा

उस चेतन आत्मा ही सत् है। उसका जो संगी है उसको कहते है सत्संगी। सत्संगीका मतलव ये नही कि कहीं कथा वार्ता सुन आये तो सत्संगी बन गये। इस चेतना आत्माके साथ मनको मिलाये वो सत्संगी।

अब जो विचारशील मुमुक्ष है ये उस सत्के साथ कैसे मिले– तो इसके लिये संवन्ध है शब्द। शब्दके विना संबन्ध वनता नही।

आजका विज्ञानकायुग है मानलो कोई हमारा लडका अमेरिका में रहता है और हम उससे फोन मे बाते करते है तो मालुम पडता है कि बगलमें बैठे है कि नही ? हजारों माइल दूर है उसके स थ हमारा संवन्ध शब्द से हो रहा है। शब्दमें वडी ताकत है। लोकभाषाके शब्द में इतनी ताकत है की वो हमारेको हजारों मीलकी दूरी होने पर भी मिलादेता है, हम उसके रूप रंगको तो नही देखते किन्तु हम उसकी वात सुन रहे है– प्रसन्न भी हो रहे है दुःखी भी हो रहे है।

इसी तरह कोई बुद्धिमान विचारसे ईश्वरका शब्द बोलेगा तो सत्संगी अपने दुःखको भूलके सुखमे चला जायेगा न तो वह इन्द्रियोसे या किसीके देनेसे सुख मिलेगा ये विचित्र सुख है इन्द्रियोंके अधीन नही ये सुख जो सत्संगी पायेगा। इसलिये वो सत्संगी ऐसा जो व्यापक सत् है उस विद्याको अपने अन्दर धारण करता है। मानलो इस शरीरको तो सवने छोडना है तो सत्संगी का शरीर भी तो छुटना है।

वस्त्रो तो जिसने बहुत संभाला उसका भी फटना है और जिसने नही संभाला भी फटना है। इसी तरह इस शरीरको तो वस्त्र समझो। जो बडा संयमी है, बडा त्यागी है उसको शरीरको तो समझो पञ्चभूतोसे बना चोला है उसने भी फटना है और जो वडोसे बडा भोगीका भी शरीर रूपी चोला तो फटना है। एक भोगी होकर छोड रहा है, एक योगी होकर छोड रहा है।

चोला तो दोनोने छोडना है दोनो वरावर है किन्तु विशेषता किसमें है भला। एक ज्ञानरूपी धनको लेके बैठा है और सत्रसे मिलके जीया है– मायापतिसे मीला है। दूसरा मायाके विलाससे मिला है उसका मीलना केवल शरीरमात्रसे है उसका शोक मोह शरीरमात्रसे है, वह निवृत्त नही हुआ।

और जो आत्मासे मिला उसका शोक मोह निवृत्त हो गया रोता कौन है–? शोक मोहवाला।

प्रसन्न कौन है ? जिसमे शोक मोह नही– जो विद्यावान है। उसकी गति जुदा और अविद्यावाला है उसकी गति जुदा। ईशावास्योपनिषद् में श्रुति

भगवती इसका वर्णन करती है।

असूर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसाऽऽवृता:।
तांस्ते प्रेत्याभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जना:॥३॥

तो अविद्यावाले जो भोगप्रधान मनुष्य हैं वह असुरोंके जो प्रसिद्ध नाना प्रकारका योनियों एवं नरकरूप लोक हैं वे सभी अज्ञान तथा दु:खक्लेशरूप महान अंधकारसे आच्छादित हैं उनको प्राप्त करते हैं। अगर देवता भी भोगासक्ति है तो वे भी असुर है।

देवता असुरमें पुण्य विषयमें फर्क है भोगासक्तिमें दोनो समान है। यह पशुपक्षी अज्ञान भूमिमें है इसलिये जडभावमे है। जो ज्ञानका साधक सत्संगी है वह ज्ञान भूमिमें जायेगा अज्ञान भूमिमें नही जायेगा– साधक जडके ज्ञान रहता तो हैं जैसे अपना यह शरीर जड ही तो है इसके साथ रहता हुआ भी निराला होजाता है विचारसे।

तो भगवान श्रीकृष्ण वहाँ पहुँच गये–भगतकी रक्षा तो करनी है ना। भगवानका प्यारा कोई नही उसका दुश्मन ही कोई नही तो प्यारभी कोई नही– जिसका दुश्मन होगा उसका प्यारा भी होगा। भक्त जो है वह अपने प्यारको फेंकके खींच लेता है अपनी और भगवानको और अपनी रक्षा उनसे करवालेता है। तो द्रौपदी ने पात्र देखा तो निकल आया भाजीका वह तीनका भगवान श्रीकृष्णने बडे प्रेमसे खाया तो तृप्ति होगई– डकार आ गई– और साथमें संकल्प किया वो उधर जितनेभी ऋषि गंगाजीमें स्नान कर रहेथे– अचानक सबका पेट भर गया तो पेटमे हाथ रखके सोचने लगे– अब द्रौपदी के पास जाकर क्या करेंगे– खाया तो जायेगा नहीतो वहींसे सब पांडवोंको आशीर्वाद देके चले गये। तो यह वैश्वानर विद्याकी बढी महिमा है। एकके तृप्त होनेसे सब जगत तृप्त हो गया इसलिये श्रुति में कहाँ "सर्वं खल्विदं ब्रह्म"

नामरूपात्मक जगत् है। कोई हमको पूछेगा कौन हो तुम तो नाम और रूप हो तो बतलायेगे। कोई कहेगा तुम अपनेको नाम– रूपसे जुदा करके बताओ तो इससे जुदा करके आगे बढेंगे तो न तो तुम्हारा कोई नाम– सकल या आकार रहेगा। भक्त सोचता है की नाम–रूप था आकार हो नही रहा तो हम उसका भजन कैसे करेंगे? अरे किन्तु तेरा ही कोई आकार नही है तो भगवानका आकार कौन सा होगा? जब तुम्हारा कोई आकार नहो देख रहा है। इसलिये आकार मात्र माया है यह है वेदोंका अंतिम तत्त्व। आकार नाममें शोक मोह हो रहा है–

वह भी माया मात्र है ।

किन्तु यह नाम-रूपभी अधिष्ठानके बिना नही जैसे देखो यह गुलाबका फुल है इसका आकार भी है– नाम भी हे किन्तु यदि इसमें से रसकी निवृत्ति हो जाये तो बतलाओ– अधिष्ठानके अतिरिक्त यह कल्पित वस्तुकी कोई सत्ता है । इसलिये श्रुति भगवती कहेती है "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" ।

नामरूप भी सृष्टि है यहसब भी ब्रह्म ही है । बेटा यह जो कुछ भी हम देख रहे है– दृष्टान्तसे समझो– जैसे यह गुलाबका फुल उसका सबकुछ रसात्मा ही है । जब एक गुलाबके फुलमें हम रसके अतिरिक्त कुछ भी नही देखेंगे तो इस जगत्‌को हम किसमें देखेंगे हैं । देखने तो हम उसको ही है जो असली तत्त्व है– चाहते भी हम उसको ही है किन्तु देखते हुएभी नही देखते उसीकी माया कहते है । देख रहेहै व्यवहार भी कर रहें है किन्तु उसको नही समझ रहे है यही माया है ।

उपनिषद विद्या इस रहस्यको प्रगट करती है यह जो कुछ भी नामरूपसे भासित है यह सब ब्रह्म ही है ।

मुमुक्षु कैसा होना चाहिये तो कहेते है शांत होना चाहिये ऐसे गूढ रहस्यको समझनेके लिये शांत हो । मानलो अपनी लडकीकी शादी करनी है जवाहरात कुछ खरीदना है तो कितना शांत होके जाना है की जिससे हम अच्छा हींरा लेके आये । अशांत होके– या चिन्ता या शोकमें जायेगा वह अच्छा हीरा नही ला सकता तो लोकमें भी कीसी किमती वस्तु लेनेको लिये शान्तमन चाहिये तो सोचो जीवनके इस सत्य को पानेको लिये मुमुक्षु अगर शातन्मना नही होगा तो क्या होगा शान्त मन होगा तो समझ में आयेगा यह जगत् जिससे उत्पन्न हो रहा है, जिसमे जी रहा है– जिसमें लय हो रहा है तद् ब्रह्मेति ।

अपने इस शरीरसे पूछो– यह कैसे जन्म ले रहा है क्या वह मा के पेटसे जन्म ले रहा है ? अगर तुम वहाँ न हो ते तो यह वहाँ होता? तो शरीरका जन्म तुह्मारे में हो रहा है की माके पेटमें ? माताका पेट तो केवल इसको सुरक्षित करता है । खुलेमें जन्म हो नही सकता । जिस आत्मामें यह शरीर जन्म ले रहा है वही उसका पोषण भी कर रहा है और उसमें यह सांगोपांग हो रहा है और बाहर आ गया तो क्या समझते हो–पृथ्वी पर जी रहे है हम लोग ? घरमें जी रहे है ?जरा प्राण बन्द हो जाये तो वेटी डोली सजाके चल देंगे । तो घरमें किसकी कृपासे रह रहे हो । घरमें तो वह आतमा ही रख रहा है जिसको हम कभी नही

देखते । खानादाना भी कौन दे रहा है ? हम बेटे है तो खानेके लिये रोटी भी आ रही है, हम यदि बेहोश हो गये तो कौन देगा खानेको ? इसलिये तुम्ही सबकुछ हो बाकी सब मननीय है । हम सोचते है प्यारसे बोला तो सुख हो गया वही सबकुछ हमारा हैं किन्तु यह बात गूढ है । तुम्हारा कोई नही तुम्ही अपने हो । किन्तु अपने यह बात नही समझ पा रहे हो । इसी रहस्यको समझनेके लिये यह छान्दोग्य उपनिषदका यह छठवां अध्याय है । उस आत्मा जो अखंड एक सत्य है उसको यह बुद्धिमान मनुष्य समझे ।

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. २

ॐ श्वेतकेतुर्हारुणेय आस तं ह पितोवाच श्वेतकेतो वस ब्रह्मचर्यम् । न वै सोम्यास्मत्कुलीनोऽननूच्य ब्रह्मबन्धुरिव भवतीति ।।१।।

स ह द्वादशवर्ष उपेत्य चतुर्विंशतिवर्ष : सर्वान् वेदानधीत्य महामना अनूचानमानी स्तव्ध एयाय । तं ह पितोवाच श्वेतकेतो यन्नु सोम्येदं महामना अनूचानमानी स्तब्धोऽस्युत तमादेशमप्राक्ष्य : ।।२।।

येनाश्रुतं श्रुतं भवत्यमतंमतमविज्ञातंविज्ञातमिति । कथ नु भगव : स आदेशो भवतीति ।।३।।

यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम् ।।४।।

(छान्दो ६-१-१ । ४)

तो विचार आया था कलके प्रसगमे– यह सब ब्रह्म ही है। प्रकृतिके चराचर चक्रमें चर और अचर दो प्रकारकी सृष्टि है । और यह हमलोगोके शरीर है यह चर है। तुम चलाओ या न चलाओ यह शरीर चल रहा है, जन्मसे लेकर अब तक यह चल रहा है गतिशील है और यूं भी यह एक जगह से दूसरी जगह चला जाता है और यह पशुपक्षी के शरीर भी चर है इसलिये इसको चर सृष्टि कहा ।

यह दो प्रकारकी सृष्टि है इसे जीवन तो चाहिये इसके विना मुरदा चलने-वाला नही अगर मुरदे चलने लगा जाय तो जीवनकी बिचार चर्चा व्यु हो । मुरदे चलते नही इसलिये कल्याण भी समझो । अगर मुरदे चलने लगजाये तब तो बडा अनर्थ हो जायेगा । भगवान पशुपतिका जो घाट है वहांसे मुरदे अगर भागने लगे तो हलचल हो जायेगी । संसार में इसलिये परमात्माने अपनी सत्ताके विना ये जो माया है और मायाका बिकार है उसमे कोई शक्ति नही रखी । ऐसे पदार्थ है जिसमें कोई शक्ति नही जहां पडा वहीं पडारहा– चेतनके बिना । ऐसे जो पदार्थ है जिसमें चेतनसे बढी शक्ति दिखती है वह चेतन कौन ? अपने शरीरको ही समझो आत्माके बिना इसमें कोई रूप नही, बल नही, शक्ति नही किन्तु आत्माके रहने पर इसमें बडी सुन्दर रूप एवम् बल दिखाइ देते है, ऐसे ही इस सारे ब्रह्माण्डमें एक परिपूर्ण आत्मा है उसको ब्रह्म कहते है ।

श्रुति भगवती कहती है "सर्वं खल्विदं ब्रह्म ।" और आगे चलकर इसबातको समझाया की यह जो महान ब्रह्म है वही वैश्वानर आत्मा है ।
इस विराट आत्माका ध्यान करनेवाला वह जो मुमुक्षु है सगुण साकार का भक्त कहलाता है ।

इस ब्रह्माण्ड शरीरको नही पकडा तो वह निर्गुण निराकार ब्रह्म हो गया । बिराट आत्मा इस विश्वकी आत्मा है । जड और चेतनकी भी वह आत्मा है इसलिये इस ब्रह्माण्डका कणकण प्यारा लगता है । देखते नही हो यह मिट्टी कितनी प्यारी है । यहसब जोकुछ भी दिखता हो यह पौधे, फूल, फल सबकुछ प्यारा है ।

किसी भी फल को लो- मानलो यह ऐपल (सेव) है- सोचो यह कब तक प्यारा है ? जब तक इसके अंदर सुंदर रस है । अब रसकी सुंदरताका क्या व्याख्यान भला ? रस स्वरूपसे सुंदरकी स्वादसे सुंदर के अपने आपमें सुंदर–? जबतक उसमें वह व्यापक सत्ता है वह सुंदर है जब वह सता नही तो यह मुरदा हो जाये-गा– सड जायेगा फिर सडा हुआ फल किसीको प्यारा लगेगा ? सडा सतरा किसीको देदो तो वह लेगा ? नही, मानलो ले भी लिया ।

एक बडे अच्छे संत रहे। घरोमें भिक्षा करने जातेथे क्याकरे इस हंडीको तो भरना ही है– तो एक घरमे जाते तो वह जो गृहपति कहे– क्या हट्टाकट्टा है किन्तु कमाते कुछ भी नही और चलपडे घरोंमें भिक्षा मांगने किन्तु संत सब सुनले चूपचाप ।

रोज इसी तरहा चलता रहा— रोज संत जाये वह बिगडे— तो एक दिन उससे रहा नही गया— पूछा रोज मैं तुम्हे गालिया देता हुँ— तुम फिर क्यु आये ? वे बोले मैं तेरे देनेका आदतको पक्का कर रहा हुँ— देते तो हो चाहे गालीया ही सही । आज गालीया ही सही कल कुछ और भी दोगे । दुनियामे दोही चीज है एक अच्छी और दूसरी बूरी । अगर तुम अच्छी नही दे सके तो बूरी ही देदो । फिर दोगे तेरी देनेकी आदत तो पक्की होगी । तो इस तरह आज मानलो किसीने सडा संतरा तुम्हारे सामने रखा तो गुस्से नही होना चाहिये खुश होना चाहिये कि इसको देनेको आदत तो पडेगी । विवेकी कभी गडबड भी होये तो दु:खी नही होना— समझो ये दाता कमजोर है और कुछ समझानेकी जरूरत नही । गालीया भीं दिया तो भी उसने नीकालातो अपनी अंदरसे इसलिये घबराओ मत— माल भी रखा है उसके वक्से में वह भी नीकालेगा ।

सडा संतरा सडा क्यू ? तो कहना पडेगा की उसमें रसरूप जो परमात्माकी सत्ता थी वह डीसकनेक्ट (असम्वद्ध) हो गई ।

श्रुति भगवती कहती है " स: स्वाद: " रसका अर्थ— रस्यते स्वाद्यते इति रस शब्दका अर्थ स्वादभी है ।

नीम्बुके आचारका स्वाद लेना है— जैसी देखनेमें जेसीही नीम्बु आयाकी जीभसे सुरसुर पानी वहने लगता है— चित्त भी प्रसन्न होता है की गरमी लगी थी नीम्बुके रससे ठण्डी मिलेगी ।

इस शरीरके अंदरभी कोई रस दिखता है की नही ? क्युकी शरीरके देखने में— पास बैठने पर स्वाद आया बोलनेभी स्वाद आया और कभी तु—तडाग में भी स्वाद आता है । तु—तडाग माने कभी कभी खटपट हो जाती है— आपसमें टकराये तो कभी चिल्लाने में भी स्वाद आता है जब स्वाद नही आयेगा तो वह भी चूप हो जायेगा— मौन हो जायेगे— । इसलिये वह रसरूप है वह अंदर बैठा है ।

रसं ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनन्दी भवति

(तैत्ति० २–७)

इस रसको प्राप्त करके आनंद होता है । यह रस इसको मिलता है । माया भगवती ने इस ब्रह्मको आवृत करके जीव भावमें तो रखा है किन्तु फिर भी इसके असली स्वरूपको प्रकट कर रही है । आवृत करनेपर अन्यथा वृत्ति तो हुई—कि में जीव हूँ— मै शोक—मोहवाला हुँ संसारी हुँ— केवल इसी अंशको देखे और अपने आनंदरूप अंशको नही देखेगा तो जितने पशु-पक्षी है ऐसे ही यह जन्मे— शोक

मोहमें जीये और मर गये–तो यह हमारा भी पशुयोनिका जीवन हुआ । जीवन ग जो महत्त्वपूर्ण अंश है सत्– चित्– आनंद इसको समझना पडेगा । यह शरीर कैसे घुम रहा है प्रकृतिके साम्राज्य में– धीरेधीरे यह शरीर बच्चा बना फिर युवा और फिर बूढा– और आगे बचपन रखा है तो माने वृद्धावस्था क्या है ? foundation Stone of Childhood इसलिये बूढोंको बच्चोमे बडा प्यार होता है जब देखो उनकी अगल बगलमें घूमते रहेते है क्योंकि यह जानते है अब यह सकल हमको मिलनेवाली है ।

यह जो शरीरका चक्र है यही प्रकृतिका नृत्य है प्रकृति तुम्हारे सामने नृत्य कर रही है– शरीरकी सकलमें प्रकृति है– नृत्यमें जैसे एक चक्कर पूरा हुआ तो सीन ड्रोप (दृश्य बन्द) हो गया । भगवती प्रकृति जब एक चक्कर पूरा करके सीन ड्रोप करती है तो कहते है मर गयारे– मर गया– । क्या मर गया भला ? वह अपने ही बदली ना ? अपने ही मरी ना ? तुम्हारे रहेनेसे वह अमृत दिखातीथी तुम्हारे न रहेनेसे वह मरी तो यह बताओ मरा कौन ?

असली तत्त्व जो है वह तो मरता नही इसलिये श्रुति भगवती कहती है ।

अशरीरं शरीरेष्वनवस्थेष्ववस्थितम् ।
महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति ।।

(कठो० १–२–२२)

हे सोम्य ये जो तेरा स्वरूप है अशरीरम् वह अशरीरी है माने शरीरभावसे परे है । शरीर का मतलब है जो प्रतिक्षण बदले– शीर्यते प्रतिक्षणम् अन्यथा परिणमते –वह शरीर। तू प्रतिक्षण बदलनेवाला नही । तू जैसेका तैसा है– तू आत्मारूप ही है । प्रकृति तेरा सामने अनेकरूप धारण करती है इसलिये तु अपने अनवस्थे–ष्ववस्थितम्– कभी व्यवस्थित न रहे वह शरीर में सुव्यवस्थितम् माने स्थिर रहेनेवाला आत्मरूप ही है ।

जैसे पिता अपने बच्चेको छोडके जाये और जब बेटा जवान हो तब घर लौटे हो क्या जवान को भी अपना बच्चा नही कहेगा? कहेगा तो क्योंकि अन्दर जो बाल्य बैठा है वहतो जैसेका तैसा ही है । जब तक मनुष्य इस स्वरूपको समझेगा नही तबतक कर्मोकी मार खानी पडेगी और कोई उपाय नही । कर्मोका फल है शोक–मोह । विवेकी सत्संगके द्वारा अपने स्वरूपका बोध पाता है– बोध के द्वारा शोक–मोहसे निवृत होता है ।

एकत्व का अनुभव करता है क्योंकि इन्द्रियोका उनसे कोई संबंध नही किन्तु यह इन्द्रिया तो उनकी कृपासे जागती है। देखती है सुनती है ऐसी वह जो तुम्हारी अंतर आत्मा रसरूप ही है। अगर वह रस जीवनमें नही मिले तो इस जीवन सें कौनसी इन्द्रिया जीयेगी। प्राणापानकी चेष्टा भी तब तक होगी जब तक यह रसरूप आत्मा है–

ब्रह्मआत्मा को श्रुति आकाश की तरह–बतलाती है- यहाँ आकाशका मतलब भूताकाश नही– किन्तु आकाशका मतलब आकाश तुल्य– जैसे भगवद्गीता में भी आया ।

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते ।
सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते ।।

(गीता १३–३२)

जिस प्रकार सर्वत्र व्यापक हुआ भी आकाश सूक्ष्म होनेके कारण लिपायमान नही होता है, वैसे ही सर्वत्र देहमें स्थित हुआ भी आत्मा, गुणातीत होनेके कारण देहके गुणोंसे लिपायमान नहीं होता है। देहका मतलब यहाँ केवल स्थूल शरीर ही नही समझाना– किन्तु– इन्द्रिया–प्राण मन आदि सभीके गुणोंसे दोषोंसे ये निराला है– ऐसा असंग जो तत्व है वह सर्वान्तर आत्मा है। उसको जो विराट रूप में जो ध्यान करनेवाला जो ज्ञानवान मुमुक्षु है वह जब भोजन ग्रहण करके संकल्प करता है तो सारे जगतकी तृप्ति होती है।

प्रकृति जिस अंशमें इसको आवृत करती है उसमें शोक–मोह है– किन्तु ये सत्यको बिलकूल आवृत नहीकर सकती–उस अंशमें वह महान सत्– चित्–आनंद स्वरूप भासनेवाला ब्रह्म है।

एक ही अद्वितीय तत्त्व है उसमें कोई भेद नही। लोक दृष्टिमें जो भेद है सजातीय– विजातीय– स्वगत यह तीनो प्रकारके भेद इसमें कोई ठहरता नही। नाना शब्दका अर्थ है भेदवत् वस्तु। जहाँ पर पदार्थोका भेद दिखता है वहाँ नाम–रूपसेही दिखता है। किन्तु जैसे एक घडा दूसरे से जुदा आकारमें तत्त्वमें कोई भेद नही तत्त्व तो समान दोनोमें मिट्टी ही है। इसी तरह आत्मतत्त्वमें भी कोई भेद नही फिर भी जो नाना इव पश्यति मतलब भेदवत् वस्तुको देखे तो वह वारवार मृत्युको आया करेगा। यद्यपि भेद कुछ है नही फिर भी गाल फुलाकर हम उसकी प्रशसा करतेजारहे हे ये वडा सुंदर– वडा प्यारा वडा रसाल

ऐसे व्याख्यान क्यों करते हैं पदार्थोंका क्योंकि हमारी बुद्धि उसी नाम–रूपमें ही टीका है ।

यह ब्रह्मकी एकता को बुद्धिमान मुमुक्षु स्वीकारकरे ब्रह्म ही सत्य तत्त्व है दूसरा कोई नही इस रहस्यको स्पष्ट करनेके लिये ही यह पिता–पुत्रकी आख्यायिका का छांदोग्य उपनिषदमें वर्णन है ।

जबतक एकत्व दर्शन नही करेगा नानात्वमें घुमता रहेगा । ब्रह्मविद्या द्वारा एकत्वका दर्शन नहीं करेगा तब तक भेददृष्टिमें भ्रान्त है और तबतक तो तुम्हारे दुःखको कोई दूर नही कर सकता ।

चाहे कितना ही प्यारा हो– कोई तुम्हारा बेटाही क्यों नही हो । वह एक हाथको पकडके बडे प्यारसे मलने लगे– पिताके हाथको– और पिता बोले बेटा क्या बात है तो कहे आपका यह हाथ हमको बडा प्यारा है और दूसरा जो हाथ है वह प्यारा नही लगता उसको तो बेटा काटनेकी चेष्टा करे तो उसको क्या करोगे ? प्यारा या दुश्मन ? कहना पडेगा यह दुश्मन ही है ।

एक अंशसे प्यार करे दूसरे अंशमे दुश्मनी करे वह भक्त नही– वह प्यारा भी नही ।

इसी तरह यहां पर समझो सर्वांशसे परिपूर्ण है तो उसके सर्वांशसे प्यार करो !

हमने तो किसी एक आकारमे पकड लिया– बालकृष्ण प्यारा लगता है तो उसको ही भोग लगाया तो यह जवान कृष्ण फिर किसके घरमे रोटी खाने जायेगा! तुमतो दुश्मन होके बैठ गये हो उनके ।

भक्त वह है जो भगवानके सर्वांशसे प्यारकरे– सभी जगह वह एक अखंड अंश को पकडे ।

नाम रूपमें ही भेद है– उसको पकडे तो कभीं नाम रूप प्यारा कभी प्यारा प्यारा नही लगता । बच्चा प्यारा जवान प्यारा पर फिर बुढ्ढा हो गया तो तो वोही प्यारा नही लगता ।

पिता प्यारा है तो पिताके सारे रूप प्यारे होने चाहिये । इसलिये भग–वानके एक अखंड तत्त्वको समझो । उस अखंड तत्त्वको समझानेके लिये आचार्य यह पिता–पुत्रकी आख्यायिका समझातेहै । इसमें पिता है महाऋषि उद्दालक–

बडे महान ब्रह्मज्ञानी पिता है और उनका पुत्र है श्वेतकेतु यहभी बडा महत्त्वपूर्ण है यद्यपि उसकी मूर्खता अभी तुम्हारे सामने आनेवाला है– फिरभी यह बडा महत्त्वपूर्ण है । नाम है श्वेतकेतु–केतुका मतलब है ध्वज तुम्हारी ध्वजा कौनसी । तो यह मन ही तुम्हारी ध्वजा है जरा सी विषय की वायु लगे तो ये फर फर उडती है मन स्थिर नही रहे तो चचल हो जाता है ।

देखते नहीं हो भगवान कृष्ण का फोटो सामने रखने लोग भक्त बन जाते है वह अर्जुन श्रीकृष्ण के साथ में रहता है उठता है बैठता है' खाता है कभी झगडा भी करता है क्योंकि साला जो हुआ किन्तु श्रीकृष्ण को भगवान भी मानता रहा इतना कुछ होते हुए भी उसका मन क्या स्थिर हुआ । कहता है

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम् ।
तस्याहं निग्रह मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ।।

(गीता ६–३४)

यह तो तब होगा जब तत्त्वका उपदेश मिलेगा तुम्हारेको मनमें स्थिरता संसारमें घुसने मे नहीं आयेगी ।

इसलिये शास्त्र में गुरुकी इतनी महत्ता कही क्योंकि गुरुके उपदेशसे मन शान्त होता है, प्रसन्न होता है ! मनको शान्त करनेके लिये कोई दवाइ बनी नही मनको बेहोश करनेके लिये तो है बहुतसी दवाई किन्तु शांति के लियेतो मनको तत्त्वोपदेश ही चाहिये !

इसके लिये यह ज्ञानपूर्ण छांदोग्य उपनिषद का छठवा अध्याय है । जिसमे महाऋषि उद्दालक अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतु– को तत्त्वोपदेश देते है ।

श्वेत– सुन्दर– केतु माने मन । सुंदरमनवाला । बच्चेका मन बडा निश्चल होता है रागरहित होता है, वासना रहित होता है इसलिये बच्चेका कहीं भी एकाउन्ट खुला सुना है ? बुढ्ढोकी अपेक्षा जवानोंके कम है क्योंकि ज्यू ज्यू बढते जाते है वासना वढती जाती है, अभ्यास और वैराग्यसे इसको जितना है ।

इसलिये बुद्धिमान मुमुक्षु तत्त्वचिन्तन करें तब आत्मशान्ति होगी ।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. ३

ॐ श्वेतकेतुर्हारुणेय आस तं ह पितोवाच श्वेतकेतो वस ब्रह्मचर्यम् । न वै सोम्यास्मत्कुलीनोऽननूच्य ब्रह्मबन्धुरिव भवतीति ।।१।।

स ह द्वादशवर्ष उपेत्य चतुर्विंशतिवर्ष: सर्वान् वेदानधीत्य महामना अनूचानमानी स्तब्ध एयाय । तं ह पितोवाच श्वेतकेतो यन्नु साम्येदं महामना अनूचानमानी स्तब्धोऽस्युत तमादेशमप्राक्ष्य: ।।२।।

येनाश्रुतं श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं विज्ञातमिति । कथं नु भगव: स आदेशो भवतीति ।।३।।

यथां सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम् ।।४।।

(छान्दो ६–१–१ । ४)

तो विचार चला श्वेतकेतु महान ब्रह्मवेत्ता ऋषि उद्दालकके पुत्र है । उद्दालक जिस समय बच्चे थे उस समय गुरुकुलमें विद्या लेनेके लिये गये– उनका नाम आरुणि क्योंकि वह अरुणऋषिके पुत्र थे ।

एक दिन गुरुने कह दिया की जाओ धानके खेतमें पानी देखके आओ– अब यह बच्चा रहा– छोटा था– चला गया खेतमें पानी देनेको अब छोटेसे हाथ से

थोडीसी मीट्टी उठाके ले आये और मट्टीसे बंध करे–फिर कुछ और मीट्टी उठाने आये तो पहेलेकी सारी मट्टी पानीके जोरसे बह गया उसने वडा प्रयत्न किया पर पानी बहता था बंध नही हुआ तो वह अपनेही वहांपर लेट गया– तो पानी खेतमें भर गया अब ऐसेही दिनभर आरुणि वहाँ पडा रहा–सायंकाल हुआ–अधेरा भी हो गया नही आया तो गुरुने याद किया अरे आरुणि कहाँ गया ? तो दूसरे शिष्य ने कहा आपने उसको धानके खेतमें पानी देने भेजा था– । उन्होने सोचा अभी तक फिर क्यों नही आया ? तो कहे चलो उसको खोज ले आवे । अब तो धौम्यमुनि आये सब शिष्योके साथ– और अंधेरेमें आरुणि आरुणि– ऐसे पुकारने लगे– वच्चेने जव गुरुके शब्द सुना तो एवदम उटके आया सामने और हाथ जोडके खडा हो गया– गुरुने उसके उपर हाथ फेरा तो सारा शरीर पानीसे लतपत था तो वही करुणा महाऋषि के हृदयमें जाग्रत हो गई और आशीर्वाद साथमें देते हुए कहेने लगे

तुम खेतको भर करके आया । लेटा हुआ था अब तूं उटके चला और इसलिये तुम उद्दालक नामसे कहे जाओगे । उद्दालक महाऋषिके अंदर वेदविद्या भी प्रस्फुटित हो गई । अपने समयमें महान ब्रह्मवेत्ता हुआ किन्तु उनका वेटा श्वेतकेतु– जो अरुणऋषिका पौत्र है- उसने खूब मस्तीसे खाया- पिया जैसे बच्चेकी आदत होती है । मगर मस्ती करते रहे बच्चोको पढनेको मन नही लगता । मा प्यारमे कुछ वोलती नही पाती- पढनेके लिये भोलीभाली बोलेगी- मतलब अंदरसे प्यार उपरसे क्रोध ।

अब वच्चा डरता नही उसके- बच्चा मस्तीसे घूमताहै महाऋषि उद्दालक ने कुछ भी नही कहा इसतरह जव श्वेतकेतु १२ सालका हो गया तो पिताने देखा और देखकर कहा- ब्रह्मचर्य व्रत धारणकरो– वेदोका अध्यायन करो और गुरुकुलमें निवासकरो ।

श्वेतकेतुर्हारूणेय आस तह पितोवाच श्वेतकेतो वस ब्रह्मचर्यम् ।
न वै साम्यास्मत्कुलोनोऽननूय ब्रह्मबन्धुरिव भवतीति ।।१।।

वेटा–तुम इस ब्रह्मचर्य को धारण करो । वेटा हमारे परिवारमें आजतक अभी कोई नही जन्मा जो कहता हो हमारे परदादा वडे विद्वान थे । जैसे वहुतसे लोग आजकल परिचय देते है– पूछो तो कहेंगे अरे आप नही जानते महाराज अमूकबडे मीनीस्टर है उनके शालके शालीके शाला हू– कितना लम्बा परिचय दिया भला ? मतलब मेरेको छोटा आदमी मत समझो ।

इस मनुष्य प्राणीका आदत है यह अपने वडपनकी इच्छा करता है । महा-ऋषि कहते है वडपनकी इच्छा तो करो किन्तु अपनी कमाइसे करो । ऐसा नही की हमारे वंशमे अमुक वडा विद्वान हुआ– उनके हम वधू है । दूसरे की महत्तासे अपनी महत्ता का प्रकाश मत करो । दूसरा कोई वडा है उसका वडपनसे अपना परिचय दो यह ठीक नही ।

वेदान् अनधीत्य– वेदोको न जानकरके ऐसाकोई नही हुआ– तूं एक ऐसा देखनेमें आरहा है– मालुम पडता है तूं ऐसा ही रहे जायेगा परिचय देता ही रहे जायेगा तुम्हारो अंदर कुछ हुंगा नही– इस तरह जव पिताने फटकारा तो पुत्र महान ऋषिका पुत्र है उसने सोचा जरूर पढना चाहिये– इसलिये श्वेतकेतु गुरुकुल-में चला गया उसने कहने से– गुरुकुलमें जाकरके वेदोका अध्ययन शुरु किया– १२ वर्षमे चारो वेदोंका अध्ययन कर लिया क्योंकि वुद्धि वडी अच्छी थी अच्छी वुद्धि होनेसे ये १२ वर्षमें महान विद्वान तो हुआ किन्तु मनमें अहंकार उत्पन्न हो गया अपनेको महामना समझने लगा । मन वडा गंभीर हो वह महामना । जिसका मन सहनशील होवे वह महामना । छोटेको छोटा दुःख तो वडेको वडा दुःख है तो कोई ऐसा मत समझे वडी वडी विल्डींगोमें रहेनेवाले वडी सुखी है– वह भी वडी दुःखी है और फुटपाथ मे रहेनेवाले वडे सुखी है । कोई दुःख न रहनेपर सुखी तों पशु पक्षी भी सुखी है तो तुम्हारे मनुष्य बननेकी क्या किमत ? मनुष्यको दुःख भी है दुःखका कारण भी है किन्तु होने पर भी फिर दुःखी नही अपनेको मस्त रखे ।

मनुष्य का वच्चा जहां भी जायेगा कुछ कमी उसको रहेगी उसका नाम दुःख है । इसलिये ससारमें यह भी निश्चित समझोकी हम सारी इच्छाओं को पूर्ण नही कर सकते । सब इच्छा पूर्ण करनें चलोगे फिर भी कोई इच्छा अपूर्ण रह जायेगी और अपनी इच्छा ही दुःख है– यह दूसरे जन्मका कारण भी है । केवल अपनी इच्छा पूर्ण करनेकीइच्छामत करो परिवारमें दूसरेकी इच्छाकाभी आदर करो । मानलो जिस परिवारमें तिन चार वेटेहो कोई बेटा कहे सबसे पहेले मेरी ही इच्छा पूर्ण हो– जबतक वह वच्चा है ठीक है किन्तु जब वडा होताहै– तो मां भी उससे घवडाने लगती है की यह वडा स्वार्थी है । इसलिये मनुष्य प्राणीको विवेककी जरुरत है । सत्यकी ओर अपने मनको खींचो असत्यकी ओर नही । केवल भोजनकी ओर अपने मनको खींचना ठीक नही केवल भोजनकी ओर पशु-पक्षी का मन भी जा रहा है और हमारा भी– तो क्या फर्क हुआ ? केवल इतनाही कि उसका मन घास भूसेकी ओर और हमारा मन रूप,रस गन्ध,शब्द-और स्पर्श ये सव प्रिय भोजन है हमारी लिये– केवल उस भोगके पीछे भागेंगे तो सब

इच्छा तो किसकी भी पूर्ण होने वाली नही – तो शांति मनमें आयेगी ही नही। दृष्टांतसे समझो इस बातको एक रो रहा वेचारा–उसने खूब कमाया, वशपरम्परागत– सब खाये तो भी न खतम हो। एकदिन अपनी दुकानमें जाके गद्दी पर बैठ गया तो चिन्ता होने लगी शीरमे हाथ रखके बैठाथा तो मित्र आ गया उसने पूछा मित्र क्या चिन्ता कर रहे हो? सेठने कहा मैं सोचरहा हुं की हमारे वंशपरपरामें जो पांचवी पुस्तका (पिढीका) बच्चा होगा-अगर वह २० लाख रुपिया सालमें खर्चा करे और अगर उसकी उमर सौ साल वर्षकी होवे तो नव्वे वर्ष तो ठीक चलेगा–धन किन्तु १० वर्षके लिये कम पडेगा। इसको कहते है दुश्चिन्ता।

वंशके अंदर तुम्हारा धन क्या है ? सुकर्म – सद्धर्म और सुंदर ज्ञान। यह देदो बच्चोको ! सुंदर ज्ञान का मतलब आत्मा परमात्माका वोध होवे वह सुंदर ज्ञान शरीर – इन्द्रिया भोगका ज्ञान हो इसको ज्ञान नहीं कहने वह ज्ञान तो पशु में भी है ? मनुष्यमें सुंदर ज्ञान कौनसा ? इसे आत्माके संबधमें ज्ञान हो इसमेही संसारके सब संबंध है कोई बेटा समझेगा कोई बेटी समझेगा कोई मां कोई पिता अगर ये आत्मा नही तो कोई कुछ नही समझेगा तो यह बताओ शरीर बडा हुआकी आत्मा ? इसलिये उस आत्मामे मनकी स्थिति हो यह सुंदर ज्ञान है आत्माको समझा हीं नही और वाते करते ही जीवनको पार किया तो यह मरना जीना कुछ महत्त्वपूर्ण नही आत्माका विवेक जब जागेगा तो वो ये महमना धीर मना होगा ! सुख दुःख तो प्रारब्धके अधीन है महलोके अंदर भी लोग दुःखी है सुखका साधन केवल बिल्डींग धन पुत्रादि नही। ज्ञानके बिना ये सब कुछ भी नही।

इसलिये यहांपर श्वेतकेतु के लिये श्रुति कहतीहै महामना महाधीर दुःखसे डरता नही और सुखसे प्यार नही करे ये महामना बाकी तो सब पशु ही है। श्वेंतकेतु अपनेको महामना समझता है। दूसरा विशेषण श्रुति देती है ज्ञानवान अनूचान आत्मवान् मतलब वेदका अर्थ जाननेवाला।

श्वेतकेतु समझता है की मै यह अर्थको जाननेमें और उसकी व्याख्या करने मे भी समर्थ हुं। कई लोग वेदको जानते तो है किन्तु वोलने लगेतो स्पष्ट कुछ नही किया जा सकता और कुछ लोग एंसे हैं वोलनेमें समथहै किन्तु इतना ज्ञान अंदर नही। अव श्वेतकेतु सोचताहै मेरे में तो दोनो सामर्थ्य है इसलिये अहंकार आ गया ? बच्चेको अगर साथ बोलेगे तो फन्ट हो जायगा ऐसा प्रश्न रखो उसके सामनेकी उसका दिमाग पजलमें पड जाये तो वह अधीन रहेगा।

महाऋषि को जब श्वेतकेतुने प्रणाम नही किया तो महाऋषि उसको प्रश्न करते है और कुछ कहा नही समझ गये पढना तो है साथमे अहंकार का भूत भी सवार हो गया इसलिये महाऋषि पूछते है ?

तं ह पितोवाच श्वेतकेतो यन्नु सोम्येदं महामना
अनूचानमानी स्तब्धोऽस्युत तमादेशमप्राक्ष्यः ॥२॥

ऐ सोम्य तुमने उस महान आदेश के बारेमें अपने गुरुसे पूछाहै ! अ देश माने जिसके प्रकाशसे यह सब प्रकाशित हो रहा है । वो कौन है ?

सूर्यके द्वारा इस जगतका प्रकाश हो रहा है किन्तु यह जो नाम रूपादि प्रपंच है वह उस सूर्यके प्रकाशसे प्रकाशित नही । क्योंकि वह प्रकाश जब तक अंदर से नही आयेगा तो तुमको क्या दिखेगा ? मानलो सूर्यके प्रकाशमें हमारे हाथमें यह फूल है किन्तु अगर हमारे अंदर उसका ज्ञान ही नही तो हमारेको क्या वह फूल मिलेगा नही मिलेगा– क्योंकि ज्ञान ही वस्तुको देता है । ऐसा जो ज्ञान है वह प्रकाश है ।

वह जिसके द्वारा आ रहा है उसको कहते है आदेश । सूर्य के द्वारा संपूर्ण जगत प्रकाशित हो रहा है संपूर्ण जगत हराभरा प्रिय लगताहै इसी तरह जो सूर्यकोभी प्रकाशित कर रहा है वह है आत्मज्ञानके द्वारा ।

इस बातको कल आगे और स्पष्ट करेंग सीधे होके बडे जोरसे हरिः ॐ की ध्वनि करके दो मिनेट ध्यान करो.........

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. ४

ॐ येनाश्रुतं श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं विज्ञातमिति कथं नु भगवः स आदेशो भवतीति ॥३॥

यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम् ॥४॥

यथा सोम्यैकेन लोहमणिना सर्वं लोहमयं विज्ञातं स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं लोहमित्येव सत्यम् ॥५॥

यथा सोम्यैकेन नखनिकृन्तनेन सर्वं कार्ष्णायसं विज्ञातं स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं कार्ष्णायसमित्येव सत्यम् सोम्य स आदेशो भवतीति ॥६॥

(छान्दो० ६–१–३ । ६)

तो बात आयी महार्षि उद्दालक इन मनुष्य जीवनमें जिस सत्यको समझाने और जिस सत्यके बिना कुछ नहीं उस सत्यकी महिमाका व्याख्यान करते है। कहेते है– हे बेटा– जब तूं इस सत्यको समझ जायेगा– अश्रुतम् श्रुतम् भवतीति जो तुमने जीवन में सुना नही है वह सुना हुआ हो जायेगा अमतम् मतम् भवतीति– जिसके बारेमें तूंने कभी कल्पना नहीं कि वह तेरी कल्पनामें आ जायेगा और अविज्ञातम् विज्ञातम् भवतीति– जिसको तुमने जीवनमें समझा नही है वह तेरी समझमें आ जायेगा। तो बुद्धिमान यह मनुष्य चाहता क्या है? तो बुद्धिमान यह मनुष्य चाहता है मैं सबकुछ जीवनमें समझ जाऊ अज्ञान इसको प्यारा नही–

अज्ञानही दुःख है जैसे मानलो किसी अपनी लडकीकी शादी करनी है और माता-पिताने सोचा बेटी को हीरेका गहना देना है– और मानलो नी वे दुकानमे चले गये और इतनातो उनको ज्ञान है ना.कीं हीरा बडी किमती होती है और अगर उस हीरेको देखनेमें जरासीभी गलती कियातो हजारो रुपिये उपर नीचे हो जायेगे यह भी ख्याल रखना पडता है। हीरेकी दुकान जो लगाके वैठा है वह तुमसे लाभ लेनेके लिये ही वैठा है। अब बतलाओ लाभ जो होगा यह किसका होगा ? अज्ञानसे ही लाभ ले रहे है सबलोग।

सब ही ज्ञानी हो जाये तो वतालाओ यह स्कूल, कलिज, बडी वडी युनीभर्सिटी– प्रोफेसर सब क्या करेंगे। सब दालरोटी वहाँसे खायेगे। तो अज्ञान से ही सबको दाल रोटी मील रही है। इस जगतमें जो भी कुछ एक–दूसरेका लाभ ले रहे है वह अज्ञानसे है जिस दिन आप उस सच्चे ज्ञानमें पहुँच जायेगे आपसे कोई लाभ नही ले सकेगा। उस ज्ञानमें जब हम पहुंच जायेंगे जिसमें सबकुछ दिख गया फिर कोई क्या लाभ लेगा? तुम्हारे अज्ञान का ही लाभ है।

जरा भी अगने गलती किया तो वह लाभ लेता है इसलिये अपने कोई मित्रको साथमें लेते है जो जवाहरातको जानता है। वह वडी तीक्ष्ण आंखमे उसको देखता है। किमतो हीरेकी चमक कोही देखते है। हम असली जवाहरात का जो जाननेवाला है हम उसकी आंखसे देखते है और यदीं हम उसको नही देख सकते तो वडे दुःखी, शंका आ जायेगी कहीं उसने ठगतो नही लिया तो माने अज्ञान ही दुःख देगा। ऐसे ही इस शरीरके तो क्या समझे उस हीरेका सुन्दरताको और इसके अदर यह हीरा वंध है– हम हम– हम ये जो हम हम है कोई किमत है इसकी ? ये हीरा कहीं बजारमें मिलेगा कही ? ये कहीं नही मिलेगा दुनियामें ऐसी वो तुम्हारी अदर आत्मा हीरेका भी हीरा उसके नीचे यह सारा जगत है। यह जो कुछ भी इस जगतमें किमत हो रही है इस आत्माके संबंधसे हो रही है। शरीरकी जो किमत हो रही है इस आत्मासे ही हो रही है। भाइ वंधु बेटा बेटी पति पत्नी संबंधसे सब इसको प्यार कर रहा है– कबतक? जब तक अदर आत्मा अंदर विराजमान है। जहां जरा भी उसका त्याग किया कहेना पडेगा यह मूरदा है इसको छोड दो।

तो ये सत्– चित् आनंद स्वरूप वह जो आत्मा है उस आत्माको जान जायेगा– बेटा तो सबकुछ जान जायेगा तो इसलिये परा और अपरा विद्याकी वहाँ व्याख्या कर रहे है– यह जो तुम्हारी आत्मा है ये तो पर और अपर है यह प्रकृति और उसका यह प्रपच।

यह शरीर अपर है और आत्मा पर है तो अपने जीवनमें सीधा समझो क्या साक्षात् शरीर प्यारा है की आत्माके संबंधसे प्यारा है? साक्षात् शरीर प्यारा है ऐसा अगर कहोगे तो जिसदिन आत्मा छोड देगा उसदिन प्यारा होगा ये ? कोई प्यार करेगा ? तो कहना पडेगा कि साक्षात् ये प्यारा नही । जैसे Sugar (चिनी) के बीना कोइ चीज मीठी नही– Sugar पड जायेगी तो सबचीज मीठी बन जायेगी किन्तु Sugar को मीठा करनेके लिये कौनसी Sugar ले आओगे ? इस प्रकार यह तुम्हारी अंतरआत्मा है यह चीनी कीभीचीनी है । यह स्वयं मीठा माने स्वयं आनंद रूप है । यह स्वय सत् है। यह निरपेक्ष सत्य है ।

यह शरीर निरपेक्ष सत्य नही । देखते देखते यह शरीर युवान हो रहा है देखते देखते बूढापन आ रहा है । इतना परिवर्तन तो होरहा है– होते हुए भी कियीको अच्छा दिखता नही किसकी कृपा है ? जबतक उसकी छायामें है यह शरीर अमृत भासेगा इसलिये यह शरीर जो है अपर प्रकृति है । इस शरीर संबंधकी– शरीरकी रक्षाकी जो विद्या है उसको अपर विद्या कहते है । अब इस शरीरके अंदर ही परिवार आया जाति आयी फिर समाज और राष्ट्र भी आया अब यह हनुमान की पूंछकी तरह लम्बी पूछ होगई ।

कहते है हनुमानने लंका जलायी तो कैसी ? कहेते है बंदरको अपनी पूंछ बडी प्यारी– लोगोने कहा उसकी पूछ को जलाओ । पूछको जलानेकेलिये कही रुई कहीं कपडा सब लपेटने लगे– तो हनुमानने पूंछ और बढादी अब लपेटके अच्छी तरह जब आग लगाई तो– इसने पूंछ घुमाई बैठे बैठे ही और सारी लंका जलायी । हनुमान अपनेको– इस शरीरको तो पूंछ समझो (हनु- जिसका लंबा होता है– उसको हनुमान कहेते है– तो आर्य जातिका जो हनु होता है वह लंबा होता है अगर विचार करोतो) शरीर यह जब तुम्हारी पूंछ हो गई तो सारे धर्म तुम्हारे सर पे चढ गये–इसका निर्वाह भी करना है । उसके लिये अपरा विद्या । इसलिये इस बुद्धिमान मनुष्य को अपरा विद्या का बोध भी होना चाहिये । किन्तु परा विद्याके बिना अपरा विद्या को पकडोगे भी तो केवल ये जो हंडी भरनेका सामान निकलता है । ये हंडी किन्तु कभी भरेगी नही । किन्तु इस हंडीको भी कबतक भरना है ? जबतक वह अंदर बैठा है । मुरदा वह शरीर अगर कोई मागेगा तो दोगे ? कहेंगे अब मत मागो अब तुम्हारा अधिकार नही ।

ऐसो वह जो आत्मा तुम्हारी वह पर तत्त्व है अति उत्तम तत्त्व है अति श्रेष्ठ तत्त्व है और अति पवित्र तत्त्व है । जैसे देखो मुरदे को छुओ तो नहाना

पडेगा । हम एक दूसरेको छुते है– एक दूसरेकी बगलमें बैंटते है तो कोई नहाना है? तो यह बतलाओ की यह शरीर पवित्र है की जिसको हम कभी नही देखते और जिसके बिना कभी कुछ नही रहेगा वह पवित्र है । इसलिये इस आत्माको पर कहेते है सबसे उत्कृष्ट है पवित्र है– निरपेक्ष है किसोकी अपेक्षा नही शरीरको पवित्र होनेको लिये आत्माकी अपेक्षा, शरीरको अमृत देखनेको लिये आत्माकी अपेक्षा । यह आतमा होगा तो यह शरीर अमृत दिखेगा– प्यारा दिखेगा नही तो मूरदा प्यारा है किसको ?

महाऋषि ऐसी अमृत आत्माको पराविद्याके द्वारा प्रकट करना चाहते है ।

यत्तदद्रेश्यमग्राह्यमगोत्रमवर्णमचक्षु : श्रोत्रं
तदपाणिपादं नित्यं विभु सर्वगतं सुसूक्ष्मं
तदव्ययं यद्भूतयोनिं परिपश्यन्ति धीराः।।

हे सोम्य यह जो तेरी अंतर आत्मा है– कैसी है तो कहेते है अद्रेश्यम्– तो यहां अद्रेश्यम् कहनेका मतलब है– यह दृश्य नही । जो दृश्य होगा विनाशी होगा अनात्मा होगा । ये जो आत्मा है यह किसीका दृश्य नही ये स्वयं साक्षी है उसका कोइ द्रष्टा नही– द्रष्टा होगा वह कभी दृश्य नही बनेगा– जो दृश्य होगा वह कभी द्रष्टा नही बनेगा ।

अपने लोग इस शरीरका कितना मोह करते है– प्यार करते है– इसको पूछो क्यों भीडभाड तेरे लिये कितने हम काले पीले कर्म करते है– पूछो तुम हमको जानते हो ? तो यह शरीर भला क्या उत्तर देगा तो कहेगा हे भगवन हमतो तुम्हारे पालतु गधेडे है- जैसे किसी पालतु गधेडे को जब चाहो उसकी पीछे चले जाओ जिधर चाहो चले जाओ- वह कहता है हे भगवन जो उन खानादाना देते हो हम खाते है । तुम कौन हो वह अपने आप ही जाने हमारी जाननेकी डयुटी नही । कुछ क्रिया हम कर सकते है वह भी तुम्हारी कृपासे स्वयं हम कुछ करनेवाले नही ।

सौ वर्ष भी तुम इस शरीरमें बैंठो ये शरीर तुमको पहचाननेवाला नही- । तोअपनेको अपने ही पहचानो इसको कहते है परा विद्या । इसलिये मंत्र में कहते है ये ज्ञान इन्द्रिया द्वारा तुम इसको नही पकड सकते हो यह जो इन्द्रियां है ये सब आत्माकी ओर नही जाती– ये जायेगी तो विषय की ओर ही जायगी आंख किधर जायेगी ? तो जिधर रूप होगा । रसनेन्द्रिय जिधर रस होगा उधर जायेगी ऐसी ही सब इन्द्रिय अपने अपने विषय की औए जायेगी इसमेंसे तुम्हारी अंतर

आत्मा क्या है ? ये रूप है– कि रस है कि स्पर्श है, कि शब्द है, कि गंध है, क्या है ? यह आत्मा कोई विकार नही– अगर रूप, रस, गंध, शब्द या स्पर्श होगा तो विनाशी हो जायेगा– तब तो कुछ भी नही बचेगा ।

आत्मासे अतिरिक्त जो भी है वह तो मृत्यु ग्रस्त है प्रतिक्षण मर रहा है । आत्मा अगर मरनेवाला होगातो आत्माकी मृत्युका साक्षी कौन होगा ? आत्मा होगा की आत्मसे जूदा होगा ? आत्मासे जूदा कोई है ही नही इसीलिये उसकी मृत्युका कोई साक्षी नही इसीलिये स्वीकार करना पडेगा की यह जो चेतन आत्मा है ये अमृत है ।

अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं
तथाऽरसं नित्यमगन्धवच्च यत् ।
अनाद्यनन्तं महत : परं ध्रुवं
निचाय्य तन्मृत्युमुखात् प्रमुच्यते ।।

(कठो० १–३–१५)

कठोपनिषद में नचिकेता को भगवान यमराज स्वयं उपदेश कर रहे है । हे बेटा ज्ञान तेरेको ऐसा स्थिर करना पडेगा । जब तक ऐसा ज्ञान आयेगा नही तेरेको मृत्युके मुखसे कोई नही बचा सकता । ठीक है कोइ बेडा सिद्ध भी होवे दुनियामें किन्तु कोई मृत्युसे बचानेवाला नही– । मृत्युके बचानेवाला कोई है तो वह अमृत विद्या ही है । किन्तु इस ब्रह्म विद्याका तेरे को तत्त्व विचार तो करना पडेगा–

देखो मन्त्र तुम्हारे आत्मा स्वरूपका व्याख्यान करता है– अशब्दम् अस्पर्शम् अरूपम्– अव्ययम्, अनादि, अनंतम्– तुम्हारा आत्मा स्वरूप कैसा है तो कहते है तुम तो अनादि हो– माने तुम्हारा कोई कारण नही तुम किसीसे उत्पन्न नही हो– तुम्हारे मे यह सब दिख रहा है । जैसे मानले की यह तुम्हारा शरीर है माता पिताकी कृपासे इसकी उत्पत्ति हुआ किन्तु सोचो तुम रहे तब ये शरीरका जन्म हुआ की तुम नही रहे तब शरीरका जन्म हुआ ? क्या निश्चय करेगे ? माता–पिताकी कृपा तो हुई किन्तु हमारे रहेनेपर हुई के हमारे न रहेने पर हुई– । अगर हम नही होते तो मा–बाप क्या देते ?

मतलब तुम पहेले ही थे– मा बापके पास गए किस आकार को पानेके लिये । पहले तुम जिस आकारमें थे वह सायद नही था किसीके लिये इसलिये माबापकी कृपासे वह आकार लिये– । और इसलिये आकारके प्यारा बना लिया

इसलियें– वह मा– और बाप बने ? हमने उनको Title दे दिया किन्तु सोचो बडा कौन निकला बाप के बेटा ? कौन पहेले हुआ बाप के बेटा ? अब बडा तो वोही निकला जिसने मा बनाया– बाप बनाया– जिसने बनाया उसीको छोटा समझ लिया ।

ऐसी वहु जो तुम्हारी अंतर आत्मा– अनादि है । अन्तम्– इसका अंत नही अंतकरने जिये संसारमें परमातमाने तीन वस्तुकी सृष्टि किया देश-काल और वस्तु ।

देश– वस्तुका अंत कर देता है जो हम यहाँ बैठे है तोघरमें नही– घरमें है तो वह यहाँ नही ऐसे यह देश वस्तुका अंत कर देता है । देशने बतलाया तूं अल्प है परिच्छिन्न है ।

विविध परिच्छेद यह काल सबको चबाता है ऐसे अपने रोटी चबाने है ।

एक ही मा के दो बेटे है– एक को काल ने पहले पकडा तो उसको बडा कहते है और दूसरेको बादमें पकडातो उसको छोटा कहेते है । काल ने चबाना शुरु किया तो जैसे ग्रास मुएमे फुलजाहा है– फैल जाता है वैसे ही हम इस शरीर-में फैलते जाते है– तो कहने है की हम बडे हो गये– ये नही की काल चबा रहा है ।

ऐसे ती वस्तु इस रूपमें है तो उस रूपमें नही जैसे अपना यह शरीर– अब यह मनुष्य की सकलमें है तो माइकके आकारमें नही– तो माने यहाँ होते हुए भी हम किसी रूपमें हम है किसी में हम नही ।

इस तरह त्रिविध परिच्छेद के पकडमें जो पदार्थ होगा वह अनात्मा होगा वह अनन्त नही होगा ।

यह आत्मा देश, काल–वस्तु स्वरूपका भी ज्ञाता है इसलिये देश, काल, वस्तु यह तीनोंसे परे यह तीनोही इसकी पकडमें– यह सब विनाशी है । आत्मा जो है वह अविनाशी है ।

भगवान यमराज नचिकेता को अमृत आत्माका बोध देते हुये कहते है– अनादि–अनन्त महतः परंध्रुवं महत– जो प्रकृति है– हमारी सारे ब्रह्मांडको जो खडा करनेवाली है– उससेभी यह आतमा परे है । किन्तु कैसा है– तो कहेने ध्रुवम्– ये सत्य है ।

निचाय्य तन्मृत्युमुखात् ।।

ऐसा निश्चय करोगे तो मृत्युके मुखसे बाहर निकल जाओगे ।

उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम्
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः ।।

(गीता० १५-१०)

श्रीकृष्ण गीतामें अर्जुन को कहते है ।

हे अर्जुन । जिस आत्माके बारे में हम तेरेको समझा रहे है यह कोई ऐसा अलौकिक तत्त्व नही है माने यह किसी लोकमें नही है ऐसी बात नही है । हम उस सत्यको स्पष्ट कर रहे है तुम्हारे सामने । यह शरीरसे पूछो की तूम क्या अपने आप फिर रहे हो ? चलते हो तो कहेना पडेगा की चेतन के करंटसे ही। उसके विना यह शरीर कुछ भी नही ।

अगर उसने विना यह शरीर हिलने डुलने लग जाये तो अमंगलम् । चेतन-के न रहेने पर यह शरीर उठने बैठने लग जायेतो कहेंगे अपशुकन हो गया ।

अर्थीमे यहाँ चितामें नीचे लकडी बीचमें मूरदा शरीर और उपर फिर लकडी रखते है क्योंकि कही नीचे अग्निका ताप लगे और इसकी नाडीयाँ सुनाने लगे कही उसको उठके बिठावे तो ? घबडाके डर जायेगा । यह शरीरतो प्यारा है चेतन. आत्माके करट से किन्तु आत्माको तो पूछ जाननेवाले नही । शरीरको गूढ कहा । उसी तरह हम लोगोकी अकल है- जैसे किसी बच्चेके सामने आम फेंक दिया तो उसको लेकर मूह फिराया है अगर कहीसे छीलका उतर गया तो भले ही स्वाद ले ले नही तो छीलके को ही चाटता रहे जायेगा ।

हम लोगोकी हालत भी ऐसी ही है इस प्रकृतिके बगीचे का यह शरीर तो फल है किन्तु इसकाही हम स्वाद लेते रहेते है असली जो सत्य है उधर तो नजर ही नही जाती ।

कभी भाग्यशाली मुमुक्षु जो है वह अंदर प्रवेश करनेकी इच्छा करता है- अगर अंदर प्रवेश कर जायेगा तो वह बच्चा जो अंदरका रस स्वाद लिया है उसको छीलका दो नही खायेगा ? फेंक देगा इसको कहते है ज्ञान- इसको कहते है विराग ।

सत्यका जब तुम अनुभव करोगे तो स्वभावसे तुम्हारे अन्दर त्याग आयेगा स्वभावसे ही विराग आयेगा। जब तक सत्य को समझोगे नही तब तक छोड-नेकी हिम्मत आयेगी नही। इसलिये बुद्धिमान सत्यका अनुभव करे! उस पर विद्याके द्वारा जिसका ज्ञान होता है वह अविनाशी ब्रह्म आत्मा- कैसा है श्रुति भगवती बतलाती है

यत्तदद्रेश्यमग्राह्यमगोत्रमवर्णमचक्षुःश्रोत्रं तदपाणिपादपादम् ।
नित्यंविभुं सर्वगतं सुसूक्ष्मं तदव्ययं यद्भुतयोनि परिपश्यन्ति धीराः ॥

(मुण्ड० १-१-६)

इस मंत्र में परब्रह्म परमेश्वरके निराकार स्वरूपका वर्णन किया गया है- सारांश यह है कि वे परब्रह्म परमेश्वर ज्ञानेन्द्रियोंद्वारा जाननेमें नही आते, न कर्मेन्द्रियोंद्वारा पकडनेमें आते है।

अगोत्रम् गोत्रका अर्थ है गावा त्रायंते यद तद गोत्रम्- आया।
अपने यहाँ लोग संकल्पमे गोत्रका स्मरण करते है।

वहाँ गोत्रका मतलब जिस ऋषिके कुलमें गौ का त्राण किया हो- शींग पूछ वाली गौ नही- यहाँ ये तुम्हारी यह जो इन्द्रियाँ है ये गौ। यह जो तुम्हारी बुद्धि है- यह भी गौ ही समझो।

गौ का सीधा अर्थ है- गच्छति इति गौ।

जो आगे पीछे जाये उसको गौ कहेंने है। तुम को विच विचमें ये दुग्ध भी देवे- जब यह बुद्धिरूपी गौ अपने विषय में विचरण करती है- तो सुख रूपी दुग्ध भी देती है और कभी लात भी मार देती है मतलब दुःख भी देती है।

अब इन इन्द्रियोंका जन्म-मरण है उसका आरोप तुम्हारे उपर है- जिस ऋषिने उस गौका- मतलब इन्द्रियका त्राण किया है फिर जन्म मरण का मौका ही नही दिया बुद्धिके जन्मको खतम कर दिया मतलब सूक्ष्म शरीरसे अपनेको जुदा कर दिया। उसके नाम से जो वंश चला उसको हम गौत्रके नाम से स्मरण करते है कि ऐसे महान ब्रह्मवेत्ता के परिवारमें हमारा जन्म हुआ तो हमारे अन्दर भी ऐसा सुदंर ज्ञान प्रकट होना चाहिये।

अगोत्रम्- गोत्रम् का अर्थ है मूल- और आत्मा तो अगोत्रम् अमूलम्-। मूलका मूल कौन सा है ? मूलका मूल कोई। महान जो ब्रह्म है वह ही जगतका मूल है किन्तु इसका कोई मूल नही।

जब माया देवी प्रगट हो गई तो यह जगतका मूल वना। आगे मंत्र कहता है।

अवर्णम्- इसके अंदर को वर्ण नही। कोई विशेषण विशेष्य नही- अचक्षुः श्रोत्रम्- वहाँ कोई इन्द्रिया भी नही और आगे कहा अ पादमपाणि- हाथ पैर आदि कर्मेन्द्रियाभी नही- मतलब आकार प्रकार का निषेध कर दिया। श्रुति भगवती कहती है जिस असली स्वरूपको तुमको पाना है उसमें कोई आकार प्रकार नही तुम उस सत् चित् आनन्द रूपका ध्यान करने लगोगे तो किसका वेटा ध्यान करोगे। वहाँ बेटा कोई आकार, रूप है ही नही। सर्वकार उसकी छायामें जी तो रहे है किन्तु वे किसी आकारकी पकडमें नही ऐसी वे तुम्हारी आत्मा सत् चित् आनन्द रूप- उसका निश्चय करोगे तव मृत्युके मुखसे बाहर निकल आओगे।

आगे मंत्र कहता है नित्यं विभुं सर्वगतं सुसूक्ष्मम् तदव्ययं यद्भूतयोनिं परिपश्यन्ति धीराः॥

श्रुति विशेषण देती है- वह कैसा है-?

नित्यम्- नित्य है और विभुं - शब्दका उपयोग किया नित्य होते हुए भी यह विविधम् भवती नानारूपेण विभुं भी है।

है वह एक- दिखता है अनेक। आत्मा। जैसे मानलो एक व्यक्ति कोई चला जा रहा है उससे देखाकी आगे कोई नवजवान मनुष्य जा रहा है थोडी दूर गया तो देखता है कि वह मनुष्य तो गायव हो गया और उसकी जगह ये तो एक घोडा चल रहा है- वडा आश्चर्य मे पड गया- कि अभी तो मनुष्य चल रहा था ये घोडा हो गया। और थोडी देरमें देखते गायव हो गया इसकी जगह ये ऊट चलने लगा- फिर ऐसे ही उसकी जगह ये शेर चलनेलगा- फिर थोडी देरमें मनुष्य दिखने लगा तो वह दौडके उसके पास पहुँचा गया और कहने लगा कि भाइ आप कोई बहुरुपिया हो ? पीछे हटके उसने देखा। उसने कहा मेरेसे क्या पूछता है तुं ही बहुरूपिया है। तुम अपनी सकल क्यानही देखता ?

जैसेके तैसा तेरा रूप कहाँ– जब तुमने मम्मी कीं गोदसे जन्म लिया तो अंगूठा चूसते रहे की नही ? और थोडे दिनोमें तूं रोने लगा गया– फिर थोडे दिनमें जवान वन गया तो मा–वाप वन गया और थोडे दिनमें और आगे वढा तो दादा–दादी वन गया बूढावूढी वन गया ।

तुम्हारी कौनसा सकल है इसमे

तुमको बच्चा जाने, जवान जाने या वूढा ? तो यह वहुरुपियापन तो माया-का प्रपंच है । नाना रूपोंकी कल्पना करके भी यें नाना नही वना ।

यह ब्रह्मविद्या– पराविद्या ब्रह्मके स्वरूपको ऐसा समझाती है । जो धीर–ज्ञानी जन है उसको जानता है । धीर वह जो वुद्धिमें शोक–आया मोह आया तो उसको पकडते नही –। ऐसे धीर मनुष्य ही उस सत्य का अनुभव कर सकते है– आगे इस वातको कल और समझायेंगे

अब सीधे होके बैठो– हरि: ॐ की ध्वनि करके दो मिनट ध्यान करो ।

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन स. ५

येनाश्रुतं श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं विज्ञातमिति ।
कथं नु भगवः स आदेशो भवतीति ।।३।।
यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद्वा ।
चारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम् ।।४।।
यथा सोम्यैकेन लोहमणिना सर्वं लोहमयं विज्ञातं
स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं लोहमित्येव सत्यम् ।।५।।

(छान्दो.६-१-३।४।५)

तो बात आयी महाऋषि उद्दालक अपने प्रियपुत्र श्वेतकेतुसे पूछते है की बेटा उस महान आदेशके धारेमें तुम जानते हो ?

आदेश शब्द की व्याख्या करते महाऋषि कहते है। आदिश्यते प्रकश्यते जगदनेन स आदेश ।

जिसकी कृपासे जो जगतका प्रकाश हो वह आदेश । जैसे अपने अनुभवमें समझो– जगत शब्द का अर्थ है गच्छति इति जगत्– जो प्रतिक्षण अन्यथा भावमाप्नोति । प्रतिक्षण अन्यथा रूपमें जाये उसको जगत कहते है। जैसे मानलो ये फुल है हमारे हाथमें शुरुमें ये कलीके रूपमें था धीरे धीरे आगे जाके यह खील गया– अब आगे चल रहा है फिर शामको इसकी पखुडी पंखुडी बिखर

जायेगी- इसी तरह अपने यह शरीर से समझो बच्चेसे कुमार, कुमार से जबान जबानी तक तो चलनेमें वडा आनंद आता है आगे क्या गति होती है तव शोच करने लगता है की यह क्या हो रहा है बुढावा आगया। फिर भी विवेक करो-तो बाल्यावस्था का वही प्रकाश-कुमारावस्था फिर जवानीका भी वही प्रकाश है और बुढावा का भी वही साथी जो चेतना अंतर आत्मा है उसमें फर्क कुछ भी नही पडा।

आचार्य कहते है जगतमें दो तत्त्व तुम्हारे सामने है एक दृश्य और एक दृक्।

दृक् माने साक्षी जो स्वयं प्रकाशित है और दृश्य जो प्रकाशसे प्रकाशित होनेवाला। जैसे फुलोको हम देखेंगे तो दिखेगा- यहां हम प्रकाशक माने साक्षी दृक् और फुल प्रकाशित दृश्य है।

ऐसे ही यह शरीर-इन्द्रिय संधान- इसका प्रकाशक अन्तर आत्मा है। शरीरसे कोई लोक क्रियाभी होगी- ये कही आयेगा- जायेगा भी तो उसके प्रकाश में। जैसे बुद्धिमान वैज्ञानिक पायलेट वायुयान में अनेक यंत्र फिट करता है और सभी यंत्र ठीक अपना काम कर रहे है- यह देखता रहता है तो वायुयान की गति ठीक होगी- ऐसे ही इन शरीरमें मन बुद्धि आदि अनेक यंत्र फिट किये है परमात्माने- तो यह शरीर चल रहा है-। उस अंतरआत्माके प्रकाशमें सब यंत्र ठीक चल रहे है। उसका बोध जबतक नही होगा इस बुद्धिमान मनुष्यको तो यंत्र की हेरफेर करना, वह ऐसे ही चला जायेगा।

जैसे एक पेड जमीनमें खडा है जड से रस खींचता है मोटा चौडा भी बन रहा है- उसमें पत्र, पुष्प फल भी लगते है इससे सब लोग लाभ भी ले रहे है- फिर भी देखो तो वही वृक्ष फिर वही खडा खडा सुखता है। कि नही ? क्यों। अब उसको रस नही मिलता है। पहेले रस मिलता था तो हराभरा था।

रस की उपर तक गतिका जो नियंता है उसको आत्मा कहते है। जब आत्मा उसको छोड देता है तो सुखता है- कहनेका अभिप्राय यही है की पेड कुछ यहांसे समझके नही गया- ऐसे ही यह मनुष्य वही अन्नपानी खाते खाते बढा और फिर बुढ्ढा हो गया- एकदिन चला गया तो क्या जन्मा क्या जीया- क्या मर गया ? किया क्या ?

इस लिये इस बुद्धिमान मनुष्य को सोचनेकी जरूरत है- इसके लिये ही हमारी ऋषियोंने विद्याके दो विभाग किये- अपरा विद्या और परा विद्या। अपरा

विद्या जो है– हमे इस लोकमें अपने शरीरको कैसे रखना अपनी जाति– परिवार समाज और राष्ट्रसे कैसे व्यवहार करना यह सीखलाती है अपराविद्या और शास्त्रमें अपने आत्माकी उन्नति कैसे करना ये कल समझाया था पराविद्यामें। पर माने उत्कृष्ट– जो ब्रह्म है जिससे ज्यादा श्रेष्ठ कोई नही ज्यादा पवित्र कोई नही। जिसको कोइ सीमामें वांध न शके उस महान ब्रह्मका बोध भी तो होना चाहिये जब तक बोध नही होगा इसका वह मनुष्य अकृतार्थ ही रहेगा।

इसलिये यहां ये महाऋषि अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतु से पूछते है –कि हे वेटा तुमने उस महान आदेश के वारेमें अपने गुरुसे पूछा हैऽ–जिसके जाननेसे सब जाना जाता है।

येनाश्रुतं श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं विज्ञातमिति।

उसके जाननेसे वेटा अश्रुतम् श्रुतम् भवतीति– नही सुना है वह भी तेरे अंदर भास जायेगा जैसे उदाहरणके लिये समझो– मातायें हंडीमें चावल पकाती है तो उसमेंसे एक दाना उठाके दवाती है और अगर दाना पूरा दव गया तो समझ जाती है सारे दाने पक गये– जिसको नही पकडा था उसको भी ज्ञानसे समझ लिया–तो लोक में भी ज्ञान को महान कोरोगे तभी व्यवहार ठीक होगा– संकीर्णतामें चले गये तो उतना ही हमारा कर्म छोटा होता चला जायेगा। महाऋषि प्रशंसा करते हुए कहेते है कि हे वेटा उस महान तत्त्वज्ञान के द्वारा तु सर्वज्ञ हो जायेगा। क्योंकि इस मनुष्यकी वह स्वाभाविक इच्छा है ये सबकुछ सुनलेना चाहता है– सबकुछ समझ लेना चाहता है– ज्ञान विहीन होना नही चाहता।

ऐसी विद्या को हे वेटा तूं जब प्राप्त करेगा तो सर्वज्ञ हो जायेगा– श्रुति भगवती कहती है

परमेवाक्षरं प्रतिपद्यते स यो ह वै तदच्छायमशरीरमलोहितं-
शुभ्रमक्षरं वेदयते यस्तु सोम्य।
स सर्वज्ञः सर्वो भवति तदेष श्लोक ॥२०॥

(प्रश्नोप. ४–२०)

श्रुति कहती है परमेवअक्षरम् उस परम अक्षरको जिसका विनाश कभी न हो ऐसा अमृत जो तत्त्व है उसको जो जानेगा वह सर्वज्ञ हो जायेगा।

वह तत्त्व जिसकी छाया नही– छाया साकार वस्तु की ही होगी निराकार की कोई छाया नही– छाया नही तो ये अशरीरम् शरीर कोई नही– शरीर भावसे परे वह तत्त्व है– शरीरभाव– कल्पना करेंगे तो तीनो शरीर सामने आयेंगे

अविद्या- माने कारण शरीर- सूक्ष्मशरीर और स्थूलशरीर स्थूल शरीर पूर्वजन्म के तुम्हारे ज्ञानके अधीन जो कर्म बने है उसके अनुसार यह मिला है। इस स्थूल शरीरकी सीमा है- कर्म जो भी हुआ है सीमा में हुआ है। कर्म वासनासे नियंत्रित है- वासना सीमा के अधीन। इसलिये मनुष्य जन्ममें यह भी एक कर्तव्य है वासना भी करो तो अच्छी करो क्योंकि वासनाके अधीन कर्म हुआ वासना बूरी करोगे तो कर्म बुरा बुरा कर्म करोगे तो फल बुरा मिलेगा सीधीसी बात है। इस सिद्धान्त में कोई पक्षपात नही कोई भी हो चाहे बडे से बडे पद पर बैठा तो किन्तु वासना बुरी करे तो कर्म बुरा करेगा तो उसको फल भी बुरा होगा। छोटेसे छोटा भी है वासना अच्छी करेगा तो अच्छा कर्म करेगा अच्छा फल मिलेगा।

इसलिये शुभ वासना करो।

महाऋषि वेदव्यास इसलिये कहेते है लोकवृत्ति में भी

आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।

एक बातमें सारी बात है कहते है धर्मका गूढ रहस्य क्या है? सुनो और उसका निश्चय भी करो। जो तुमको अच्छा नही लगता है वह किसीको भी अच्छा नही लगता- इसलिये तुम इस रहस्यको सुनोकी तुम अच्छी वासना करोगे तो अच्छी क्रिया होगी और उसका फल भी अच्छा होगा।

इस दृष्टि से यह जो तुम्हारा स्थूल शरीर है कर्म के अधीन है इसलिये बदलता रहता है- आता जाता रहता है। किन्तु तुम तो अछायम् अशरीरम् शरीरसे परे हो। अलोहितम् तुम्हारा कोइ वर्ण नही कोई सकल नही तुम सब आकार प्रकारो से परे हो। ऐसे इस परम अक्षर ब्रह्मतत्त्वको जो समझता है और दूसरेको समझाता है वह सर्वज्ञ हो जाता है। सर्वरूप हो जाता है। सर्वभाव कब होगा? सर्वभाव तभी होगा जब माया और मायाके विकार से परे उठोगे। सर्वभाव माने जड चेतना सबकुछ तुम्हारे में है तुम्हारे से बाहर कुछ भी नही। इसलिये श्रुति कहेती है- स सर्व भवति

गीतामें भी भगवान श्रीकृष्ण कहते है।

योगके द्वारा सर्वात्मपना है वह दूसरा और ब्रह्मविद्या के द्वारा सर्वज्ञपना ह वह भी दूसरा है-

योगी है मन के निरोध के द्वारा दूसरेके मनको समझ जाता है जिसको टेलीपेथी कहते है- वह दूर स्थित वस्तुको समझ जाता है किन्तु वह सर्वभाव में

नही जाता– वह परिच्छिन्न भावमें वंधा रहता है क्योंकि योगी सूक्ष्म शरीरके जगलसे बाहरतो नीकला नही । सुक्ष्म शरीर के जंगलसे वह बाहर नीकलेगा जो सूक्ष्म शरीर को भी मिथ्या समझेगा । जैसे जाग्रत मेंआये तो निद्रामें जो स्वप्न देखते है- तो हम उसको झूठा समझते है ।

इसी तरह तत्त्वज्ञानमें आना चाहिये यह जाग्रत में लम्वा चौडा जो अपना जीवन मालुम पडा यह भी एक स्वप्न ही है।

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. ६

यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद्वा
चारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम् ।।४।।
यथा सोम्यैकेन लोहमणिना सर्वं लोहमयं विज्ञातं
स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं लोहमित्येव सत्यम् ।।५।।
यथा सोम्यैकेन नखनिकृन्तनेन सर्वं कार्ष्णायसं विज्ञातं
स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं कार्ष्णायसमित्येव
सत्यमेवं सोम्य स आदेशो भवतीति ।।६।।
न वै नुनंभगवन्तस्त एतदवेदिषुर्यद्धायेतदवेदिष्यन् कथं
मे नावक्ष्यन्निति भगवांस्त्वेव मे तद्ब्रवीत्विति तथा सोम्येति
होवाच ।।७।।

(छान्दो० ६–१–४।७)

ती विचार चला बडा महत्त्वपूर्ण विचार है श्वेतकेतु ने प्रश्न किया था कि हे भगवान आपही कहते हैं कि एक का ज्ञान होनेसे सबका ज्ञान हो जाता है । तो इसलोकमें पटके ज्ञानसे घटका ज्ञान नही हो सकता । हे भगवान आपतो कहते हो कि हे सोम्य इस आत्माके आदेशको तूं जान जायेगा तो अश्रुतम् श्रुतम भवतीति अमतम् मतम् भवतीति । जिसको तुमने सुना नही है तेरे श्रवण में आ जायेगा । तुमको ऐसा मालुम पडेगा की तुमने सुना है और जिसको बारेमें कभी कल्पना भी नही किया वह भी तेरी कल्पना में आ जायेगा । जिसको तुने समझा नही वह भी तेरी समझमें आ जायेगा । इस बात पर आश्चर्य हुआ तो महाऋषि कहते हैं बेटा कारणका ज्ञान हो गया तो कार्यका ज्ञान हो जायेगा क्योंकि

कारणके बाहर कार्य कुछ भी नही । एक दृष्टांत दे के आये मृत्तिकाका कि ज्यों मिट्टी का ज्ञान हो गया तो तब चाहे हजार प्रकारके मिट्टीके पात्र पडे हो फिर भी वह ज्ञान हो गया कि यह सब मिट्टी ही हैं । मिट्टीसे जुदा कुछ नही ।

इसी तरह दूसरा दृष्टांत देते हैं की लोहमेणिना सर्वं लोहमयं विज्ञातं यहां लोह माने लोहा और लोहमणि माने लोह आदि धातुमे भी जो श्रेष्ठ है वह कौन है– तो स्वर्ण– सोनेके हजार किस्मके गहना बनवाओ– मानलो कंकण बनवाया और थोडे दिनोमें फिर बेचने जाओ सुनार के पास तो तुमको वह सोनेके पैसे ही मिलेंगे – वहां कोई कंकणको देखता नही– लेकिन जब तुम कंकण खरीदने जाते हो तो स्वर्णका पैसा भी वह लेगा और कंकण बनवानेकाभी पैसा अलगसे लेगा ।

हजारो किस्मके सोनेके गहने हो कंकण, चूडी- हार वे सब प्रतीतिमात्र है मिथ्या है इसलिये इस आकारकी कोई किमत नही । वजन होगा सोनेका- क्योंकि सोनेका विना कंकणका कोई स्वतंत्र अस्तित्व ही नहीं । इसलिये सब गहने आकार प्रकारमें अलग होने पर भी सब स्वर्ण ही है । स्वर्णसे जुदा कुछ भी नही ।

अब एक और दूसरे दृष्टांत से समझाते है ।

नखनिकृन्तनेन सर्वं कार्ष्णायसं विज्ञातम्

जैसे एक नखुनकाटनेकी नरेंजी से सब लोहका ज्ञान हो जाता है । सब जगह लोहा ही लोहा है । नाम- रूप वहारसे जो दिखला है यद्यपि व्यवहारमें तो उसका उपयोग है आजकल लोग लोहासे ज्यादा प्यार करने लगे है स्वर्णसे कम । जो कुछ भी वस्तु बनती है लोहसे वनती है लोहा जिसके पास ज्यादा वह धनी है आजकल लोहा ही सत् है उससे वनी सब वस्तु प्रतीति मात्र ही है ।

जैसे पानी बरसने लगता है तो बुद बुदे होते है जितने भी बुदबुदे होते है वह देखने में तो जुदेजुदे मालुम पडते है लेकिन पानीसे बाहर कुछ नही । कभी वह पानी का ओला पडता है फिर भी वह पानीसे बाहर कुछ नही क्युंकि कारणके बाहर कार्य कुछ भी नही । सुदंर से कपडा हो- तंन्तुसे बाहर कपडा कुछ नही अगर एक एक तन्तुको खीचना शुरू करो तो वह कपडा रहेगा ? कुछ नही रहेगा । कपडा तो देखने मात्रकाही है धागा ही धागा है ।

इसी तरह जब समझाया की कारणके ज्ञानसे कार्यका ज्ञान होता है–बेटा । तत्त्व जो है कारण है । कार्य जानो तो व्यवहार में नाम– रूप का महत्व है । कारण जो है कार्यके संबंध से प्रतीति होता है अगर कार्य जब नही हो तो बस्तु

स्वरूप कुछ नही। पुत्रके संबंधसे मातृपना-पितृपना आया किन्तु बाहरके संबधसे पार्सल होके आया किन्तु स्वरूपमें कोई फर्क नही पडता इससे- स्वरुप तो एक ही है जैसाका तैसा ही है केवल मातृपना-पितृपना यह कल्पना मात्र है।

ऐसा जब महाऋषिने समझाया तो श्वेतकेतु बडा चिंतामें पड गया- अगर हमारे पिताजीने कहदिया कि बेटा तुम जाओ ऐसी विद्याको जानके आओ की एक के जाननेसे सबका ज्ञान हो जायेतो - क्या करेंगे- इसलिये कहता हैं- हे भगवान

न वै नूनं भगवन्तस्त एतदवेदिषुर्यद्धयेतदवेदिष्यन् कथं ते नावक्ष्यन्निति भगवांस्त्वेव मे तद्ब्रवीत्विति तथा सोम्येति होवाच ।।७।।

श्वेतकेतु और कोई विचार नही करता और कहता है कि हे भगवान हमारे गुरुदेव इस विद्याको जानते ही नही थे- जानते तो मुझको क्यों नही बताते।

इसका अर्थ ये रहा की मैं उसका आज्ञाकारी शिष्य रहा और आज्ञाकारी शिष्य या पुत्र होवे तो गुरु और माता-पिता पासमें कोई अदेय वस्तु नही-जो कुछ है उसको समर्पित करते है इसलिये शास्त्रमें एक नियम आया की

बुद्धिमान मनुष्य हो वह सब जगह विजय होनेकी इच्छा करे किन्तु अपने शिष्यसे गुरुअपनी हार स्वीकार करे और अच्छे पिता अपने पुत्रसे हार स्वीकार करे।

ऐसी कामनाकरोकि हमारा पुत्र तो हो हमसे भी श्रेष्ठ गुणवाला हो।

गुणोमें पराजय की इच्छाकरे- दोषोमें नही।

सुदंर गुणोसे पुत्र संपन्न हो जाये इतनी उदारता से जब सोचेगा तो तुम्हारा परिवारमें सद्गुणोका विस्तार होगा। नही तो मन में काम क्रोध लोभ मोह आदि विकार बढ जायेगे तो जरासी बात में झगडा होगा। परिवार में शांति नही रहेगी दोषोके बढनेसे। ज्ञान बढेगा नही तो सीवाय शोक मोहके अतिरिक्त कुछ भी नही होगा वहां। इसलिये भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहेते है

इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते स्थिताः।।

(गीता ५-१९)

यहाँ सर्ग शब्दका अर्थ है भावी देशमें– मतलब आयेगा जो जन्म है– वह न हो ऐसी इच्छासे उपर उठ गया तो वह मोह नही करेगा– किन्तु ऐसी इच्छा ऊची इच्छा करोगे कब? जब मनको उस सत्–चित्–आनंद रूप आत्मामें लेआ-ओगे । अदि यह मन इंद्रियोके पीछे ही दौडता रहा और शोक मोह को ही पकडा– सुखदुःख को ही पकडा और आखीरमें इसको पकडते पकडते तो कुछ आया नही सब चला गया । अंदर जो वैठा है यह कहता है जो होना था हो गया अब रोने से क्या लाभ ?

अपने जोवन में ही समझो कोई प्यारी चीज खोजाये तो शोक करते है– तो सोचो जीवनमें जवानी कितनी सुन्दर वस्तु है उसके मुवावले में कोई और चीज हैं क्या ? किन्तु जवानी धीरे धीरे खीसक गई और तुमको पापड जैसा दिखा दिया अब बताओ भला ? रोने लगोगे तो मिलेगा कुछ ? विश्वमें ऐसी दुकान नही जहाँ जवानी मिले । तो संसारमें जितने भी पदार्थ है वह ऐसे ही आयेंगे और जायेगी । तुम्हारे को थोडासा सुख भी मिलेगा दुःख भी मिलेगा– वह भी लेना पडेगा ।

विवेकी है जो धीर है वह शोक मोहको पकडता नही । साम्ये स्थितंमन :– वह सम रहता है समरसता माने विषमता नही, विरोध नही– रागद्वेष नही– प्रियाप्रिय भाव नही । ऐसा वह जो तत्व है उसको जब तू पकडेगा तब तो जन्म-मरणसे छूट जायेगा । जन्म मरण से मुक्ति ही मोक्ष है । अगर प्रारब्ध से मानलो इतना उचा ज्ञान नभी हो– फिर भी ब्रह्मविद्यासे तुमको फिर अच्छी परिवारमें अच्छी जातिमें– किसी अच्छी माँकी गोद से जन्म मिलेगा तो फिर वही से आगे बढेगा ।

शुचीनां श्रीमतांगेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते ।
अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम् ।।
(गीता ६–४१ १/२ ४२ १/२)

आत्मतत्व ज्ञान लाभ माने योग करते करते अभी थोडी कसर रह गई तो विद्याप्राप्तिके पहले ही शरीर छुट गया तो फिर जन्म हुआ –क्योंकि शरीर छुट गया तो भी कुछ न कुछ कामना भी बनी है क्योंकि जब तक सम्यक त्याग होगा नही वासना रहती होगी नही–कोई न कोई वासना रहेगी । तो वह योगभ्रष्ट आत्मा फिर किसी पवित्र श्रीमान सपन्न माता– पिताके वहां जन्म लेगा तो उनकी अपूर्ण इच्छा भी पूर्ण हो जायेगीं– । और जिनकी अंदर ज्ञानके दृढ संस्कार है वह तो योगीके कुल में जन्म लेगा योंकि वासना नही कोई दिखा महात्मा गृहस्थमें

रहेते हुये भी जिनके हृदयमें ब्रह्मविद्या है वह गृहस्थमें रहते हुए भी योगि है। आत्मै वऽहम् ऐसी पवित्र जिसकी धारणा है– ऐसी पवित्र विद्या जिसके हृदयमें है ऐसे माता–पिता–

सती मदालसा सती चूड़ाला आदि–

उनके वहाँ योगभ्रष्ट आत्माका जन्म होगा चूडाला एक राजकुमारी थी– जैसे जैसे युवावस्था आयी तो नाना प्रकारकी वासनाये मनमें आयी चूडाला सोचने लगी यह क्या हुआ– मैं तो लताकी तरहा दिन दुगुनी रात चोगुनी बढती हुँ– उसी तरह मेरे अंदर ऐसी वासना क्यों जाग रही है? शोचने लगी क्या करना चाहिये– तो उसने बडे बडे ब्रह्मवेत्ता ऋषि को देखा– सोचा उनका सग करना चाहिये। तो चुडाला सुन्दर सत्संग सुनने लगी– सुनके मनन और विचार भी करने लगी–। सुनके केवल पल्ला नही जाती रही– जैसे एक बुढीया रही रोज कथा सुनने जाये तो एकदिन उसकी पौत्री ने कहा माँ मैं भी चलू आज कथा सुननेकी? तो कहेती वे नही। बेटी ने पूछा माँ आपतो रोज जाती है आज मैं चलू तो क्या बात है। तो उसने कहा मैं जाती तो हु वहाँ ही रोज पल्ला झाडके आती हूं और तूं तो बांधके घर आ जायेगी। नया नया मन होता है तो वह जल्दीसे नयी बातको फकड लेता है। पुराना जों मन है वह अपने ही शोक–मोह-को छोडहा नही नया कुछ स्वीकार भी नही करता।

अब विचार करते करते श्रद्धाशील चुडालाको आत्मबोध हो गया। चुडाला अब बडी प्रसन्न रहने लगी– चहेराभी बडा सुन्दर रहता है– उसमें चमक आती है किन्तु यदि चिंता करनेलगे– शोक करने लटे तो चहरेमे चिंता की कालिमा आ जाती है सुन्दर चहेरा भी वदरूप हो जाता है। इसलिये उचित मात्राम चिंता करो- व्यर्थकी चिंताको मत पकडो– ज्ञान पूर्वक चिंता करो तो चिंता आयेगी और नीकल जायेगी। जैसे समुद्रमें लहरे आती है और नीकल जाती है वैसे तुम्हारे मन रूपी समुद्रमे शोक– मोह आदिकी लहरे आयेगी और नीकल जायेगी।

चुडाला तो वडी प्रसन्न रहने लगी तो एकदिन राजाने पूछा तुं बडी सुन्दर दिखती है- चेहेरेमे इतनी ताजगी है क्या बात है– क्या खाती है?

चुडालाने कहा हे राजा तेरे महल पे रहतीहुँ नाना प्रकारके भोग भोगती हुँ इसलिये सुन्दर हुँ ऐसी बात नही– महलमें भी मैं फक्कड हुँ अपने को जंगलमें रहते हुए ही मान रही हुँ– मैं ब्रह्मज्ञान से सुखी हुँ– असली बात तो यही है– तो

महाराजाने पूछा मेरे को भी वह ज्ञान के वारेमें बताओ तो चुडालाने राजाको आत्माका उपदेश दिया । कहने लगी हे राजन् यह जो तेरी आत्मा है– यह अमृत है इसके उपर कोई सुन्दर नही यह तुम्हारा शरीर देखाने में लाख सुन्दर होवे ही आत्माके विना कुछ भो नई मुरदेको कोई प्यारा नही । वह चेतन आत्मा ही ब्रह्म है उसको जाने बिना वह मनुष्य जन्म ही वेकाम है– इसका कोई अर्थ नही राजाके अंदर तब वैराग्य उत्पन्न हो गया तो सोचने लगा अरे व्यर्थ मे ही संसारमें तब तो पापड वेल रहे है– यहाँ तो कोई लाभ नही– खानेवाला कोई ओर है ।

आपने जो कुछ भी करते है यह पापड बेलना जैसा ही है जितना मनुष्य जीवनमें कमाता है क्या खा लेता है उतना ? बहुत छोटासा हिस्सा अपने जीवन-में कमाइका खा पाता है बाकी यहां का यहाँ ही रहे जाता है ।

इस प्रकृति के साम्राज्यमें यही हाल है शरीर भी यहां का यहाँ रहे जायेगा । इस तरह आया था खाली और यूं ही चला जायेगा । माया की नगरी है यहाँ से केको कुछ नही जाना ।

तो जिस बुद्धिसे अच्छा तत्वविचार करे आत्मा के वारे में और अच्छे कर्म करे उसके द्वारा पुण्य उत्पन्न होगा– और उससे असली तत्वबोध हो जायेगा तो मोक्ष मिल जायेगा ।

शरीर भी हमारी पकडके नही यह भी एक दिन छोडऐ चल देगा- जब ऐसा तत्वज्ञान दिया तो राजा विरक्त होके एकदिन चल पडा- यहाँपर महारानी ने गुरुका काम किया । रानी ने रोका किन्तु राजा नही माना तो कहा जाओ जंगल-में रानी ने सब संभाल लिया और राज भी करने लगी– राजाको कुछ भी न पता चले ऐसे जंगलमें उसके लिये अच्छी व्यवस्था किया । फिर २२ साल के बाद पुरुषका वेश लेकर घोडेपे चडके राजा आकर देखा जंगलमें तो उसके मनमें प्रवेश करने देखा तो मन तो आत्मामें है तो वडी प्रसन्न हुई– और तव महारानीकी वेषभूषा में आके समाधिसे राजाको जगाया और कहा अब काम हो गया चलो घर । अब कोई जरुरत नही जंगलमें रहेनेकी । ऐसा बुद्धिमान बिचार करे– जब तक तत्वबोध होगा नही चित्तमें शांति आनेवाली नही । गीतामें इसलिये भगवान श्रीकृष्ण कहेते है

इहैव तैर्जितः सर्गो येषा साम्ये स्थितं मनः
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्याद्ब्रह्मणि ते स्थिताः ॥

(गीता ५–१९)

ऐसे जो ज्ञानी हैं ब्रह्मभावमें रहनेवाले व्यवहारमें रहेंने हुए भी ब्रह्मभावमें स्थित है उनका ब्रह्मभाव में ही जीवन है ।

तो श्वेतकेतु अपते पिता महाऋषि उद्दालकने कहता हैं– अगर मेरे गुरुदेव जानते होते ऐसी ब्रह्मविद्याको तो मेरे को जरूर बतलाते क्योंकि मैं उनका आज्ञाकारी शिष्य हूँ– इसलिए हे भगवान आप ही अब मेरे को उसका उपदेश करो– तो गुरुदेव कहने लगे–

हे सोम्य आज तो तुम सीधे होकर बैठो और ध्यान करो–

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. ६

सदेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् ।तद्धैक आहुर-
सदेवेदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयं तस्मादसतः सज्जायत ।।१।।

(छान्दो. ६-२-१)

तो विचार आया इस मनुष्य प्राणीको अपने जीवन के बारे में सोंचना पडता क्यों है- क्युकि केवल भोजके बारेमेंन सोचेगा तो पशु भी वही करता है तो उसने कमाई क्या किया इस जीवन में ? यह जो हंडी है उसको उमर भर भरते रहो- सुबह भरो तो सायंकाल को खाली तो यह बताओ यह कब भरेगी ? यह तो कभी भरनेवाली नही और शरीर तो आयेगें और जायेगे यह कोह पहला जन्म नही अपना- करोडो करोडो जन्म हो चूके हमारे - मनुष्य के लिये परमात्माने बडी सुन्दर तीन चीजे कृपा करके दी-। सुन्दर मन- सुन्दर बुद्धि और हाथ पैर। इसलिये तीन शक्तिया दूसरे प्राणी की अपेक्षा मनुष्य को ज्यादा मिली तो इसका ठीक ठीक उपयोग करे तो जीवन में- ठीक सोचे- ठीक समझे और ठीक कर्म करे तो जीवन म यह कुछ कमाई करके जायेगा ।

जीवन में समझने के लिये महाऋषि उद्दालक ने प्रश्न किया था उस महान आदेश के बारेमें उसकी व्याख्या अपने करते हुये आये- श्वेतकेतु कहना है की हे भगवान हमारे कुलके जो आचार्य है वे नही जानते थे इस तत्वको बारेमें जिसके बारेमे आप पूछा रहे तो- यदि वे जानने तो मेरेको जरूर बतलाते ।

यहां श्वेतकेतु का अभिप्राय यह है की हम गुरूके आज्ञाकारी शिष्य हैं- तो आज्ञाकारी शिष्य हो उससे गुरू कुछ भी छीपाते नही सब विद्या बताते है । घरमें आज्ञाकारी पुत्र होता है तो माता-पिता उनसे कोई बात छीपाते नही इसलिये

हिन्दुशास्त्र में कहा "सर्वत्र जयेम उच्येत पुत्रात शिष्यात् पराजयम् ।" बुद्धिमान मनुष्य सब जगह विजयी होनेकी इच्छा करे किन्तु गुरू अपने शिष्यसे हारने की इच्छा करे मेरा शिष्य सद्‌गुणो में मेरे से भी महान हो ।

इसी तरहा अच्छी मां अपनी वहुसे और पिता अपने पुत्रसे हारने की इच्छा करे । इतने बडे पवित्र मनसे रहेतें हैं यहां श्वेतकेतु कहता है की हम उसके आज्ञा-कारी शिष्य हैं अगर वे जानतें तो जरूर रहेतें– हे भगवन अब आप ही मेरे को वह महान आदेश के बारे में उपदेश करो कि जिसके जान लेने से सब कुछ जानने में आ जाये । मनुष्य के अन्दर स्वभावसे इस प्रकार की इच्छा बनी हुई है– मैं सबकुछ समज जाऊ– जितने अंशमें मनुष्य नहीं समजता उतने अंश में दुःखी होता है । दूसरी इच्छा हैं मैं कभी न मरू–मैं हमेंशा बना रहुँ । शरीर तो हमेशा नही रहेगा– अपने अमृत्वकी इच्छा करनेवाला जो मनुष्य हैं– इसका अर्थ है अमृत्व को दूसरी चीज है । इस शरीरसे कोई अमर नही हो शकता । हमारे शरीर में कितनी तकत है जीनेकी– ५० वर्ष थोडा ठीक चलता है फिर आगे ६०–६५ और ढीला हो जाता है और उसके बाद तो आमकी गूठकी की तरहं छिलकेसे अलग हो जा है– अगर मानलो की प्रकृति ने ऐसा विधान नही किया होता की यह शरीर जूदा हो जाये तो आगे जाकर हाल क्या होता २००–१५०–२०० वा का हो जाये तो हड्डी हड्डी केवल टुकडे टुकडे होकर गीरने लगे– सोचो तो भला क्या हाल होता । इसलिये परमात्माने अमुक सीमातक बंधा हुआ रखा और अमुक सोमा के बाद यह जुदा हो जायेगा किन्तु तुम्हारा जो स्वरूप है वह जैसे का तैसा है ।कहता है

सदेव सोऽयेदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् । तद्धैक आहुरसदेवेदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयं तस्मादसतः सज्जायत ।।२।।

हे सोम्य माने प्रियदर्शी– प्रिय पुत्र– प्रिय शिष्य आदि माता–पिताके लिये प्रिय दर्शन होता है । इसलिये सोम्य शब्दका प्रयोग किया है यहाँ ।

महाऋषि उद्‌दालक कहतें हैं यह जगत जो तूं देखता है इस जगतका जो आकार है उत्पत्ति के पहेंले यह कुछ भी नही था । यह गुलाबका फुल है हमारे सामने सोचो उत्पत्ति से पहेंले यह फुल क्या था भला ? कोई रूप कोई आकार था भला ? तो इसका कारण पहेले था–सत् था यही कहना पडेगा ।

सत् का अर्थ महाऋषि कहते है

त्रिकालमें यानी भूत– भविष्य ग्रौर वर्तमान तीन कालमें जिसका स्वरूप वदले नही वह सत्य– है ।

उदाहरणके लिये समझ।– यह जो शरीर से जिस शरीर को लेके हम बैठे है– यह शरीर सत्य होना– तो माके शरीर से जन्म होना है तो कितना बच्चा होता है भला ? किन्तु यह वच्चा शरीर से ग्रगर सत्य होता तो ग्राज जैसा शरीर है कल भी वैसा ही रहेगा– कल जैसा स्वरूप हैं परसो भी वैसा ही रहेगा– इस महीने में जैसा स्वरूप हैं दूसरे महीने भी वैसा ही रहेगा– इस तरह वर्ष में भी समझलो । इसका शरीर ग्रगर इस तरहा वदलेगा नही तो वताग्रो भला कौन मा इसको प्यार करेगी ? यह वच्चा ग्रगर वडा न हो हो हमेशा ही उसका भार उठाना पडेगा। प्यार करनेका ढंढेरा चाहें कितना ही पीटो भले पर कोई प्यार करनेवाला नही कहेंगे– जूठा हैं ये ।

रोज हम नयी नयी सकले दिखाते हैं इसलिये लोग हमे प्यार करते हैं। जैसे ड्रामा में लडका लडकी ग्रगर नयी नयी सकल वदलेते हैं तो ग्रपने खुश होते हैं ग्रगर सीदे सादे खडे हो जायें तो कौन खुश होगा कौन हसेगा ?

धीरे धीरे बच्चा सकल वदलाता हैं तो मा–त्राप भी उसमे प्यार करते है बच्चा बडा हो रहा है । ग्राम पहेली जरासी मझरी लगी छोटा फल नीकला धीरे धीरे फल वडा हुग्रा–तो देखते हो हम खुश होतें हैं की हो ग्रव ग्राम ग्रानें लगे- ग्रौर थोडासा वडा हुग्रा तो चटनी ग्रव बन सकती हैं– ग्रौर वडा हुग्रा ग्राचार डालेगें– ग्रौर पूरा रक गया तो घर में ले ग्राके फ्रीज में रखा दिया– ठडा हुग्रा– तब उसने फोन किया तो टेवल पे ले ग्राग्रों– । ग्राम जैसे ग्रन्दर गया तो शरीर- की सकलमें ग्रा गया– ऐसे धीरे धीरे ग्राम पका तो तुम्हारां भोजन वन गया इसी तरहा यह शरीरको ग्राम्र की तरहा ही समझो माया भगवती के वगीचेका यह भी एक फल ही समझो किन्तु फर्क इतना हैं ग्रौर सब फल पकने पर सुन्दर लगते है ग्राम ग्रंगुर ग्रादि यह जो शरीर रूपी फल हैं वह कच्चा ही जरा मीठा होता है– स्वाद देता है । जरां वह पक गया तो वेस्वाद हो जाता हैं– पका ये किसीको ग्रच्छा नही लगता ।

ग्राम– केला ग्रादि जो फल हैं उसका जडरस है ग्रौर शरीरका चिद्‌रस माने चेतन रस है । चेतन रस होनेमे ये भोक्ता हो गया– वह जड रस होने से भोग्य हो गया । किन्तु फिर भी जहाँ जड रस दिखता है वहाँ पर भी ग्रस्तिता है कि नही ? तो सोचो सत् कहाँ रहेता है ? सत् कहां नही ? जहाँ तुम्हारी दृष्टि

जायेगी वहाँ अस्ति अस्ति दिखाति है। अता तामसी उपाधि होनेसे जडता हमारे सामने दिखी। यह जो शरीर हैं अति जड है।

सारे ब्रह्माण्ड को जो व्याप्त करनेवाली अस्तिता जो सत्ता जिस समय तुम्हारी वृत्तिमे पहुँचती हैं तो वह सत्-चित् हो जाती है- चेतन आ गया। और चेतना वहाँ जव (आ गया) प्रगट हुआ हो हम वहां आ गया हम-हम-हम यह सामान्य अहंकार में देखो तो कौय जाति है ? कोई मनुत्य यां- गंधर्व-देवता, किन्नर के पशु-पणी हैं कोई जातिका विभाग इसमें ?

जातिका विभाग तो शरीर से होगा यह विशेष अहंकार है। यदि कोई शरोर में विशेषण लग गया जैसे शींग-पूछ आदि तो ये पशु-पक्षी हो गया- शरीरसे ढेद मालुम पडाता है। शरीर के आगे कुछ नही।

पशु योनिका जो जीव है एह शरीर अहंकारको छोडता है क्योंकि वह शरीर अहकार में जन्मा है- शरीर अहंकार में जी रहा हैं। किन्तु जो मनुष्य योनिका जीव है- यह तीन अवस्थाका अनुभव कर रहा है जाग्रत- स्वप्न सुषुप्ति। अव-स्था में भी उसको शरीर दिखा रहा हैं स्वप्नावस्था में शरीरका आभासमात्र दिखाता हैं- जैसे केमेरा मेन के सामने फोटो खीचवाने खडे हो जायो तो यह केमेरे में जो शरीर दिखता है वह असली शरीर नही आभास मात्र दिखता हैं- और उसको कहते है हमारा फोटो हैं। तो उसको तो कहते है हमारा फोटो (स्व-प्न का शरीर) और इसको (जाग्रतमें शरीरको) कहते हैं हम-। जैसे उदाहरण-से समजो आदि वासी की वस्ती अभी भी वहीले हैं हमारे यहाँ- भोले भाले प्रकृतिके बच्चे न कभी कुछ समझे- न कभी कुछ समझने को तैयार- तो ऐसी वस्ती में कोई फोटो ग्राफर गया तो देखा एक छोटी से लंगोटी पहनी है सकडी उठाके वह आ रहा है तो उसने खट केमेरा उठाया Photo खींच लिया।

अव फोटो ग्राफरने उसको फोटो दिखाया और बक्से में बन्ध कर दिया तो कहने लगा हाय मर गयारे मर गयां मेरे को बाहर नीकालो- उस बेचारे Phot-ografar ने बहुत समझाया- किन्तु वह तो फोटो को ही अपना स्वरूप मानता हैं अन्त मे हारके फोटो ग्राफर ने वह फोटो नीकाल के उसको हात में दे दिया. फोटो को छाती से चीपकाया- घर आया और अपनी पत्नी को दिखाया की बोलो यह कौन ? तो पत्नी कहेने लगी तुम्ही तो हो- तो वहेता है आज इसको कोई ले जाना तु आज वच गई- मैं बडी मुश्कीलसे रो-रोके आज इसको ले आया हुं-। इस आदिवासी की तरह माया भगवती ने यह शरीर खडा किया उसको हमने अपना मान लिया। जहाँ जाते है बस इसको दिखाता है।

आजकी सकल तुम्हारी है की बीसवर्ष पहेले की सकल तुम्हरी है ? आजकी सकल प्यारी है की बीस वर्ष पहेने की? अपनी सकल किसको मानोगे भला ?

इस तरहा माया भगवती ने तुमको समझाने के लिये तुम्हे रोज जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति तीन अवस्थायें दी इसको बिल्डींग वनाओ। ग्राउन्ड फ्फोर-फर्स्ट फ्लोर सेकन्ड फ्लोर- तो यह वनाओ फ्लोर तुम हो की तुम्हारे फ्लोर ?

लोग होतें है ना- वे एक ड्रोइंगरूम रखतें हैं किसीको मिलना है- वहींसे मिलके वहींसे विदा करना है दूसरा कोई नजरी का मित्र आयेगा तो अंदर भी चला जायेगा और कमरो मे- किन्तु बेडरूम में कोई जायेगा नही-। तो यहां जाग्रत अवस्था कों तो ड्रोइंगरूम समझी- दूसरा रूम हैं स्वप्न अवस्था जिसमें खास खास मित्र ही आयेगे- और वेडरूम माने सुषुप्ति में कोई नही जायेगा। यह तीन अवस्थाके साक्षी तीनो अवस्था से तुम न्यारे। सुषुप्ति में दृश्य-दर्शन द्रष्टा कोई नही त्रिपुटी नहीं तो कोई दुःख नही। जाग्रतमें त्रिपुटी हैं तो शोक-मोह होता हैं

स्वप्न में त्रिपुटी है पर आभास मात्र कोई पकडनेकी चीज नही। सूक्ष्म रीत से विचार करोगेतो सुषुप्ति में भी त्रिपुटी है- किंतु उपरसे ही देखो तो वहांकोई त्रिपुटी नही कोई दुःख भी नही। ऐसी तुम्हारी आतमा जो तीनो अवस्थाकी साक्षी और तीनोसे न्यारी वह चेतना आत्मा-इस सत्य पर मनुष्यकी दृष्टि आनी चाहिये। महा भारत मे कथा आती है- एक वडे राजा सुयक्ष हुऐ। उस जमाने में महाराजा लडने जातें थे- तो अगर राजा पकडा जाये या मार दिये तो सेना हार जायेगी। एक बार लडाई में राजा सुयज्ञ मर गये-तो राज-महेल से रानी- सब सम्बन्धी युद्ध भूमि में आ गयें- तो शरीरको खोजतें खोजते सबको अत्यन्त शोक हुआ-वो रोने लगे-एक दिन, दो दिन तीन दिन हो गये-कोई अन्तिम क्रिया करना नही शरीर सडनें लगा दुर्गन्ध आने लगी भगवान यम-राजने सोचा की इनको ज्ञान देना चाहिये। यें सब वडे मोहमें फसे हैं। एक वाल ब्रह्मचारीका रूप बनाया। शरीरपे सुन्दर मृगचर्म लपेटा हुआ-शीरपे सुन्दर जटा और हात में कमंडलु-दंड आदि लेकर युद्ध भूमिमें चला गया सबके बीचमें। और जाके राजाके शरीरकी ओर तो किया पीठ औंर लोगोके सामने बैठके रोने लगा।

जब कोई विचित्र बात होनी है मनकी वृत्ति बदल जाती है। महारानी पुछने लगी हे वाल ब्रह्मचारी- तुम कौन हो- तो वह कहने लगा हम 'रोदन'

मंडल' के सदस्य है । काम क्या करते हो-? तो कहने लगा- हमारे मेम्बर्स रोने लिये जाते है । रानी ने कहा यहाँ तो हम लोग है यहाँ क्यों आये हो ? तुम किसको रो रहे हो ? सो बोला- तुम लोंग रो रहे हो राजाको और मैं रो रहा हुँ तुम लोगोके- ।

सब ने पूछा अरे तुमारे लिये क्यों रो रहे हो ? हम कोई मरे है ? कहना है मरे तो नही हो किन्तु तुम लोगो के लिये भी ऐसा ही रोनेवाला है । सुनते ही सबका रोना बन्ध हो गया । लोग कहने लगे पहले तो यह राजा हसता- बोलता बेलता रहा-अब यह कुछ करता नही तो चला गया- अब तो यह शरीर है वह तो मुरदा है- इसमें कोई तत्त्व नही उसका अग्नि संस्कार करो ।

भाग्यशाली जो वीर है उसको मनुष्य जन्म मिलता है मंद भाग्यवालीको शींग पुछवाला शरीर मिलेगा और अति मंद भाग्य को तो कीट पतंग आदिका शरीर मिलेगा अति मंद होगा वह तामसी योनि का जीव होगा । जैसा कर्म होगा जैसा ज्ञान होगा वैसा शरीर मिमीगा इसलिये बुद्धिमान मनुष्यको अच्छा कर्म और अच्छा ज्ञान प्राप्त करना चाहिये ।

ज्ञान से कर्म करो गे तो थोडा भी बहुत है । बिना ज्ञानसे कर्म भी थोडा फल देगा ।

ज्ञान की प्राप्त करनेकी इच्छा करो ।

अब सीधे होके बैठो-दो मिनट ध्यान करो-

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. ७

सदेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् । तद्धैक आहुरसदेवेदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयं तस्मादसतः सज्जायत ॥२॥

कुतस्तु खलु सोम्यैवं स्यादिति होवाच कथमसतः सज्जायेतेति । सत्त्वेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् ॥२॥

तदैक्षत बहु स्यां प्रजायेयेति तत्तेजोऽसृजत । तत्तेज ऐक्षत बहु स्यां प्रजायेयेति तदपोऽसृजत । तस्माद्यत्र क्व च शोचति स्वेदते वा पुरूषस्तेजस एव तदध्यापो जायन्ते ॥३॥

(छान्दो. ६।२।१,२,३)

तो विचार चला वह शरीर बडा आकर्षक है, प्राण भी बडा सुंदर हैं, मन भी बडा सुंदर वैं किन्तु फिर भी सोचो वह चेतन आत्मा नही हैं तब कौन चीज अच्छी है ? हैं कोइ ? अच्छी सब कहेंगे यह मुरदा हैं ! तो अब सोचो की मुरदेकी सेवामें लगे रहेना हैं कि इसमें जो सबमे अच्छाहैं उसे भी प्यार करना हैं । इस चेतन आत्माकी ओर मनका आकर्षण हो–आत्माको समझे विना यह जीवन सार्थक नही है ! इस आत्माके स्वरूपको समझानेको लिये महान ब्रह्मवेत्ता महाऋषि उद्दालक अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतुको ब्रह्मविद्याका उपदेश देते हैं । जैसे

आजकलके माता–पिता अपने बच्चोको बेन्क बेलेन्स का उपदेश देने है–उसकी चितामें रातदिन परेशान रहेने है। प्राचीन कालमें मातापिता ये सोचने थे की कैसे हमारा पुत्र इस जीवनको सार्थक करके जाये। इसलिये महाऋषि उदालक अपने इसप्रिव पुत्र श्वेतकेतु को कहने हैं–ऐसोम्य जिस जगतको तुं देखता है–जिसमें तेरेको शोक मोह होना है जिस जगतमें तेरी अहंता–ममता चल रही हैं– यहेले यह जगत नही था–यहेले ऐक मात्र सत था। यह बीजके रूप मे था उसको वोयानो धीरे धीरे अंकुर नीकलेगा फिर यह विशाल वृथ की सकलमें आ जायेगा धीरे धीरे। उस समय यह सत् दिम्वेगा जब वह बीजके रूपमें था ? तो वृक्षका कोइ आकार प्रकार नही था वह बीज मात्र था यहेले। तो जो बीज मात्र जो केबल है वही वस्तु सत है वाकी यह आकार प्रकार दिखानेवाला केवल प्रतिति मात्र है। संपूर्ण जगत को पकडके कहेने है एक यात्र वह सन था। कैसा वह सत् था ? तो आचार्य व्याख्या करते हुए कहेने हैं।

निर्दिशेषम्

निर्दिशेषम् – वहा विशेष कोइ नही–विशेष शब्दका अर्थ समझो विशेषण जैसे यह गुलाबका फूल तो यह कैसा हैं तो कहोगे मीला है तो मतलब यह पीलापना विशेषण हो गया तो यह विशेषण विशिष्ट होने से यह लाल फूल से जूदा हो गया। तो माने विशेषण उक्त वस्तुमें भेद रहेगा। जहां विशेषण कोइ नही निर्बिशेष है वहां भेद कोइ नही तो केवल अस्तिवा मात्र सत् था पहेले।

श्वेतकेतु पुछता है ऐ भगवान पहेले सत् था तो क्या इस समय यह सत् नही है ? तो महाऋषि कहेते है बेटा इस समय भी सच् ही है।

यह जो तुम्हारा शरीर है जब माता–पिताके शरीरमें यह शरीर नही था तो आत्मा तो था यह तो मानोगेना। अब मानलो माता–पिताके शरीरमें भी आ गया तो आज जो आकार प्रकार देख रहे हो क्या पहेले वह आकार प्रकार था ? कुछ भी नही था ऐसा तो कहेना पडेगा यह जीब मात्र ही था।

इस प्रकार यह सपूर्ण ब्रह्मांड हैं इसका नाम है–नामरूपात्मक जगत जब यहेले नही था उस जमय वह सत्–चित–आनन्दरूप एक ब्रह्म ही था। उस ब्रह्म में जरा जो माया भगवती आ गइ वह जगत कारण आत्मा तो वन गया। माया को न आने के पहले भी बह सत् था वह जो उसका स्वरुप था निर्दिशेषम् निरजनम् औए निर्विकल्प था। मायाके आनेसे वह मायापति तो बना किन्तु उसके बननेपरभी यह जगत पहले भी वह था उसके लिये उपनिषदमें सुननेहैंकी

दिव्यो ह्यमूर्तः पुरुषः सबाह्याभ्यन्तरो ह्यजः।
अप्राणो ह्यमनाः शुभ्रो ह्यक्षरात् परतः परः ॥२॥

वे दिव्य पुरूष परमात्मा जो संदेह आकाररहित और समस्त जगत्‌के बाहर एवं भीतर भी परिपूर्ण हैं। वे जन्म आदि विकारोंसे रहित सर्वथा विशुद्ध है। क्योंकि उनके न तो प्राण है, न इन्द्रियाँ है और न मन ही है। वे इन सबके बिना ही सब कुछ करनेमें समर्थ है, इसीलिये वे सर्वशक्तिमान् परमेश्वर अविनाशी जीवात्मासे अत्यन्त श्रेष्ठ सर्वथा उत्तम है ॥२॥

मंत्र इस बात को स्पष्ट करताहै–ब्रह्म तो नित्य है दिव्य है माया भगवती के प्रवृत्त होने पर भी जैसे उदाहरण से आकाश प्रकाशमान हो जाता है किरणे पानी को खींचती हैं वह आकाशमे बादल रुपसे प्रगट हुआ विजली भी चमकने लगी आकाश मेघरूप दिखने लगा तो आकाश जो है मूल आश्रयहै उससे मेघ बरसेगा–नाना प्रकारकी सृष्टि उत्पन्न होगी इसी तरह जिस समय यह सत्–चित् आनंदरूप निर्विशेष ब्रह्म था जब माया प्रगट नही हुई–वह है निर्गुण निराकार तत्त्व आकाशकी तरहा सबका मूल आश्रय–उसको मुमुक्षु लक्ष बनाये। सगुण साकार को लक्ष्य बनाओगे तो तुम्हारी बुद्धि उस विशेषणमें फस जायेगी। अब विशेषणमें रहेनेवाली जो बुद्धि है वह उस तत्त्वको नही पकडती।

वह शरीर क्या है ? हमारा विशेषण–हम–हम बोलोतो इसमें कोई जाति दिखती है– मनुष्य–पशु–पन्छी आदि जीवो में अपने अपने भोगके लिये लडाईतो होती है हम हम यह बोध तो सब जगह–तो यह मेरा–मेरा है तो भ्रान्तिके चक्करमें आ गया–इतने अंशमे तो मनुष्य दुसरे पशु–पन्छी है उनके बराबर ही है इसीलिये यह शास्त्र बोध उसके लिये है की तूं इस श्रेणी में कबतक बैठा रहेगा ?

चाहे जिसके बिचमें बैठा है अगर निर्विशेष तत्त्वका बोध इसके अंदर होगा तो सुखी होगा।

सारे विश्वका साम्राज्य भी हो–किन्तु ऐश्वर्यका जीवन कबतक – जबतक आंख खुली है–इसीलिये भर्तृहरी ने सुंदर लिखा हैं।

आंख बन्द होनेही कुछ भी नही रहता। इसलिये मुमुक्षु सत्‌को नही छोडता। यह शरीरमें आत्माही एक मात्र सत् है उसके समझे विना बाहर जितना समझे ठीक है यही समझे तो भी ठीक है। जन्म के पहले वह सत् था आत्मा था–जन्मके बादमें भी वाही रहा फर्क इतना विशेषण के अहंकार में यह मनुष्य शरीर प्रधान दिखने लगा।

इस तरह भूतोकी सृष्टि हो गई तो जो सब था उसके साथ में विशेषण जूटने लगे भेद की प्रतीति होने पर भी भेद है नही–जैसे जन्मसे पहले यह सत् आत्मा था जन्मके बादमें भी वही आत्मासे यह शरीर जी रहा है और मरनेके बाद भी वह सत् है ।

यह सत् चित् आनन्दरूप तुम्हारी आत्मा– कालातीत है तीनोकालो में बाध्य नही किसीसे । किन्तु नामरूप की प्रकृति इसमें होगी– नाम–रूप आयेगे और जायेंगे जैसे वर्षाकालमे आकाशमें बादल आते हैं और जाते है' माया से ईस सतमें नानारूप दिखते हुए भी स्वरूपमें कोई फर्क नही । इसलिये महाऋषि करते है

संदेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् ।

सोचो गाढ निद्रामें चले गये तो वहां कोई अहंता– ममता थोडे ही ? शरीरका कोई भान नही उस समय साक्षी अन्तर आत्मा है तुम्हारा– वह महान आनन्दका अनुभव करता हुआ जब जाग्रत में आया तो– बडे मजेसे सोये किन्तु कुछ नही समझे– यह कुछ नही समझना भी समझना है । नही समझना मूढता है समझनेके लिये भी प्रकाश और सोचनेको लिये भी प्रकाश– तो इसका अर्थ नीकला की ज्ञानके लिये भी प्रकाश और अज्ञानके लिये भी प्रकाश– वह आत्मा तो रूप नही वह तो ज्ञानरूप ही है । केवल अज्ञानने घेरा डालके रखा है

जैसे कभी कभी आकाशमें बादल आगये तो लगता है सूर्य को घेर लिया– किन्तु सूर्य हो जैसे का तैसा है । हमारी आंखो के सामने केवल सूर्य नही दिखता क्योंकि सूर्य का भी सूर्य है ।

यह सैर्यमन्डल भी इतना तेजस्वी है अपने आप नही उसको परमात्माके तेज से ही तेजस्वी दिखाई दे रहा है । किन्तु सूर्य ये नही समझ रहा है कि मै किसके बलसे तेजस्वी बनके बैठा हुं । कौन है वैसे हमारे शरीर के पीछे पूछो अबने इस शरीरमे– क्यों भोजन भट्ट तुम किसके तेजसे तेजस्वी हो तो क्या बतायेगा ?

भले ही ये आत्मा है तबतक यह शरीर खानदाना मागेगा किन्तु शरीर में तेज है वह अन्तर आत्मा का ही तेज है– । यह शरीर किन्तु इसको नही समझता– इसलिये यह शरीर जड है– मूरदा है– । भले यह चेतन आत्मा की छाया में सौ वर्ष भी जीये किन्तु यह कभी भी चेतन आत्माकों समझने वाला नही ।

अब जीव– प्राणी आपने मालिकको पहचान ते हैं किन्तु गधा अपने मालिक को नही पहेचानता ।

सायंकालको धोबी खूद खोजने जायेगा– और घरमें लायेगा तो यह घर में आयेगा– मालिकको उसके खाने दानेकी भी व्यवस्था करनी पडेगी

इसलिये मुमुक्षु समझे यह शरीर आत्मासे जूदा ही है मन्त्र कहते है जो सूर्यका भी अन्तरयामी है– सूयं जिसके दृश्य अस्त हो रहा है– हम तो गलती करते है – कर सकते है किन्तु उसकी व्यवस्थामें कोई गलती नही यही परमेश्वर है ।

श्रुति भगवती कहती है

भयादस्याग्निस्तपति भयात् तपति सूर्यः ।
भयादग्निश्च वायुश्र मृत्युर्धावति पञ्चमः ।।३।।

सब पर शासन करनेवाले और सबको नियन्त्रणमें रखकर नियमानुसार चलानेवाले इन परमेश्वरके भयसे ही अग्नि तपता है, इन्हीके भय से सूर्य तप रहा है. इन्हीके भयसे इन्द्र, वायु और पांचवे मृत्यु देवता– ये सब दौड दौडकर जल आदि बरसाना, प्राणियोको जीवन शक्ति प्रदान करना, जीवोंके शरीरोंका अन्त करना अदि अपना– अपना काम सावधानी पूर्वक कर रहे है, सारांश यह कि इस जगत्में देवसमुदायके द्वारा सारे कार्य नियमित रूपसे सम्पन्न हो रहे है इन सर्वशक्तिमान, सर्वेश्वर, सबके शासक एवं नियन्या परमेश्वरके अमोघ शासनसे हो ही रहे है । सृष्टि में परमात्माके ये पांचो गुप्तचर भी है मनुष्य प्राणी क्या करते है– पांचोकी नजर रहती हैं । इसलिये मुमृक्षु सावधान रहे– ।

उस सत्–चित् आनन्द रूप में ही मनको ले आये माया प्रबल होने से– पंचभूतो की उपाधिसे भेद तो दिखता है– किन्तु उस अखंड तत्त्व में कोई भेद नही– न सजातीय– न विजातीय और न स्वगत । जैसे जैसे मुमुक्षु उस अखंड तत्त्व का चिंतन करेगा की वही मैं हुँ–तो देहादि भाव छूटता जायेगा ।

अब सीधे होके बैठो दो मिनेट ध्यान करो– उस सत् चित् आनन्द रूप परमात्माका अपने हृदय में

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन स. ८

ॐ सदेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् ।
तद्धैक आहुरसदेवेदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयं
तस्मादसतः सज्जायत ॥१॥

कुतस्तु खलु सोम्यैवं स्यादिति होवाच कथमसतः
सज्जायेतेति । सत्त्वेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् ॥२॥

तदैक्षत बहु स्यां प्रजायेयेति तत्तेजोऽसृजत तत्तेज ऐक्षत
बहु स्यां प्रजायेयेति तदपोऽसृजत । तस्माद्यत्र क्व च शोचति
स्वेदते वा पुरुषस्तेजस एव तदध्यापो जायन्ते ॥३॥

(छान्दो॰ ६-२-१।३)

तो बात आवी इस जगतके मूलमें जो तत्त्व है वह सत् है वह चेतन है वह जड हो नही सकता । चेतनके आश्रय के विना जड कुछ कर नही सकता ।

उदाहरणके लिये यह शरीरको ही समझो-अगर चेतन आत्माने ईसको छोड दिया तो ये किसीकी- बेटा-बेटी- मा- बाप कुछ बन सकता है ? अगर चेतन का आश्रट है तो सब संबन्ध है- आत्माके बिना कुछ भी नही । तो ऐसे चेतन आत्माके ओर दृष्टि दो यही चमत्कार है । श्रुति भगवती यहां कुछ विपक्षका भी विचार रखती है क्योंकि वह विचार कोई मुमुक्षुके सामने रख देगा तो बुद्धि तो चंचल है ही अभी- तो सद्विचारशील मुमुक्षु की रक्षाके लिये इसका भी विचार यहाँ करते है । जैसे किसान खेतमें एक चलाता है- बीज बोना है और साथमें

बाड भी लगाता हैं– क्यों ? खेतमें कोई ऐसा प्राणी प्रवेश न कर जाये जो खेती-को नष्ट करदे । ऐसी ही मुमुक्षुका चित्त भी ज्ञानका बगीचा ही समझो– उसकी रक्षाकी भी ग्रावश्यकता है ।

भगवान कृष्ण को तो ग्रपने भगवानका ग्रवतार ही मानते है ना ग्रर्जुन उनके साथ ही रहता था– उठता था– दौडता था क्या ग्रर्जुन का मन शान्त हो गया ?

जो मन चंचल है वह तत्त्वज्ञानको धारणा नही करता भगवानके साथ में रहेंगे तो सबकुछ हो जायेगा ऐसा नही– जबतक तुम्हारे हृदयके ग्रन्दर वह तत्त्व-ज्ञानका प्रकाश नही ग्रायेगा तो ग्रधेरे में हीं रहोगे ।

ग्रात्माके मोक्षके लिये तो तत्त्वज्ञानको धारणा करना पडेगा । जब ग्रर्जुन ने कहा की हे भगवन्

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ।।

(गीता ६।३४)

हे कृष्ण यह मेरा मन बडी ही चंचल है– ग्रौर प्रमाथि मालुम पडता है इसका निग्रह मैं नही कर सकता– जैसे वायुको बांधना कठिन है ऐसे ही इसमन-को रोकना मुश्किल है ।

तो उपाय बताते हुऐ भगवान कहते है

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ।।३५।।

(गीता ६।३५)

बुद्धि मान जो है एकतत्त्वाभ्यास करे– एक तत्वको किसी श्रुति से– शास्त्र-से– या ब्रह्मवेता गुरूसे पकडे ग्रौर उसी एक तत्त्वका निश्चय करके बारम्बार उसीका ग्रभ्यास करे ।

मन ग्रनादि कालसे इस संसारके बगीचेमें घूम रहाहै इसमें शोक भी हो मोह भी हो रहा है किन्तु सोचो संसार तुम्हारेसे कितना प्यार कर रहे है ? हमारा शरीर ही हमको सबसे प्यारा है ग्रगर शरीर नही तो– मा– बेटा– भाई बन्धु कुछ भी नही ऐसा प्यारा यह शरीर भी जब हमको छोड देता है तो–किससे प्यार करे संसारमें ।

इसलिये संसारसे विराग भी रखो । भोजन तो जरूर करो किन्तु जितना पचा सको उतना ही लो– ज्यादा लोगे तो नुकशान ही करेगा ।

तो मन से अभ्यास और संसारसे विराग की वृत्ति बनाओ।

जगतकी उत्पतिके बारेमें अपने विचार कर रहे थे– कुछ विपक्ष– वादी लोग कहेते हैं– जगत की उत्पत्तिके पहेले कुछ भी नही था कोई कार्य भी नही कोई कारण भी नही। दूसरे जो दार्शनिक हैं उनका मन हैं जगत हैं– किन्तु प्रत्यक्ष नही अनुमाननीय है।

कुछ बौद्धमतवादी लोग मानते है यह जगत न प्रत्यक्ष है न अनुमाननीय है यह सब क्षणिक विज्ञान धर्म हैं तो इन्होने विज्ञान कोही सबकुछ मान लीया। हमारा मत है सबकुछ है अन्दर माया शक्ति से ये जगत बाहर कल्पित दिखता हैं। ऐसे उदाहरणके लिये समझो अपने स्वप्नमें जो कुछ भी दिखा रखा हैं वह सब अन्दर ही दिख रहा है– किसकी महिमा से दिखता हैं तो कहना पडेगा संस्कारो की महिमासे। कभी कभी पृथ्वी जल तेज़ वायु सुन्दर पर्वतादि– सुन्दर शहर हमारो आने जाने वालो मनुष्यने दिखा– तो मायाने तुम्हारी बुद्धिके अन्दर सब कल्पित किया माने ज्ञानके अन्दर यह सब कल्पित हुआ।

यह जो कुछ प्रपंच भास रहा है वह ज्ञानके अन्दर भास रहा है किन्तु प्रतीति बाहर होनेसे यह सब मिथ्या है– ज्ञानं क्षणिकम– यह बौद्ध मत है।

एक क्षण में ज्ञान उत्पन्न हुआ फिर कर्ता बना भोक्ता बना फिर नष्ट हुआ तो– सोचो ज्ञान जो कर्ता है भोक्ता नही हुआ– तो यह तो अव्यवस्था उत्पन्न हो जायेगी।

कर्म करेगा कोई भोगेगा कोई-तो अव्यवस्था ही तो हुआ किन्तु ऐसा नही। किसी ने पूछा– हे भगवन् इस क्षणिक विज्ञानको जाननेवाला कौन हैं? क्षणिक विज्ञानतो इसको जान सकता नही क्योंकि उत्पत्ति–स्थिति और लय के लिये तीन क्षण ज्ञाताकी स्थिति को मान लियातो विज्ञान क्षणिक नही हुआ– इसलिये ब्रह्म-सूत्र भाष्य में जगद्‌गुरू शंकराचार्य ने इस क्षणिक विज्ञानका खंडन किया हैं क्योंकि वैदिक परंपरामें श्रुति भगवती कहती हैं नित्यम् विज्ञानम् ब्रह्म।

श्रुति भगवती ज्ञानको नित्य कहती हैं।

अगर विज्ञानको क्षणिक हैं ऐसा ही मान लिया जायेतो सोचो जिस बालक को स्कूलमें पढने भेजा आज पढा कल भूल गया– ज्ञान खतम– ऐसे ही २० वर्ष तक भी पढा तो भी इसको क्या मिलेगा? रहेगा कुछ अगर ज्ञान क्षणिक हैं तो? किन्तु ऐसा नही– यह पुस्तकको जो पढा हैं उसके शब्दो को तो भूल जायेगा– किन्तु उससे जो ज्ञानको पकडा हैं वह तो स्थिर रहेगा इसलिये तो अमुक विषय-

का उसको विशेषज्ञ माना जाता है इसलिये कोई जीवननें भी ज्ञानको स्थिर तत्व मानना पडेगा । इसलिये ज्ञान एक को स्थिर तत्त्व माना गया ज्ञानको प्रकट करनेवाले जो साधन हैं वह बदलते रहेंगे ज्ञानको तो हर हालमें तुम्हे चाहिये ।

जैसे मानलो यह शरीर है बाल्यावस्थामें भोगदेनेवाला कर्म बाल्यावस्थामें आयेगा और चला जायेगा– ऐसे ही कुमारावस्थामें भोगदेनेवाला कर्म कुमारावस्थ में आयेगा और चला जायेगा– ऐसे ही युवावस्था और वृद्धावस्था में कर्म बदला शरीरका सकल भी बदली तो बाल्यावस्थाको तो सुविचार का उदयकाल ही समझो किन्तु जैसे जैसे बढतें जाते हैं चिन्ताकी भेट प्रकृति देती जाती है अगर ज्ञानसे इसका (चिन्ताका) बेलेंस नही हुआ तो चिन्ताका हृदय मे बहुत बुरा असर पडेगा तो माने हर हालत में तुम्हे ज्ञान तो चाहिये ही । भगवान बुद्ध के दूसरे अनुयायी शून्यवाद में माननेवाले कहते हैं– बाहर जगत कुछ भी नही और विज्ञान भी क्षणिक तो क्यों न शून्य को ही सृष्टिका कारण माने ले ।_ शून्य ही तत्व है– वही सृष्टिका आदि कारण है ।

इसका मतलब असत् से सत्की उत्पत्ति इसलिये आचार्य शंकराचार्यजी इस विचारका खंडन करते हुऐ– कहते हैं– क्या शून्य वह शून्य अपने ही बोलेगा कि मैं शून्य हुं ।

कि दूसरा बोलेगा? तो शून्य बोलनेवाला तो शून्यका साक्षी हुआ– वह तो शून्य से निराला है ।

महाऋषि कहते हैं जब शून्य नही हो सकता तो शून्य कारण भी नही हो सकता ।

कथमसतः सज्जायेतेति । उस असत्से सत् कैसे उत्पन्न हो जायेगा ।

तो शिष्य ने कहा हे भगवन् अब आपही बोलते जायेंगे की मेरी भी सुनोगे ? तब महाऋषि कहते हैं बोलो तेरी भी सुनेगे ।

तो शिष्य कहने लगा हे भगवन्– बीजको किसान खेत में बोता है– जब–तक वह बीज अपने आकारमें बन्धा हुआ है अंकुर उत्पन्न होगा क्या ? तो कहना पडेगा बीजका नाश होगा तब अंकुर उत्पन्न होगा । आचार्य ने कहा हे बेटा बीजके आकार का तो नाश हुआ किन्तु बीजावरण तो वहां बैठा है । बीजके दो हिस्से हो जाते हैं उसको बीजावरण कहते हैं । इसलिये महाऋषि कहते हैं सत् ही पहलेथा– वही जगतका कारण भी बना । शिष्य पूछता है हे भगवन् कारण तो सत् है किन्तु सृष्टि के सर्जन के लिये जो दूसरे साधन सामग्री कहां से आयी-

जैसे आप एक मकान बनाते है तो– इंट–पत्थर– मीट्टी– सीमेन्ट इत्यादि सब साधन चाहिये– तो यहाँ पर कहते है– परमात्माको सृष्टिके सर्जन के लिये कोई दूसरे साधनादि की आवश्यकता नही पडती– इस बातको तीन दृष्टान्त देके समझाते है

> यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णते च
> यथा पृथिव्यामाषधयः सम्भवन्ति ।
> यथा सतः पुरुषात्केशलोमानि
> तथाऽक्षरात्सम्भवतीह विश्वम् ।।७।।
> (मुण्डकोप. १–१–७)

परब्रह्म परमेश्वर ही इस जड चेतनात्मक संपूर्ण जगत्के निमित्त और उपादान कारण है पहले मकडीके दृष्टान्तसे यह बात कही गयी है कि जिस प्रकार मकडी अपने पेटमें स्थित जालेको बाहर निकालकर फैलाती हैं और फिर उसे निगल जाती है, उसी प्रकार वह परब्रह्म परमेश्वर अपने अन्दर सूक्ष्मरूपसे लीन हुए जड चेतनरूप जगतको सृष्टिके आरम्भमें नाना प्रकारसे उत्पन्न करके फैलाते है और प्रलयकालमें पुनः उसे अपनेमें लीन कर लेते है। दूसरे उदाहरणसे यह बात समझायी है कि जिस प्रकार पृथ्वीमें जैसे–जैसे अन्न. तृण, वृक्ष लता आदि ओषधियोंके बीज पडते है, उसी प्रकारकी भिन्न–भिन्न भेदोंवाली ओषधियाँ वहा उत्पन्न हो जाती है–

उसमें पृथ्वी का कोई पक्षपात नहीं है; उसी प्रकार जीवोंके विभिन्न कर्मरूप बीजोंके अनुसार ही परमात्मा उनको भिन्न–भिन्न योनियोंमें उत्पन्न करते है। अत उनमें किसी प्रकारकी विषमता और निर्दयताका दोष नहीं है।

तीसरे मनुष्य शरीरके उदाहरणसे यह बात समझायी गयी है कि जिस प्रकार मनुष्यके जीवित शरीरसे सर्वथा विलक्षण केश, रोम और नख अपने आप उत्पन्न होने और बढते रहते हैं–उसके लिए उसको कोई कार्य नही करना पडना उसी प्रकार परब्रह्म परमेश्वरसे यह जगत् स्वभावसे ही समयपर उत्पन्न हो जाता है और विस्तारको प्राप्त है इसके लिए परमात्माको कोई प्रयत्न नहीं करना पडता है। उसके स्वरूपमें जरा भी परीवर्तन नही होता। इसलिये आत्माकी सत्ताको नित्य स्वीकार करना ही पडेगा नही तो लोकव्यवहार भी नही बन सकता जैसे शरीरका आकार बदले ऐसेही आत्मा भी बदलेतो माता कौन पिता कौन रहेगा ? तो मातृ–पितृ व्यवहार नही बन सकता।

एक वृद्ध है मानलो वह अपने पौत्रको देख रहा है–अपनेको दादा कहे है और अपनी बाल्यावस्थाकी स्मृति भी कर रहा है–मैं कभी बच्चा था तो

मालुम क्या पडा की बाल्यावस्था का अनुभव है– तो स्मृति भी है तो स्मृति का द्रष्टा भी है । वह आत्मा असंग है उसमें कोई परिवर्तन नही–जैसेका तैसा अन्तर आत्मा है । दूसरे दृष्टांत से फिर समझाया को जैसेही वर्षा हुई तो पृथ्वी में से पेड पौधे अपने आप ही नीकल आये तो क्या समझे–यह मिट्टी ही अब उस आकार को धारण कर लिये हमारा यह शरीर भी क्या है ? फल फुलकी सकलमें जो मिट्टी Refine हो गई तो हमारा भोजन बन गई–और जब भोजन रूपसे हमारे अन्दर Refine हुआतो चेतनके करंटमें आतेही प्यारा लगनेलग गया । शरीरके अन्दर जाने पर यही भोजन हम–हम–हम करने लगा तो ये शरीरके बाहर जो मिट्टी रूप है वह हम ही है । वेस्ट आउट जो फिर मिट्टी में मिला फिर Refine हुआ–फिर वही चक्र इसीको कहते है संसार चक्र मनुष्य शरीरको इसलिये मल मूत्र का थैला कहते है–किन्तु चेतन तत्वका ज्ञान होना है इस योनिमें और किसी योनिमें होना नही इसलिये इस मनुष्य शरीरको मोक्ष का द्वार कहा किन्तु अगर इन्द्रियोके भोगोके पीछे लगे रहे तो मुक्ति होनेवाली नही ।

जैसे किसी देशमें राजा ने सोचा इस अंधेको क्या सजादे देतो कहा इसको किल्ले के अंदर बंध करदो और कहो अगर तुं खजाना ढुंढके बाहर निकल जायेगा तो तुं छुटी पा जायेगा–तो वह जो अंधा है अकल तो है उसमें दिवालको पकडके चलने लगा और सोचा जब दरवाजा आयेगा बाहर नीकल जायेंगा किन्तू चलते चलते जब दरवाजा आया तो इसको खुजली आयी शीर पर तो खुजाने लगा लगा और चलता रहा तो फिर दरवाजा छूट गया–तो वही चक्कर फिर चालू ।

तो मनुष्य शरीर मोक्षका द्वार है और सारी योनि ये मायाका किल्ला ही समझो इस किल्लो में भटकते भटकते ये मोक्ष रूपी मनुष्य शरीर में आयातो यहांभी इन्द्रियो की की खुजली के पीछे रहातो फिर वोही चक्कर शुरू । इस-लिये मनुष्य प्राणी के लिये संयम तप, त्याग का उपदेश है । इसलिये अभ्यास करो और वैराग्यको धारण करो ।

जैसे पृथ्वी से सारी वनस्पति उत्पन्न हुई और पृथ्वीमें ही लय हो गई ऐसी ही अक्षर परमात्मासे यह विश्व प्रगट हुआ है । वहां क्या सामान है तो कहते है स्वप्न में सब सृष्टि दिखती है कि नहि ? कौनसा सामान है है वही तो कहना पडेगा कल्पना रूप ही है सब सत्य तत्व कोइ नही वहां ।

वेदान्तमें एक दृष्टि सृष्टि सिद्धात है ।

जब देखा तो तुम्हारा, और नही दिखा तो तुम्हारा कुछ भी नही ।

तो अपने विचार कर रहे थे की जगत के भूलमें जो त व है जिससे यह जगत उत्पन्न हुआ वह सत् हैं–असत हो नही सकता

सत्वेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाऽद्वितीयम्

एक है वह तत्व उसमे कोई सजातीय भेद नही क्योंकि सजातीय भेद वहां होगा जहां आकार होगा तो यहाँ–ब्रह्म–आत्मामें कोई आकार ही नहीं तो कोई भेद भी नही ।

तो विपक्षी कहने लगे तब विजातीय भेद तो है ना ? ये जडप्रपंच तो चेतन से जुदाही हैं तो विजातीय भेद हो गया तो कहने लगे नही विजातीय भेद भी यहां कोई नही क्योंकि जड प्रपचतो माया मात्र है उसमें कोइ उत्पन्न ही नही हुआ – माया केवल देखने मात्र को हैं प्रतीति मात्र हे – हैं कुछ भी नही इसलिये विजातीय भेद भी नही ।

तो आगे कहने लगे भले सजातीय – विजातीय भेद नही किन्तु स्वगत भेद तो है ना ?

तो कहते हैं कोई माताकें पेट में जब आता है – सब निराकार होता है तो स्वागत भे भी नही । शरीर के अवयव हाथ–पैरड–उंगली आदि में भे भेद दिखाता है किन्तु इस अवयव को जीव मेरा है ऐसा कहेता है– यह मैं हुं ऐसी कभी नही कहता ।

जो आत्मामें सजातीय – विजातीय और स्वगतरि कोई प्रकारका भेद नही किन्तु इसमें जो भेद देखता है वह मृत्युको प्राप्त होगा । इसलिये सावधान करते हुए श्रुति भगवती कहती है

यह माने ब्रह्ममें जाना कोई वस्तु नही एक अखंड तत्व है किन्तु उसमें जो नाना देखेगा वह वारवार जन्मेगा और मरणको प्राप्त करेगा ।

तो जगत के मुलमें एक अखंड तत्व है – उसका आज तुम सीधे हुए ध्यान करो कल इस वात को और आगें समझायेगे ।

हरि ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं .६

ॐ तदैक्षत बहु स्यां प्रजायेयेति तत्तेजोऽसृजत । तत्तेज ऐक्षत बहु स्यां प्रजायेयेति तदपोऽसृजत । तस्माद्यत्र क्व च शोचिति स्वेदते वा पुरुषस्तेजस एव तदध्यापो जायन्ते ।।३।।

ॐ ता आप ऐक्षन्त बह्व्यय स्यामः प्रजायेमहीति ता अन्नमसृजन्त । यस्माद्यत्र क्व च वर्षति तदेव भूयिष्ठमन्न भवत्यद्भ्य एव तदध्यन्नाद्यं जायते ।।४।।

(छान्दो ६-२-३ । ४)

दार्शनिक का यह नियम बडा सुन्दर है-जिसके अज्ञानसे जिस वस्तु स्फुरित होती है वह ज्ञानसे उसकी निवृत्ति होती है ।

वेदान्त में पारमार्थिक और प्रातिभासिक ऐसे दो सतायें स्वीकार की गई किन्तु कुछ मंदप्रज्ञ मनुष्य प्राणी ये अनुग्रह करके आचार्य शंकराचार्यजी ने तीसरी व्यवहारिक सत्ताको भी स्वीकार किया क्योंकि जिनके अभी यह मेरा घर, मेरा बेटा, सब सत् प्रतीति होते है परिवार में मोहवाला है- वहस्थिरताका अनुभव करता है कल जिसको देखा था- उसीकोतो आज देखा रहा हुँ ऐसे व्यवहारमें सत्य बुद्धि है वह जन्ती से- यह सब जगत प्रपंच प्रतीति मात्र- प्रातिभासिक- मिथ्याही है ऐसा स्वीकार नही कर सकता । उनये अनुग्रह के लिये कहा-व्यवहार

होवे तबतक जगत पदाथ व्यावहारिक सत् है । समझो– जवानी कबतक सत् तो जबतक युवावस्थाका काम है– तबतक । युवावस्थामें तो मस्तीसे आख बन्द करके चलते है– किन्तु जैसे ही देखके पैर रखना शुरु किया तो समझो युवावस्था गायब– बुढापा आ गया– तो ये युवावस्थाभी केवल देखने मात्र कोही थी– देखते देखते गायब हो गई– तो व्यावहारिक और प्रातिभासिक यह दोनोही सत्ता मिथ्या है– पारमार्थिक सत्ता ही सत्य है ।

स्वप्नमे शत्रुभी बना तो मन ही है–और मित्र भी बना तो मन ही है एक ही मन दृश्य भी बना– और द्रष्टा भी बना जिसका प्रकाशमें मन इतनी लीला रच रहा है वह प्यारा–तों मुमुक्षु जो है उस साक्षीका ध्यानकरे वह साक्षी मन और मनके विकाश से न्यारा है

वैदिक सिद्धान्त

मनसे जैसा ध्यान करोगे– वाणीमें वैसा आ जायेगा । हम किसको प्यार से देखते है तो मनमें जिसके लिये प्यार की कल्पना है– ऐसेही सारी इन्द्रियोके विकास पहले मनमें कल्पना आती है– इसलिये यह वैदिक विचार है की मनमें कल्पना जैसी आयेगी वैसी ही इन्द्रियों से व्यवहार होगा–। ज्ञान प्रियाऽप्रिय वस्तुका प्रकाश करता है तो मोह शोक चल पडा इसके पीछे अगर राग–द्वेष नही है तो वहां विवेक ज्ञान है । जो भी व्यवहार होगा कर्तव्य बुद्धि से होगा– तो वह अपना भी भला करेगा दूसरोका भी भला करेगा ।

जो अपनाही भला नही कर शकता– अपने कोही देख नही शकता– बह तो बेहोश हो गया– तो वह किसीका भी भला नही कर शकता ।

शरीर रूपसे तो अपनेको समझ रहे है– अयमहमस्मि ऐसे निश्चयवाले को कहो यह बेटा वह तो जन्मके बाद है अगर जन्मके पहेले तुम नही थे तो आये कहांसे ? इसलिये वैदिक परंपरामें आत्मा जो है शाश्वत सत्य है । इसको प्रधान सत् कहते है । और यह आत्मा ही पारमार्थिक सत् है क्योंकि ये परम अर्थ है– उससे उत्तम कोई नही ।

अर्थका मतलब है अर्थ्यंते प्रार्थ्यते इति अर्थ । इन्द्रियो के जो अर्थ है रूप, रस, गन्ध शब्द और स्पर्श ये सब क्षणभंगुर है इन सबका जो भोक्ता है वह आत्मा परमार्थ सत् है । आत्मामें भोक्ता भावकी कल्पना उपाधिसे है और कल्पना प्रतीतिमात्र ही है ।

इसलिये भोग्य के संबन्धसे ये भोक्ता– ।ग्रमल म ये भोक्ता नही चेतना मात्र ही है । वह परमार्थसत् ग्रात्मा है । जिसको हम चाहते है ग्रपने लिये चाहते है ग्रहमास्पद ग्रात्माके लिये ही चाहते है । ग्रात्मा सबसे प्यारा इसके लिये सब है ये किसीके लिये नही इसके लिये जो बाधा करेगा उसको हटा देगे–

मन जैसे ग्रद्वय है दर्शन, द्रष्ट, दृश्य सब मन ही है । स्वप्नमें ऐसी ही जाग्रत में भी सब मनका विलास मात्र है । जिससे हम प्यार करते है– तो कभी झगडा भी करते है– तो जैसा हमारा मन जायेगा– वैसा ही मन ग्रायेगा– । क्रोधादिको दोषकहा– पाप कहाँ– किन्तु प्रकृतिमें जोभी वस्तु है– बडे विवेकसे रखी गई है– क्रोध भी tonic injection होता है– शत्रुके साथ ग्रगर लडना है तो क्रोधकी ग्रावश्यकता है– क्योंकि ये शूरवीरताको जन्म देता है ग्रगर सैनिक के ग्रन्दर क्रोध यदि उत्पन्न नही हुग्रा तो भय उत्पन्न हो जायेगा तो लडाई ये कर ही नही शकता– भाग जायेगा– । तो मात्रामें क्रोध भी चाहिये– शूरवीरताकी रक्षके लिये ।

ग्राप कहोगे शत्रु प्रतिभासिक है तो क्रोध कोभी यहाँ प्रतिभासिक ग्रौर लडाई भी यहा प्रतिभासिक ही मानो वैदिक सिद्धान्त के ग्रनुसार जैसी मनमें कल्पना ग्रायेगी वैसी ही वाणी होगी तद्नुसार ही कर्म होंगे– कर्म का भोग हुए विना मुक्ति नही ।

कोई कोई कर्म ऐसा होता है सो जन्म तक भोग नही हुग्रा तो वह, कर्म पीछे छिपा हुग्रा पडा रहेगा । ग्रौर देखता रहता है– कर्ता कहाँ कहाँ जाता है । समय जब ग्राता है तो कर्म खटसे ग्रपने कर्ता को पकड लेता है उसके लिये महाऋषि वेदव्यासने बडा सुन्दर दृष्टान्त भी दिया–

कोई बडे मैदान में हजारो गौ चर रही है– सायंकाल को उनके बच्चे को छोड देगे– तो बच्चे सब ग्रपनी ग्रपनी माँ को खोज लेगा दूसरी गौका दूध नही पीयेगा– तो ग्रब बताग्रो इसको किस स्कूलमें ट्रेनिङ्ग मिली है भला ? तो मानना पडेगा कि इसके ग्रन्दर स्मृति है कि मेरी माँ है ।

ग्रौर स्मृति क्यों है । तो कहते है ग्रनुभूति है– कि मेरी माँ ग्रमुक है ग्रौर सारे स्वरूप की ग्रनुभूति होने से उसने उसको खट पकडा ।

तो मतलब क्या निकला कि ज्ञान जो है स्थिर तत्त्व है । जो भी ज्ञान ग्राया उसने चित्तके ग्रन्दर छाप पडा दिया– जैसे ग्रपनें लाहामें मुहर मारदे । कर्म-

कर्म ऐसे ही हमारे कोमल चित्त पर छाप मार देते इसको ही संस्कार कहते है।
इस संस्कोरका जब तक भोग होता नही ये मरेगी नही– इसलिये –

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन।
ज्ञानाग्नि : सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा
(गीता ४–३७)

भगवान श्रीकृष्ण कहते है हे अर्जुन– अच्छा या बुरा जो कर्म हमने किया वह तो खतम हो चूका है किन्तु संस्कार रूपसे बाकी है। उस संस्कार को तो ज्ञानाग्नि: ही खतम कर शकता है।

उतना ज्ञान अगर जीवनमें आयेगा नही तो शुभाशुभ कर्म फिर पकडके अपने कर्ताको सुख दुःख देना प्रारंभ कर देता है।

इसलिये कर्मको अदृष्ट कहेते है– वही सुख– दुःखका मूल कारण है किन्तु वह जो कर्म है वह निमित्तको दृष्ट बनाता है– सुख दुःख देनेवाला। अच्छा निमित्त होगा तो प्रशंसा होती और अगर दुःख निमित्त होगा तो निन्दा होती किन्तु उस अदृष्ट कर्म जो है उसकी और उसकी नजर नही होती इसलिये गाडीके पैये की तरह घूमते रहते है

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे शयनम्।
इह संसारे खलु दुस्तारे कृपयापारे पाहि मुरारे
भज गोविन्दं भज गोविन्दं भज गोविन्दं मूढमते ......

ब्रह्म तत्त्वका विचार करनेका मतलब ये नही की तुम भगवत्स्तुति नही करो– भगवानकी उपासना नही करो–। भगवान की उपासना तो करो। अपनेसे बडे की उपासना तो करो किन्तु लक्ष्य बनाओ निर्गुण निराकारको। उसीके अनुसार जीवनको लेके चलो। मायापति भगवान है उसकी उपासना करो यह शुद्ध भावना ही उपासना है। भगवानके प्रति सद्भाव सुद्धभाव है वह उपासना है। तो जप उस मायापति भगवानकी कृपा होगी तो– इस तत्त्व विचारकेद्वारा कर्म बन्धन से हम मुक्ति पायेगे– आगे कल इसका और विचार करेगे अब दो मिनेट ध्यान करो– उस सत् चित् आनन्द रूप परमात्माका अपने हृदय में।

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. १०

ॐ तदैक्षत बहु स्यां प्रजायेयेति तत्तेजोऽसृजत । तत्तेज ऐक्षत बहु स्यां प्रजायेयेति तदपोऽसृजत । तस्माद्यत्र क्व च शोचति स्वेदते वा पुरुषस्तेजस एव तदध्यापो जायन्ते ॥३॥

ॐ ता आप ऐक्षन्त बह्व्यः स्याम प्रजायेमहीति ता अन्नमसृजन्त । तस्माद्यत्र क्व च वर्षति तदेव भूयिष्ठमन्नं भवत्यदभ्य एव तदध्यन्नाद्यं जायते ॥४॥

(छान्दो ६-२-३ । ४)

तो बात आयी– जगत के मूलमें जो तत्त्व है उस तत्त्वके बारेमें महाऋषि कहते है ये सत् है । ये असत् हो नही शकता । इसलिये उस सत्‌मे मनकी स्थिति को ले आओ । ये जो सत् है वही मायापात ईश्वर है । मायापति होनेसे परमात्माने ईक्षण माने सकल्प किया बहु स्याम प्रजायेयेति– बहुत होनेकी इच्छा परमात्माने की । यही संकल्प आज हमलोग में भी विद्यमान है । परमात्मा में ज्ञानशक्ति, संकलपशक्ति और क्रियाशक्ति है यह तीनो शक्तिसे ही यह प्रपंच खडा हुआ ।

एक स्वरूप ही अनेक स्वरूपोंसे दिखनेलगा– एकतत्त्व है अनेक रूपसे दिखनेलगा । तो अनेक रूपसे जो इसकी प्रतीति है वह मायासे है ।

जैसे है रस्सी कभी रस्सी नही दिखी (जोसत् रूप है) तो सर्प दिखा रस्सी में– (अज्ञान आवरणसे) तो भयके मारे भागे– तो चोट लगगई– वह तो धीरे-

धीरे ठीक होगी– बादमें पता चलेगा अरे वह तो रस्सी ही थी सर्पादिकी कल्पना तो प्रतीतिमात्र थी– किन्तु शोक–मोह भी हुआ ।

मूल देवता है वह इच्छा कर रहा है कि मैं अनेक रूपसे होजाऊ तो ये इच्छा शक्ति तो आयी तो इसके पहेले समझोकी ज्ञानशक्ति प्रगट हो चूकी है ।

जैसे जीव के अन्दर जो ज्ञानशक्ति दिखती है वह बुद्धिका वृत्तिरूप ज्ञान दिखना है । बाह्याकार जो बुद्धिकी वृत्ति है रूप, रस गंध शब्द– और स्पर्श को देखती है । ऐसा भी समझो जैसे यह इलेक्ट्रीक वायर है इसका ज्यादा महत्त्व नही किन्तु इसके अन्दर अगर इलेक्ट्रीक करंट आ गया तो जहांजायेगा प्रकाश करेगा– बल्ब में पहुँचा तो प्रकाश किया– पखेमें पहुँचा तो हवा को गतिमान किया– इन्जीनमें गया तो उसको गरम कर दिया सब क्रिया एक करंटके अधीन है । तो यहाँ पर बुद्धि की जो बाहयाकार वृति है उसको तो वावर और तुम्हारी आत्माका जो चिदाभास है यो reflectl हो रहा है बुद्धि वृत्ति जो विषय देशमें गई तो उसने तुम्हारे में विषयका संबन्ध कर दिया– चिदाभासने आवरण भंग किया और वस्तुका प्रकाश कर दिया– यह विषयका ज्ञान । जब विषयका ज्ञान हुआ तो प्रिय है तो प्यारा हुआ तो प्रवृ त्त होगी - इच्छा होगी फिर उसकी रक्षा करेगा प्यारा नही तो वहाँ से पीछे हट जायेगे । जहाँ तक जीवभाव है वहाँ तक प्रियकी रक्षा अप्रियसे अपनेको बचाना वृत्ति रहेगी ।

तो बाह्याकार वृत्तिमें चिदाभास वोही प्रकाश इसलिये ज्ञानकी रक्षा करना धर्म है ।

कोमल सत् कर्म करो तो बुद्धिकी वृत्ति स्थिर होगी तो ज्ञान भी सुन्दर होगा । कठोर कर्म करोगेतो बुद्धिकी वृत्ति कठोर होगी तो ज्ञान भी ठीक नही होगा ।

सारी इन्द्रियोमें वाग इन्द्रिय लीडर है– इसवाणीसे जरासा कठोर बोलो तो चित्तमें कठोरता आजाती है । मीठीवाणी बोलोगे तो चित्त प्रसन्न हो जाता है– उसके पास सब प्यारसे चले जाते है इसलिये व्यावहारिक जीवनमें इन्द्रियोसे कठोर प्रवृत्ति मत करो– कठोरवाणी मत बोलो । मिठाई बड़ी अच्छी होती इसलोकम मीठाई तुम्हारी जीभको मीठा कर देगी– सोम्य कर देगी ।

इसलिये ऋषि भगवानसे प्रार्थना करते है

"जिह्वा मे मधुमत्तमा" । मेरी जिह्वा मधुरभाषिणी हो ।

जैसे लोक व्यवहारमें भी अगर पति– पत्नी एक दूसरेसे मीठे वाणी बोले और प्यार से रहेंगे तो जो जो आत्मा जन्म लेगी वह भी अच्छी वाणी ग्रहण करेंगे तो संयमसे सब सुखी रहेंगे– तो यहाँ भी दार्शनिको का वह नियम सिद्ध होता है कारणके अन्दर जो गुण होता है कार्यमें आ जाता है– जैसे धागा अगर लाल है तो उससे जो कपडा तैयार होगा– वह भी लाल ही होगा। स्वर्ण से जो भी चीज बनेगी पीली ही बनेगी– कंकण– कुंडल इत्यादि क्योंकि स्वर्ण स्वरूपसे पीला है तो कार्य कारण कोई जुदा तत्त्व नही–यह वेदका मूल सिद्धान्त है। यह जगत परमात्मासे बाहर कुछ भी नही। इसका कारण परमात्मा है तो परमात्मा ही जगत के रूपमें खडा हो गया। वे परमात्मा सत्– चित् आनन्द रूप है इसलिये जगतका कणकण प्यारा लगता है और सत् लगता है।

चेतन यहाँ प्रकट हो गया तो ये भोक्तारूप मालुमपडा और जड सत् रूप ही रहा तो भोग रूप मालुम पडा भोगको लेने छोडनेवाली इन्द्रिया अगर अच्छी है तो ठीकसे भोग लेगी। इसलिये वें परमात्मा सत् है– जगत भी बडा सुन्दर दिखता है। मूल तत्त्व ही जगदाकार है। सोना जैसे कहीं कंकण बना कहीं चूडी व्यवहारमें एक को कंकण और दूसरेको चूडी कहेंगे– किन्तु सबमें दृष्टि– स्वर्णमें दृष्टि रखके व्यवहार करना ज्ञान है और मूल तत्त्वको भूलको व्यवहारमें– नाम–रूप कोही मुख्य मानना अज्ञान है।

यही जन्म मरणको कारण भी है।

जब ये सत् है– चेतन तत्त्व है तो जगतके मूलमें ये जड हो नही सकता।

कुछ सांख्यदार्शनिक– त्रिगुण प्रकृति कोही जगत की स्रष्टा रूपमें स्वीकार करते है– वे मानते है प्रकृति ही जगत बनाती है पुरुष जो है निर्लेप है। पूछा किसीने प्रकृति फिर ये जगतको कैसे करती है? तो कहेते है चेतनकी छायामें वह जगतकी रचना करती है। वे जगतके कर्तृरूपमें प्रकृतिको स्वीकार करते है।

तदैक्षत बहु स्यां प्रजायेयेति तत्तेजोऽसृजत।

पहले परमात्माने इच्छा किया– मैं बहुत रूपसे हो जाऊ तो जैसे सोनेका बहुत रूपसे दिखना– अंगूठी–कंकण चूडी इत्यादि ये सब नाना रुपोतृ तो ये तो जूडा है असली रूपसे तो वह सोना ही है। किन्तु चूडीको अंगूठी नही कहे सकते अंगूठी को कंकण नही कहे शकते– किन्तु स्वर्ण ही सत्य है बाकी सब वाणीका विलास मात्र है। नाना विकार माने नाना नाम रूप मिथ्या है।

मिट्टी ही नाना रूपोसे भास रही है जैसे ये गुलाबका फुल मिट्टीही है किन्तु व्यवहारमें इसका उपवोग है यह गुलाफका फुल किसीको दोगे तो प्रसन्न हो जायेगा और यूंही एक चूटकी मिट्टी ही लाके रखादो– सामने तो । कहेगा स्क्रू ढीला है । मतलब क्या निकला । असली तत्त्व व्यवहारमें उपयोगी नही किन्तु असली तत्त्व से जिस व्यवहारमें शोक– मोह में बन्धे हो उससे मुक्ति मिल जायेगी। क्योंकि व्यवहारही जब मिथ्या है तो शोक– मोह भी मिथ्या है ।

असलीके बिना नकली नही हो सकता । वेदान्त विद्याके एक महान विद्वान लिखते है

असते वर्त्मनि स्थित्वा......

शरीर ही मार्ग है । जीवकी ब्रह्मभावमें खोज करना हो तो ईस शरीर में मिलेगा ? मार्गका मतलब क्या मार्ग्यते अन्विष्यते इति मार्ग ।

जिसके द्वारा कुछ खोज करे ! इस लोकमें हमको पूरी–परोठे लोग खिलाते है क्यु ? इस शरीर की कृपा से अगर एक फुटकी कही पूछडी लग गई होती तो कोइ पूरी परोठे देगा ? शरीरके आनेपर यह सल मिल रहा है । शरीरकी रक्षाकरे । कर्तव्य है किन्तु केवल इतना ही किया तो कुछ कमाई हुई नही । सत्यकी समीक्षा करो सत्यको बिना झूठ नही टीक शकता ।

ड्रामा में कोई लडका को लडकी पार्ट मिला और अगर अपनेको सचही लडकी मानने लगेतो उसका मानसिक उपचार करना पडेगा–विस्मृति को दूर करना पडेगा । तो ईसी तरहा जगत यह मायाका सामान है कोई लडका बना है कोई लडकी बना है किन्तु अपने असली स्वरूपको विस्मृत कर गया और अपने अंदर नाना प्रकार के विकारो की कल्पना करने लगा मैं सुखी हु–मैं दुःखी हु संसारी हु ।

ऐसे ही नाना प्रकारकी कल्पनाके अनुसार कर्म होने चले जाते है भकडेका जालमें जीव फसता जाता है अनेक कर्म जो इससे होतो है वह एक नही अनेक जन्म नही सैंकडो जमोंतक उसका भाग होता है ।

कर्म मीमांसा भी है कि वेटा देखो कर्म में गलती नही करना । ईस आंखसे हम किसीको क्रोधसे देखते है तो हमको वह बूरा बोलेगा और अगर प्यार से देखते है तो अच्छा बोलना है कि नही ? तो तुम्हारेको अच्छा या बूरा बननेको लिये कोई सकल बहारसे नही लानी अपने मनको ठीक रखो अपनी चेष्टा

को ठीक रखो ऐपा करनेसे तुम्हारे अंदर स्मृति जाग्रत हो जायगी की असली तत्त्व कौन है जब ईसके अंदर असली भाव प्रगट हो जायेगा तो आत्मैंवाहमस्मि ब्रह्मैऽवाहमस्मि मैं ब्रह्म ही हु तो मेरे अन्दर जो जीवभाव है कर्ता भोक्ता भाव है ये सब आभास मात्र है। ये मिथ्या समझने पर भी व्यवहारमे बाधा नही पडती।

तो असत् शरीर में बैठके सत्यकी समीक्षा करो तो उस तत्त्वको मुमक्ष कैसे समझे तो मुमुक्षुके हृदयमें कार्य कारण भाव बैठा है किसीको वह कार्य किसीको कारण समझाता है। कर्ता के बिना जगत होता नही। परमात्माने इच्छा किया मैं बहुत हो जाऊ तो नाना रूप प्रगट होते वे तो नकली ही होंगे।

जैसे कोई चतुर घरवाली होती है ना–मानो कोई गेस्ट आ गया अचानक घर में सब्जी नही है तो घरकी पोजीशन की भी रक्षा करती है–तो उसने चन्नेका आटा लेके पकोडी नीकाल ली पकोडीका सब्जी बना दी–और चनकी और कोई दूसरी चीज बनाबी खानेवाला सब समझता है–ये सब चनाही है किन्तु भेराइटी तो बन गई एक वह कहे नही शकता देखनेको अनेक हो गया।

इसी तरह ये जो माया भगवती के संबंधरो परमात्माने इच्छी की तेज की उत्पत्ति हुई ततेओऽसृजन। श्रुति यहां सृष्टि कम समझाते हुए कहती सब से पहले तेजकी सृष्टि की परमात्माने तेजको यहां भूल कहा क्योंकि तेज चक्षुका विषय है हम देख शकते है अन्य उपनिषद में परमात्मासे सब से पहले आकाश उत्पन्न हुआ फिर पृथ्वी आदि सब भूत फिर औषधि और पुरुष– तो यह सब आत्मा रूप दिखनेलगा चेतनको देखने के लिये कहाँ जाओगे ? इस शरीरके अन्दर ही प्रवेश तरना पडेगा– इरना लम्बा चौडा ब्रह्मान्ड है ये विराट परमात्माका शरीर– इसको तो हम अपनी इन आंखोसे देख नही शकते इन्द्रियोमें इतनी शक्ति नही– इसलिये अपने हृदयमें प्रवेशकरो

अंत:शरीरे ज्योतिर्भय: पुरूषो

बुद्धि के अन्दर हृदयाकाशमें ध्यान करो– उस सत्यको पकडो। इन्द्रियोसे तो बाहर देखते हो– खाते हो खेलते हो और सो गये फिर जाग गयेतो फिर खानेकी इच्छा उसकी और ही ध्यान आया ऐसे ही करोगे तो जीवन भर– ऐसे ही आयु चली जायेगी। सृष्टि क्रम दो तरहासे कहा गया कहीं सृष्टि तेजसे तो कहीं आकाशसे उत्पत्ति बताती है– क्योंकि सृष्टि अगर सत्य हो तो कोई इसका क्रम हो– किन्तु ये सत्य तो है नही। वहाँ पर क्रम भी सत् नही वह क्रम भी देखने मात्र काही है।

ऐसे ही अपने शरीरकी सब अवस्था ओंके लिये समझो यह शरीर जन्मे तब बच्चेथे– धीरे धीरे कुमार फिर युबा और बुढा हुआ– ये क्रम देखनेमें तो आया किन्तु इसमें सच्ची कौनसी चीज नीकली तो कहेना पडेगा सब अवस्था जूठी है. देखने मात्र की ही है

तद्तेजोऽसृजत– तत्तेज ऐक्षत ।

परमात्मा तेजकी सृष्टि करके तेजके शरीरको धारण करता है तो तेजने इच्छा किया की मैं बहुत हो जाऊ जैसे बच्चा धीरे धीरे बडा हो जावेतो कहेगा मेरे लिये जोडीदार चाहिये अब जोडीदार खडा हो गया तो सासु सोचेगी मेरी बहुरानी की गोदमें बच्चा उत्पन्न हो जायेगा-- इस तरह जो है सृष्टिका क्रम चला ।

तो इस प्रकार तेजके स्वरूप को जब परमात्माने धारण किया तत्तेज ऐक्षत बहु स्याम प्रजायेयेति– तदपो सृजत । अब यस तेज स्वरूप परमात्माने इच्छा किया मैं बहुत हो जाऊ तो उसने पानीका स्वरूप धारण किया जब तक पानी नही आयेगा आगे सृष्टि नही होगी क्योंकि मेघोसे बर्षा हुई तो नीचे पानी आया-- मेघोके अन्दर जो पानी है वह तो निराकार है उसका कोई आकार नही– फिर वही पृथ्वीमें आया तो जैसे पात्रमें गया वैसा आकार पकडा उसने– एक रूपमें मिट्टी में गया तो वह पानी पृथ्वीमें जाके नाना प्रकारके पेड पौधो कीसकल में आ गया– मिट्टी तो निमित्त मात्र है– फल फुटमें स्वाद तो पानी से है । निमित्त भेद होनेसे नाना रूप देखनेमें आते है– पानी न हो तो फुलमें तो ये मिट्टी क्या करेगी ? यह जो तुम्हारा शरीर है उसको खानादाना बन्ध करदो तो इस शरीर-से कुछ भी होनेवाला नही– ।

अपने बुड्ढा किसको कहते है– खानादाना कटता चला गया– सूखे लकडे जैसा शरीर हो गया तो कहेवे बुढ्ढेको पीछे बिठाओ... खाना दाना ठीक रहेतो भीष्मपिता कहेते है कुरुक्षेत्रका युद्ध हुआ तब ८५ वर्षके थे– किन्तु दस हजार योद्धाको मात देतेथे तो कितनी बडी ताकत थी... संयमका यह प्रभाव था । पानी ही नाना रूपसे आगे बढ रहा है । फल–फ्रुट खाया तो शरीररूपसे खडा हो गया– चैतन्यके करंट में जब यह आया तो हम– हम– हम– करने लगा । तो माल आया कहींसे मालिक बन गया कोई । ऐसे ही शरीरके अन्दर पांचो भूत भारहे है

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. ११

ॐ ता आप ऐक्षन्त बह्व्यः स्याम प्रजायेमहीति ता अन्नमसृजन्त । तस्माद्यत्र क्व च वर्षति तदेव भूयिष्ठमन्नं भवत्यद्भ्य एव तदध्यन्नाद्यं जायते ।।४।।

ॐ तेषां खल्वेषां भूतानां त्रीण्येव बीजानि भवन्त्याण्डजं जीवजमुद्भिज्जमिति ।।१।।

ॐ सेयंदेवतैक्षत हन्ताहमिमास्तिस्त्रो देवता अनेन जीवेनात्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरवाणीति ।।२।।

(छान्दो ६।२।४, ६-३-१।२)

तो विचार आया यह जो सृष्टि चक्र है इसका विस्तार कैसे हुआ इसके बारेमें महाऋषि उदालक इस बातको स्पष्ट करते है कि वे जो परमेश्वर है मायापति भगवान ने संकल्प किया मैं बहुत हो जाऊ इसलिये तब तेजकी उत्पति हुई तेजसे जलकी उत्पत्ति हुई । तो परमात्माही तेज रूपसे प्रगट हो गया- कारण ही कार्य रूपसे प्रतीत होनेलगा जैसे दृष्टांत से समझो- मिट्टी ही घट रूपसे दिखनेलगी तो कहने लगे घटका जन्म हो गया अब बतलाओ जिस घटका जन्म हुआ- ये घट पहेले थाकी नही ? तो यदि कहोकी पहले नही था तो जन्म किसका हुआ? और यदि कहोकी पहले था तो भी जन्म किसका हुआ ? प्रश्न तो दोनो तरफ से आयेगा ।

तो इसलिये यह कहना पडेगाकी उत्पति जो भी है– कारण ही कार्य रूपसे भासने लगा– मृत्तिका ही घटके आकार में खडा हो गया। तो कहेना पडेगा ये महान परमेश्वरही जगतके अनेक रूपसे प्रगठ हों गया तो अनेक प्रकारसे भासने लगा।

पुरुष एवेदं विश्वं कर्म तपो ब्रह्म परामृतम्।
एतद्यो वेद निहितं गुहायां सोऽविद्याग्रन्थि
बिकिरतोह सोम्य ।।२०।।

(मुण्ड. २–१–१०)

उपनिषद का मन्त्र यह स्पष्ट करता है सम्पूर्ण विश्व जो है– परमात्माही है– पूर्णसे उत्पन्न होनेवाला भी पूर्ण ही है– जैसे सोनेसे उत्पन्न होनेवाली चीज सोना ही है स्वरूप से।

इसलिये चेतन परमात्मासे होनेवाला बिश्व जो है वह परमात्मा ही है इसलिये ज्ञानी की ये दृष्टि है यत्र यत्र मनो याति तत्र तत्र ब्रह्मदर्शनम्।

जैसे अपने शरीरमें ही अनुभव करो कोई बेटा है कोई बेटी बनके आया तो शरीर केही देखने लगा– किन्तु जिस अगके वह देखता है वह उसको जड समझता है कि आत्मा ? तो कहना पडेगा उसको आत्माही समझता है– आत्मा नही रहेगा तो वह अंग चेतनके करंटसे जूदा होतेही बेकाम हो जायेगा।

तो प्यारा क्या हुआ ? आत्मा ही शरीरके आकारमें दिखताहै वही प्यारा है। जीवनलाल में तुम्हारेको शरीर दिखताही नहो जब तक जीते रहो। जहाँ भी नजर जायेगी चेतन को ही पकडती है किन्तु पकडते हुये भी समझते नही– यह अज्ञान है। देख उसको रहे है– प्यारभी उससे कर रहे है– व्यवहार भी उसीसे कर रहे है– कभी झगडा भी कर रहे है फिर उसको समझ नही रहे है यह अज्ञान– यह अज्ञान से बचना है उसके लिये तत्व विचार। पुरुष एवेदं विश्वं परमात्माका कर्म है सम्पूर्ण ब्रह्माण्डको खडा करना है जीवका कर्म नही। जो अपने को सीमामें बांधेके बैठ गया वह उतना कर्म कर नही शकता शरीरकी सीमासे अगर तुम बाहर निकल गये तो सारा ब्रह्मांड तुम्हारी आत्मा हो जायेगा– यह सारा प्रपंच तुम्हारेमें कल्पित हो जायेगा।

तप क्या है. ज्ञान ही तप है। परमात्माका तप ठीक ज्ञानको धारण करना ठीक ज्ञानको प्रकट करना।

कभी अपने तप उपवास करते है– किसलिये हुमारे अन्दर सुन्दर ज्ञान प्रकट हो क्योकि विना ज्ञानके तप निष्फल हो जाता है। जो जो भी हमारी क्रिया है

अगर उससे ज्ञान हमारे अन्दर नही आ रहा तो वह क्रिया अधुरी । जो जों हमारी चेष्टा है ज्ञानके लिये ही होनी चाहिये ।

श्रीमद्‌भगवद् गीता में इसलिये भगवान कृष्ण अर्जुनको कहते है ।

सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ।। (गीता ४-३३)

जो भी कर्म है वह तभी तक चलेगा जब तक पूर्ण ज्ञान नही आयेगा। जहाँ ज्ञानकी पूर्णता में पहुँच गये तो कर्म ठंडा हो जायगा ।

यहाँ ये मानलो हम चले तो कब तक चलेंगे जब तक निश्चय नही हो गया की हम घर पहुंच गये- घरमें पहुंचनेका ज्ञान जहाँ हुआ चलना बन्द हो जायेगा । इसी प्रकार संसार जो भी हमारे जीवनमें क्रिया है वह क्रिया कहाँ समाप्त हो जायेगी तो जहाँ उसको तत्त्वबोध हो जायेगा । वह जो तत्त्व है असीम है ।

एतद्यो वेद- उस तत्त्वको अपनी बुद्धिरूपी गुहामें समझे । गुहा- उसको कहते है जो देखने नही देवे छूपाके रखे तो यह बुद्धिरूपी गुहा तुम्हारे धर्माधर्मको छूपाके रखती है किन्तु फल तुमको परिचित चखा देती है जंसे घरमें कुशल स्त्री है वह अपने पुरूषको कभी समझने नही देगी घरमें क्या चीज है क्या नही ।

अगर कह दे कि वहुत कुछ है तो पुरूष काम करना बन्द कर देगा तो प्रमादी हो जायेगा- और अगर कह दे की कुछ भी नही तो- उसका काम करनेका उत्साह ही ठंडा पड जायेगा । तो बुद्धिको तो उस गृहिणी ही समझो क्योंकि अगर यह पता चला जाये कि मेरेमें यह धर्म है तो प्रमादी हो जायेंगे- पाप करने लगा जाओगे अहंकारसे । और यदि ये समझमें आ जाये की अहो मेरे म तो बड़ा पाप है तो जीवनसे निरस हो जाओगे- निराश हो जाओगे । तो यह बुद्धि दोनो को ही देखने नही देती । इसलिये सदगुण- सद्‌विचार की वृत्ति ये है की तुम धर्मानुकूल वृत्ति करते रहो-दैवयोगवशात् अधर्म हो ही जाता है किन्तु इससे बचो ।

दूसरी बात यह है की यह बुद्धि ज्ञाता-ज्ञान- और ज्ञेयके भेदको छूपा देगी है । केवल फलको प्रत्यक्ष देती है, प्रियको देखा तो सुख मिला और अप्रियको देखा तो दु:ख मिला । यह बुद्धि ज्ञाता ज्ञान ज्ञेयको समझने नही देती इसलिये तो हम बुद्धिके मोह में रहते है, बुद्धि रहस्यको बनाके बैठी है तभी ये जीव- मैं-मैं-मैं बकरीका बच्चा बनके बैठा है । स्पष्ट हो जाये की तुम्हारा स्वरूप क्या है तो

तुम इसके पल्ले में पडोगे ? मुक्त हो जाओगे इसलिये ऐसी यह बुद्धि है इसके अन्दर– गुहामे उस चेतन आत्माको शास्त्र से श्रुति से महान आचार्यके अनुग्रहसे जाने तो अविद्या ग्रन्थिसे मुक्ति मिल जायेगी।

चिद्भावको ग्रहण कर लेगा तो निर्विकल्प स्थितिमें आ जायेगा तो इसलिये मंत्र कहता है ऐसी वह तुम्हारी आत्मा है "इदम विश्व पुरूषम् ।"

जडमें जो कुछ भी है चेतनके करंट से है तो यहाँ कहते है– ताआप ऐक्षन्त बहू्व्य स्यामः प्रजायेमहीति वह जलात्मा परमेश्वर इच्छा करता है– तो केवल जलने इच्छा किया ऐसा नही– क्योंकि जैसे सडकमे शरीर घुमता फिरता है किन्तु आत्माके बिंना ये कहाँ जायेगा ? आत्माके बिना ये मुर्दा शरीर चलने-लग जायेतो मामला गोलमाल हो जाये ।

माया भगवती प्रकृति चेतनके करटमें सुन्दर है–

प्रकृति अपने स्वरूपसे तो निराकार है किन्तु दूसरेके आकारमें वे साकार हो गई।

तुम बहुत रूपसे प्रकट हो जावे यह इच्छा स्वरूपसे नही किन्तु नाम– रूपसे है ।

जैसे रज्जु किसीको तो सर्परूप दिखी– किसीको पानीकी लकीर रूपमें, किसीको लकडी रूपमें और किसीको तो भूमि फटी हो ऐसा दिखा– तो एक ही रस्सी रही किन्तु द्रष्टा जुदा हो गये– तो भिन्न भिन्न रूप दिखने लगे अनेक रूपका माने कल्पना मात्र है– किन्तु फिरभी अज्ञानके आवरणसे ये भय भी उत्पन्न करता है सुख दुःख भी।

परमात्मा ही अप– जल रूपसे प्रकट होकर फिर वह आपोन्नमऽसृजन्त अन्नकी उत्पत्ति करता है । यहा अन्नका अर्थ है पृथ्वी।

अन्नका अर्थ है– अद्यते इति अन्नम्– जो खाया जाये वह अन्न है । भूतो को खा जावे और भूत जिसको खा जाये वह अन्न है । अधिक मात्रामें अगर अन्नको खाया तो वह खानेवाले के मरणका हेतु बनेगा– इसलिये उसको भूतोको खानेवाला कहा । पृथ्वी है वही भोजन है पृथ्वी रूपसे भगवान ही प्रकट हो गया । अमुक कीडोके लियेतो पृथ्वी ही भोजन है किन्तु हमने मना कर दिया तो वही मिट्टी पत्र– पुष्प– फल रूपसे प्रगट हो गई हमारा भोजन बनी– एक आकार से देखनेमें सफरजन– मोसमी संतरा इत्यादि के रूपमें आयी अगर इसकी रक्षा नही किया

तो फिर ये आगे जाके मिट्टीही हो जाते है– जैसे अपना यह शरीर चेतन के प्रकाशसे जूदा हो जाता तो मिट्टीही हो जाता है– और जल्दी ये मिट्टी हो जाये इसलिये हिन्दु लोग शरीरको जला देतेहै ।

इसलिये इसप्रकार फल रसरूपसे पृथ्वी गई हमारे अन्दर तो ये शरीर रूपसे चेतनको प्रकट करनेमें समर्थ हुई ।

शरीरको तो चमडेको एक चमडेका थैला– उसमें अम्बर बन्द– एक दूसरेको इन आंखोसे एक दूसरेको ताकते रहते है– सारा जीवन साथमें रहते है किन्तु एक दूसरेको जानते नही– एक दिन ये बक्सा खाली हो गया तो कहेगें मर– गवारे मरगया विवेकी इस सत्यकी समीक्षा करता है जिसका विचार करनेसे तो विचार बाकी नही रहे वह सत्य– आत्मा सत्– चिद आनन्द रूप ।

तस्माद्यत्र क्व च वर्षति तदेव भूयिष्ठमन्नं भवत्यद्भ्य एव तदध्यन्नाद्यं जायते ॥४॥

इस पानी से अन्न आदि उत्पन्न होगे जिस भूमिमें पानी नही वह रेगीस्तान हो जायेगी वहां छोटे छोटे कीडे भी नहीं देखानेको मिलेगे– क्यों जीवन तो है नही । तो सोचो इस जमीनके अन्दर रसरूप जल नही होगा तो सारी पृथ्वी रेगीस्तान बन जायेगी तो जीवन तो इसमें रहेगा ही सत् इसलिये इसमें रस रूपसे परमात्माही विराजमान है श्रीमद्भगवद् गीतामें भगवान अर्जुन को कहते है

रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययो : ।
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृष्

(गीता ७–८)

हे कौन्तेय इस जलके अन्दर में रसात्माहुँ– जीवनी शक्ति देनेवाला है ।

वर्षासेही अन्न और आगे सृष्टि होगी एक होगी वह जडभावमें चलनेवाली सृष्टि जैसे वृक्षादि और वृक्षादि योनिमें भी जीव भाव है उसको कहते है घन सुषुप्ति– जब अति तामसिक कर्मोसे मन शिथिल हो जाता है तो जडभावमें मन चला जाताहै ।

दूसरी है चेतनभावको व्याप्त करनेवाली सृष्टि मनुष्यादि । आगे स्पष्ट करता है ।

ॐ तेषां खल्वेषां भूतानां त्रीण्येव बीजानि भवन्त्याण्डजं जीवजमु-द्भिज्जमिति

(छान्दो. ६-३-१)

तो चलरूप में दिखनेवाली सृष्टि तीन प्रकारके बीजो से उत्पन्न हुई

अंडजम्- अंडेमें से उत्पन्न होनेवाले पक्षी-सर्प आदि, जीवजम्- जरायुजम्- मनुष्य-पशु आदि जब माताके गर्भमें होते है तो एक गर्भ वेष्टन में ये रहते है इसलिये इनको जरायुज कहा- माताकी सुरक्षा और इसका जन्म भी ठीक प्रकार-से तो हो इसलिये परमात्माने यह व्यवस्था की- और ये मनुष्यको उत्तानपाद भी कहा क्योंकि जन्म के समय इसका शिर नीचे पाव उपरकी ओर होते है। और उत्तानपादकी दो रानी है सुरुचि और सुनीति- । स्वभाव से ही सुरुचिकी और ज्यादा प्रवृत्ति है- सुनीति माने धर्माचार में ये घबडाता है कही कही लोग कहते है महात्मा बनेके तो कही घर चलेगा । सुरुचि की ओर ज्यादा प्रवृत्ति है-तीतली बनके घूमेगा । गई जीवन का बडा हिस्सा ऐसेही प्यार करेगा-८० वर्षका पुराना ये क्लबका मेम्बर जब क्लबमें आयेगा तो नये छोकरे कहेंगे- दादाजी अब क्लबमें आके क्या करोगे । क्लब माने काम ऐन्ड लभ्- अबतो ये सूखा लकडा हो गया कौन प्यार करेगा । तो सोचो कहाँ प्यार करता है जो तुमको कभी ठुकरायेगा नही कभी दूर नही करेगा । शरीर दूर कर देगा- आत्माको प्यार करोगेतो तुमको मोक्षमें ले जायेगा- । शरीरसे प्यार करोगेतो फिर जन्मो और मरो ।

ऐसे वह तुम्हारी आत्मा सत् चित् आनन्द रूप इस आत्माके उस महान दिव्य रूपको मुमुक्षु समझें । इसलिये विवेकी सुनीतिको पकडता हैं सुरुचिको दबाना है नही तो ये जाहाँ जायेगा उतानपाद ही रहेगा- बारबार जन्मेगा बार-बार मरेगा उसका कोई भला नही करेगा ।

सुनीतिका पुत्र था ध्रुव- ध्रुवम् माने सत्यम् सुरुचिका पुत्र था उत्तम- उत्तम जो देखने में उत्तम- जैसे यह शरीर देखनेमें उत्तम दिखता है इस शरीरको पकडके बेठो- तो आज जो बच्चा है उसको पकडा तो २० सालके बादमें ये पकडमें रहेगा ? कहेगा मेरेको क्युं पकडके बैठे हो देखते नही हो- मैं

अब बच्चा नही हुँ ? बच्चा समझनेका भ्रम मत करो– उत्तम है यही प्रतीति हो रही है । इसलिये बुद्धिमान मुमुक्षु आत्मामें अपने मनको रखे– ।

जीवोका श्रुति ने भेद किया । जरायुज, अंडज, उद्भिज्ज, स्वेदज श्रुति अंडजको वीज कहती हे अंडज है तो अंडा है ।

तो इस वातको और आगे कल समझायेगे–

आज दो मिनिट उस सत् चित् आनन्द रूप परमात्माका अपने हृदयमें ध्यान करो–

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. १२

ॐ तेषां खल्वेषां भूतानां त्रीण्येव बीजानि भवन्त्याण्डजं जीवजमुद्भिज्जमिति ॥१॥

ॐ सेयं देवतैक्षत हन्ताहमिमास्तिस्रो देवता अनेन जीवे-नात्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरवाणीति ॥२॥

ॐ तासां त्रिवृतं त्रिवृतमेकैकां करवाणीति सेयं देवतेमास्तिस्रो देवता अनेनैव जीवेनात्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरोत्॥३॥

(छान्दो. ६–३ ।१३)

बात आयी इस जगतमें ये जीव तीन ही प्रकार के बीज से उत्पन्न होते है इस की अपने कल भी व्याख्या किया जैसे अंडज तो जो अंडे से उत्पन्न होनेवाले पक्षी आदि जीवजम् का अर्थ–माके पेट में गर्भवेष्टन से जन्म लेनेवाला उसको जरायुजम् भी कहते है ।

इन जीवोको स्वरूपको हम कैसे निश्चित रूपसे समझ जाये उसके लिये सुंदर प्रक्रिया यह है – प्रकृति ने जीवोको तीन धारामें बांध दिया या कहो तीन प्रवाह में बांध दिया ।

भारतीय परंपरा में जो ऋषि मुनि हुए जो बडे बडे ब्रह्मवेत्ता हुए उन्होने इस जीवात्मा की गतिके बारेमें बडा सूक्ष्म विचार किया ।

उर्ध्वस्रोत जीव जो नीचेसे पोषण लेता है और उपर फेंक देता है–वृक्षादि जीव है उंर्ध्वस्रोत है । – इस छादोंग्य उपनिषद में आगे महाऋषि उद्दालक आत्माका उपदेश देते हुए कहते है ।

अस्य सोम्य महतो वृक्षस्य यो मूलेऽभ्याहन्याज्जीवन्स्रवेद्यो मध्येऽभ्याहन्याज्जीवन्स्रवेद्योऽग्रेऽभ्याहन्याज्जीवन्स्रवेत्स एष जीवेनात्मनानुप्रभूत: पेपीयमानो मोदमानस्तिष्ठति

(छान्दो. ६–११–१)

हे सोम्य ये महान विशाल आगे जो न्यग्रोध का वृक्ष देखता है ना, उसको मूल में या जड से काटते है तो रस झरता है–मतलब उसमें रसकी गति हो रही है–यह गति जीवात्मासे ही हों रही है । जैसे कभी इस शरीरका कोई अंग कट-जायेतो खून निकलता है तो कहना पडेगा अंदर खूनकी गति हो रही है – यह गतिका कारण–है प्राणसे सम्बन्द– प्राणका चलना बन्द हो जाये तो खूनका चलना भी बन्द हो जाता है– जैसे मुरदे में यह क्रिया नही देखनेको मिलती ! तो माने प्राण अंदर है तो प्राणपति –आत्मा भी वहां बैठा है अंदर ! मनप्राणग्रामप्रतिष्ठो हि जीवा: – मन–प्राण आदिके समुदाय सहित चिदाभास वही जीव है ।

जब जीवके अतितामसी कर्म होते है तो ये वृक्षादि स्थावर भावमें जाती है आत्मा । इसको घन सुषुप्ति कहते है । इसमें न तो अपना शरीर दिखता है न अपनी अगलबगलवाला ही दिखता है केवल अविद्याके घेरेमें, हम बन्धे है । जब जागता है तो कहता है बडे आनन्द से सोये किन्तु कुछ समझे नही । अब बडे आनन्द से सोये ये कहेनेवाला जो है वह– उसने बडे आनन्दका अनुभव किया अब यह किसी इन्द्रियोका या विषयका आनन्द तो है नही वह आत्माका ही आनन्द है साथमें कहे रहा है कुछ नही समझे तो ये अज्ञानसे बन्ध हुआ है इसका नाम है अविद्या– ये जब तक बैठी है इससे बाहार नही निकल सकता किन्तु प्रकृति ने अपने नियमसे इसको ऐसा एक आनन्दका स्थान दिया है दो– तीन– चार घन्टे कोई दु:ख नही । जाग्रत अवस्थामें कोई ऐसा विषय नही जो इतने घन्टे तुम्हे सुखी कर सके । इसलिये जाग्रत अवस्थामें विषयोका सुख है क्षणिक । कोई विषय चिरकाल तक स्थिर होके दीर्घकाल तक सुखी नही कर सकता ।

जैसेकी भोजन करने लगते है तो बडे लोगकी प्रसन्नता के अभिप्रायसे भोजनमें अनेक प्रकारकी वेराइटी बनाते है– किन्तु परमात्माने स्वाद लेनेके लिये जीभ एक ही यंत्र दिया है– जीभसे सब ले रहे है ।

आंखसे देखके– तो नाकसे गन्धसे प्रसन्न हो गया, कानसे शब्द सुनके प्रसन्न हो गया, हाथसे कोमल स्पर्शसे प्रसन्न हो गया– सारी इन्द्रिया काम कर रही है इसका अर्थ केवल रसनेन्द्रियसे तुम प्रसन्न नही होगे– इसलिये परमात्माने अलग अलग विषयके लिये अलग अलग यंत्र फीट किये जैसे रूपके लिये आंख बनाई– । जाग्रत अवस्थामें ये आनन्द है विचित्र आनन्द– ये एक आनन्द नही क्योंकि यहाँ एकाकार वृत्ति नही । भिन्न भिन्न किस्मका आनन्द किन्तु सुषुप्तिमें तुम्हारेको एक ही किस्मका आनन्द जब तक सोये रहेगी कोई दिक्कत नही ।

ऐसी वह जो आत्मा अति तामसी कर्मके बलसे वृक्षादि योनिमें चली गई तो इसको घन सुषुप्ति कहेते है । इस योनिमें भी गये हुए जीवमें कोई feoliu-ps तो होती है कोई अच्छी आत्मा वहाँ आके बैठेगी तो उस वृक्षको देखोतो प्रफुल्लि होता है– अच्छी पुण्यात्माके बैठनेसे वृक्षमें प्रसन्नता स्वभावमे आती है वाणी तो वहाँ नही किन्तु एटमोसफीयर वातावरणमें इसका असर होता है ।

अगर कोई मलिन आत्मा आयेगी तो वृक्षमुरझा जायेगा ।

जैसे एक इन्सान मानव क्रोधी हो जाये तो घरमें सुरापन आजाता है तो जो गृहस्थ जीवनमें रहनेवाले है उसका कर्तव्य है चित्तको ज्यादा शोकमें जाने न दे– उल्लासको बनाये रखे । सुखकी खोज मत करो सुख तुम्हारे अन्दर है बाहरके जितने पदार्थ है निमित मात्र है । सुखकी अभिव्यक्ति में ऐसा मत सोचोकी हमेशा सुखी ही होवे तुम्हारा जीवन चर्ममाससे बनाहै पुण्य अंश होगा तो सुख मिलेगा– पाप अंश होगा हो दुःख मिलेगा । सुखके लिये कोई स्थान नही– कोई व्यक्ति नही । ऐसे ही दुःखके लिये भी कोई स्थान नही कोई व्यक्ति नही । किन्तु ज्ञानको जीतना तुम उचा करोंगे तुम उतने सुखी हो जायोगे । संसारके पदार्थोंसे मिलनेवाला सुख क्षणिक है ।

कोई दुःख हमको नही आये तो हम बडे सुखी रहेंगे तो यह जो हमारा सुख है मुर्देके सुख जैसा है । ऐसे सुखकी इच्छा मत करो ।

दुःख रहे फिरभी तुम सुखी हो ये तब होगा जब तुम आत्मासे दोस्ती करोगे । सोचो कौन है हमारे अन्दर सत्– चित् आनन्द स्वरूप जिसके रहनेपर यह मुरदा शरीर होने पर भी प्यारा दिखता । अन्दर प्यारा बैठा है उससे दोस्ती करो । बुद्धिमान मनुष्य अच्छे सात्त्विक विचार रखके अपनी बुद्धिको निर्मल रखता है और निर्मल बुद्धिको अपनी आत्माकी ओर उपर उठाये– इससे जीवनका उत्थान होगा । नही तो नीचे दबही जायगा वृक्षादि योनिका जीव बनेगा ।

तो वृक्षादि जो योनि है ये उर्ध्वस्त्रोत– नीचेसे खायेगा उपर फेंकदेगा– मोसंम– संतरा– सेव आदि मलिन जगा में भी होगें सो भूमिसे रसको खींचके अपनेमें Refine किया कुछतो उससे अपना शरीर बनाया– बोभी वेस्ट निकालता है पत्र, पुष्प फलकेरूपमें ये खाता है क्या और देता है क्या तुमको खानेके लिये सुन्दर सुन्दर फलादि तो सोचो कितनी ऐसी रीफाइनरी लगी हूं यहाँ ।

दूसरे नम्बरमें तीर्यकस्रोत– ये ता मसिक जीव है सर्प– पक्षी– पशु– गौ भैंस आदि तीर्यकस्रोत है ये सब आगेसे खा रहे है टेढा मेडा अन्न जा रहा है पीछे से नीकालते है– यह सब भी भोजनसे कुछ तो अपना शरीर बनाते है और बोइस्ट को पीछे से नीकालते है– वह भी मनुष्यके लिये उपयोगी है ।

यह दोनो ही मनुष्यकी सेवा कर रहे है । तीसरे प्रकारके जीव है अधोस्रोत– मनुष्य आदि जो उपरसे भोजन लेते है– नीचेको ओर से नीकालते है तो यह जो वेइस्ट वस्तु किसीके भी काम नही आता ।

तो सोचो ये बहुत बढिया भोजन परमात्माने इसके लिये क्यु बनाया– क्योंकि परमात्माने इसको और भी तीन सुन्दर शक्तियाँ प्रदान की है ।

विचार शक्ति, सोचनेकी शक्ति– और करनेकी शक्ति तो इन तीनोका उपयोग करनेके लिये ये स्वाधीन है दूसरे– प्राणी पराधीन है । इस स्वाधीनताकी रक्षा करना मनुष्यका कर्तव्य है । अगर इस तीन शक्तियोंका ठीक ठीक उपयोग होता तो अपने इस जीवनकी रक्षा करोगे नही तो तीर्यक्– आदि दूसरी योनि मिल जायेगी ।

तेषां खल्वेषां भूतानां त्रीण्येव बीजानि भवन्त्याण्डजं
जीवजमुद्भिज्जमिति ।।१।।

(छान्दो० ६–३–१)

मन्त्र यहाँ सृष्टिमें जीवोकी उत्पत्तिके लिये तीन प्रकारके भेद स्पष्ट करता है– मनुष्यसे मनुष्यही उत्पन्न होगा– पक्षीसे पक्षी और पशुसे पशुही उत्पन्न होगा तो यहाँ पर जीव शरीरसे विभक्त है, जीव जन्मसे विभक्त है, किन्तु जीवके स्वरूपमें भेद नही । जीवनमें सीधा समझो हम कहते है हम मनुष्य है हम स्त्री है– पुरुष है यह भेद इस शरीररूपी कवरके कारणसे है शरीरका यह कवर हटादे तो सब जीव है कोई भेद नही– अन्दरसे ये जो हम– हम– हम– हो रहा है इसके स्वरूपको जानना मानव जीवनका सबसे बडा कर्तव्य है ।

केवल शरीर मात्रका पोषण करते रहो– रक्षण करते रहो किन्तु ये करनेवाले बडे बडे लोग चले गये। जबसे यह जगत हुआ है तबसे इस शरीरकी रक्षा करने वालोकी संख्या बहुत है, शरीरको सजाने वालोकी संखया अधिक है किन्तु अन्तमें सब हार जाते है।

इसका मतलब ये नही कि अच्छे स्थानमें नही रहो– अच्छा खाओ नही अच्छे कपडे नही पहनो–। अच्छा रखो सब किन्तु ऐसा मत समझोकी इसको सजानेसेही सब कुछ होगा– सुन्दरता तो वो जो अन्दर बैठा है उसकी कृपासे है समझदारीसे सजाओ जिसकी कृपासे हम इस चेहरेको सुन्दर बना रहें हैं– वह कौन है– जिस तत्वके रहेनसे सब कुछ है उसके न रहेनेसे कुछ भी नही है कोई मुरदेके प्रेमी निकला– आजतक– इतिहास देखलो हाँ– मुरदेके पीछे बडी– वडी कबरे– समाधि– स्मृति चिन्ह बने– किन्तु मुरदेसे प्यार किसीने नही किया। भिखारी हम प्यारके बने रहे– प्यारा फिरभी नही

ॐ सेयं देवतैक्षत हन्ताहमिमास्तिस्रो देवता अनेन
जोवेनात्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरवाणीति ॥२॥

(छान्दो० ६–३–२)

परमात्माने सोचा मैं बहुत हो जाऊ तो उसने मायाका आश्रय पकडा– वह तीन मतोकी सृष्टि तो कर चूभा पृथ्वी– जल– तेज–। त्रिविध कर्म करना है तीनोका मिश्रण करता है आगे जाके इसलिये तीनोको प्रधानतासे श्रुति पकडती है। इसलिये – वे जो देवता है उसने सोचा मैं अपना स्वरुपसे अनेक हो नही सकता इसलिये मेरेसे जीवभाव पकडना पडेगा–। जैसे कोई ड्रामा करोगे तो असली रूपसे ड्रामा नही हो सकता– नकली रूप आयेगा तो प्रसन्नता होगी लोगोकी। यहाँ पर जब तक नकली रूपको नही पकडेगे तो नाना रूप कैसे होगा। किन्तु उस एकमें अनेकता है नाना रूपता है वहं तो उपाधि प्रधान है। दृष्टान्तसे समझो– जिसने जन्म लिया था वह हम– हम– हम अभी भी हैं कि नही ?– तो वह अहम अभी भी है जन्मकालमें शरीरका आकार प्रकार था वह जब नही रहा।

जन्म करनेवाली आत्मा संकल्प करेकी मेरेको लोग बच्चा भी देखे– कुमार भी देखे– जवानभी देखे– बुढ्ढाभी देखे तो वतलाओ इसके लिये कौनसा चमत्कार है– सिद्धि है भला ? तो बच्चा देखनेके लिये बच्चा बनना पडेगा युवान देखनेके लिये युवान बनना पडेगा। तो जो अवस्था भेद आया– वह कालक्रमसे आया।

यह अवस्था भेद तुम्हारे नकली रूपमे है । असली रूपमें न तो बचपन है न तुमारा वस्था न युवावस्था न बुढ्ढापा । मन्त्र आगे कहता है ये जो तीनो देवता –

देवताका मतलब है– द्योतनात्– प्रकाशनात् देवता जैसे अपने कहते है ना– पृथ्वी देवता– आपो देवता वयु देवता है– तो देव सम्बन्ध इनके साथ बना हुआ है । देव माने परमात्मासे सम्बन्ध । जैसे तुम्हारे शरीरमें आत्मा सम्बन्ध बना हुआ है तो ये बडा सुन्दर है । ऐसा नही की पृथ्वीमें देव नही इसके अन्दर भी वह आत्मा है किन्तु साक्षात् थोडा भेद है ।

जीवभाव तो तब आयेगा जब पांच भूतोके मिश्रणसे जब सूक्ष्म शरीरकी सृष्टि हों

माने पांचभूतोका मंथन हुआ तो पाँचाके सात्विक अंशसे मन– बुद्धिकी सृष्टि हुई ।

पाँचोके जुदेजुदे सत्वअंश से पांचज्ञानेन्द्रियां इनी पांचोके रजोगुणसे पंचप्राणकी सृष्टि और पांचोके जुदेजुदे रजोगुणसे पांच कर्मेन्द्रियोकी सृष्टि हुई– तो इस १७ तत्वका वह सूक्ष्म शरीर– मनबुद्धिमें परमात्माका आभासरूप प्रवेश किया तो– मनःप्राणप्रविष्टा पराःदेवा जीवा: ।

आभास रूपसे प्रवेश कैसे होगा तो इसके लिये दृष्टान्तसे समझाते है । शीशेमे प्रवेश कैसे करोगे तो शीशेके सामने खडे हो जाओ तो शीशेके अन्दर दिखोगे । तो शीशेके अन्दर तुम हो इसलिये दिख रहे होकी तुम नही हो इसलिये दिख रहे हो ? तो कहेना पडेगाकी शीशेके अन्दर तो तुम नही किन्तु तुम्हारा आभास शीशेके अन्दर भास रहा है आभास भाससे तुम एकसे दो हो गये । और मानलो शीशे जुदी जुदी सकलके चार है तो तुम्हारी सकले जुदी जुदी दिखने लगी– । तुम्हारे स्वरूपमें कोई विकार नही तो भी उपाधि भेदसे विकार दिखने लग गया– नाना रूपकी प्रतीति हो रही है । तो विवेकी मनुष्यको समझना चाहिये न यहां कोई नाना रूप है न कोई विकार ऐसा वह जो तुम्हारा स्वरूप है– इस बात को कठोपनिषद की श्रुति और स्पष्ट करती है ।

सूर्यो यथा सर्वलोकस्य चक्षु–
र्न लिप्यते चाक्षुषैर्बाह्यदोषैः ।

एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा
न लिप्यते लोकदुःखेन बाह्य : ।।
(छान्दो० २-२-११)

सूर्य संपूर्ण ब्रह्माण्डको प्रकाशित करता है- अगर अनेक घडे आप पानीके भरके रखदो तो सबमें सूर्यका प्रतिबिंब पडेगा किन्तु पानीमें या घडेके दोषसे कोई दोष प्रतीत होगा तो भी सूर्यके अन्दर कोई दोष नही आयेगा ।

सूर्यके प्रकाशमें चलनेवाले जो जीव है वे ज्ञान प्रधान है । जो उस अन्तर आत्माके ज्ञानका प्रकाशकाभी उपयोग करके अपना भोजन लेनेवाले है- किन्तु किन्तु अति तामसी जो जीव है जैसे शेर इत्यादि अपने ज्ञानका उपयोग भी नहीं और न सूर्यके प्रकाशका भी उपयोग करते है फिरभी उस दयालु परमात्माने उसके लिये ऐसी उसकी आंखे लगादी है की रातमें अगर देखो तो बलबका काम देती है ।

तो सम्पूर्ण प्राणीके लिये सूर्यको नेत्रको ररखा उसके प्रकाशमें हमारी आंखे अच्छा काम करती है या बूरा उससे वह लिपायमान नही । चाक्षुष विषय है जिनका चक्षुके द्वारा प्रत्यक्ष हो रहा है-उन सारे विषयोके अथवा चक्षुके सम्बन्धसे ज्ञान हो रहा है उसको चाक्षुष कहते है कहते- ज्ञानके अन्दर कोई विकृति नही । मन और बुद्धिमें विकार आता है तो राजस या तामसिक भाव उत्पन्न हो जायेगें ।

हम लोग बच्चेको बडे प्यारसे बयु देखते है क्योंकि बच्चेसे तुरन्त प्यार मिल जाता है बच्चेका मन निष्छल हैं मनमें कोंई वट गांठ नही- जैसे रस्सीमें अपने वट देते हैना । जैसे जैसे बढते जाते है मन वट पकडता जाता है- वट जल्दी खुलते नही । किन्तु बच्चा जो उसके अन्दर ऐसे वट नही तो जरासीमें क्रोध करेगा तो जरासीमें हस पडेगा ।

इललिये बच्चेसे सब प्यार करना चाहते है । ऐसे निच्छल हृदय होवे बिवेकी । दुनियामे बडे बडे हुए महापुरुष किसको दुःख नही हुआ- ऐसा सोचके विकारोकों मनमें नही आने दे- मुमुक्षु- सहन शीलताको बढाये ।

लिपिमें जितने अक्षर है सब एक है किन्तु स- श- ष तीन है- इसका अर्थ है सहनकरो-

सहन शक्ति कम होगी तो ज्ञानको ग्रहणकरता हुआ भी कमजोर होगा। ज्ञानको बढानेके लिये सहेनशक्तिको बढाओ- आत्माकी स्थिरतामें मनको ले आवे।

उन्हींकी शक्तिसे शक्तियुक्त होकर मन, बुद्धि और इन्द्रियोद्वारा मनुष्य नाना प्रकारके शुभाशुभ कर्म करते है तथा उनका फलरूप सुखदुःखादि भोगते है। परंतु वे परमेश्वर उनके कर्म और दुःखोसे लिप्त नही होते, क्योंकि वे सबमें रहते हुए भी सबसे पृथक् और सर्वथा असङ्ग है।

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. १३

ॐ तासां त्रिवृतं त्रिवृतमेकैकां करवाणीति सेयं देवते-मास्तिस्रो देवता अनेनैव जीवेनात्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरोत् ।।३।।

ॐ तासां त्रिवृतं त्रिवृतमेकैकामकरोद्यथा नु खलु सोम्येमास्तिस्रो देवतास्त्रिवृत्त्रिवृदेकैका भवति तन्मे विजानीहीति ।।४।।

(छान्दो० ६-३-३।४)

तो विचार आया ये जो सत्-चित आनन्दरूप परात् देवता है अपने स्वरूपमें ये निर्गुण निराकार है। निर्गुण निराकार स्वरूप है वह मुमुक्षुके लिये ध्येय और ज्ञेय है उस स्वरूपका ध्यान करनेसें और तत्त्व विचार करनेसे इस भवबन्धनसे मोक्ष होगा।

जब सम्पूर्ण जीवोके कर्म भोग उन्मुख होते है तो ये निर्गुण निराकार महान जो ब्रह्म है- सगुण निराकार हो जाता है। मायाका अधिष्ठाता होनेसे- सगुण निराकार- इसको महेश्वर कहते है।

मायाँ तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम् ।
तस्यावयवभूतैस्तु व्याप्तं सर्वमिदं जगत् ।।

माया क्या ? तो ये जो प्रकृति जगतका तो मूल कारण है किन्तु स्वरूपसे ये जड है । चेतनाश्रित ही कुछ कर शकेगी चेतनके बिना ये कुछ भी नही कर शकती ।

जैसे अपने शरीरसे समझो ये हमारा शरीर चेतना अनाश्रित हो जाये तो ये किसीका बेटा– बेटी बनेगा क्या ?

बेटा– बेटी बनना होगा तो चेतनके आश्रय मे ही बनेगा । इसलिये इसको जूदा समझ लिया ।

माया भगवती है– ये विशाल शक्ति है इसके द्वारा परमात्माके अन्दर अनंत शक्तिका विकास हुआ ये मायाके सम्बन्धसे स्वतः नही । स्वरूपसे तो ये ब्रह्म परमात्मा निर्विकार है ।

इसलिये ये जो महान ईश्वर है– महेश्वर वह इच्छा करता है मैं बहुत होजाऊ– अब बहुत होनेका धंधा है– वह अपने स्वरूपसे तो हो नही शकता– इसलिये भूतोकी सृष्टि करता है । तत्तेजोऽसृजत पहले तेजकी सृष्टि किया । फिर जलकी और अग्निकी सृष्टि कि सूक्ष्म रूपसे । अब तीनका नाम श्रुति लेती है– इसका अर्थ समझोकी आकाश और वायु– पाँचोका सूक्ष्म स्वरूप प्रकट होनेसे पुरुषार्थ नही बना– वे जो परमात्माहै वे इन सूक्ष्म भूतोम प्रवेश कर जाते है । और उनका मन्थन होता है । तो विशुद्ध सत्त्वगुणसे मन– बुद्धिको सृष्टि हुआ एक एक भूतके सत्त्वगुणसे तत्त्वत्तद् ज्ञानेन्द्रियकी सृष्टि जैसे तेजसे चक्षुकी– आकाशसे श्रोत्रकी पृथ्वीसे घ्राणेन्द्रियकी जलसे– रसनेन्द्रियकी और वायुसे त्वक इन्द्रियकी सृष्टि हुई ।

और पांचो भूतोके रजोगुणसे प्राण उत्पन्न हुआ– ये जो प्राण है क्रिया प्रधान है । क्रिया प्रधान होनेसे जोभी क्रिया है तुम्हारे जीवनमें प्राणके आश्रित इसलिये अगर प्राण ठीक है तो क्रिया ठीक है– प्राणमें गडबड हुआ तो शरीर– इन्द्रियोकी क्रिया गडबड हो जायेगी ।

और पांच जो कर्मेन्द्रिया है वे तत्तद् भूतके रजोगुणसे उत्पन्न हुई ।

इस तरह सत्रह तत्त्वो का बे सूक्ष्म शरीर– वे जो महान ईश्वर है इसमें आभास रूप होकर प्रवेश करता है । शीशेमें मुह देखते हों तो प्रतिबिम्ब अच्छा है क्योंकि दर्पण स्वच्छ है– तो खूब प्यारसे देखते हो । ऐसेही उस परमात्माका यह जो मनबुद्धि है इसके अन्दर आभास आया– जैसे सूर्यका प्रतिबिम्ब जलमे

पडातो एक सूर्य होता हुआ भी हजारो घडोके सम्बन्धसे हजारो प्रतिबिम्ब दिखे– इस तरह ये जो तुम्हारा मन बुद्धि ये तो अनंतानंत है एक नही उसके अन्दर जो समष्टि आभास आया तो साभास सूक्ष्म शरीरका अधिष्ठान ये जो चेतन मायापति इसके ब्रह्म कहा ये प्रजापति है चतुर्मुख है तो यु खोजने जाओ तो चारमुख नही दिखाई देगे– किन्तु मन बुद्धि– चित्त और अहंकार ये चार मुख माने गये इसलिये ब्रह्माकी कहा मूर्तिरूपसे प्रतिष्ठा नही किन्तु वैदिक यज्ञादिमे इनकी प्रतिष्ठा पूजा होती है ।

मनसे संकल्प बुद्धिसे निशचय चित्तसे प्रकाश और अहंकार- समष्टि अहमस्मि । तो जहां समष्टि कोटी अपना स्वरूप स्वीकार करता है इसलिये उसमे शोक नही मोह नही सबको अपना स्वरूपही समझता है ।

किन्तु जिस समय चेतनने एक सूक्ष्म शरीरको पकडा माने साभास बुद्धि इसका अधिष्ठाता चेतन हो उसमें जीवभाव आया– सकीर्णता आई ।

आचार्य ब्रह्माको विशिष्ट जीवतो कहते है किन्तु वह अज्ञानमें बाधा नही– वह मुक्त रूप ही है । अज्ञानमें बन्धा है वह जीव है उसको मोक्षमें जाना है ।

इसलिये जब ये ब्रह्माकाध्यान करेगा तो समष्टि भावमें चला जायगातो समष्टि आत्मा तरूपमे उसकी इच्छा हो जायेगी तो ये शोक– मोहसे मुक्त हो जायेगा । इसलिये उसकी पूजाका विधान किया । किन्तु तो भगत उसी आकारको पकडके चलना चाहाता है उसके लिये कोई आकार नही इसलिये मूर्त्ति रूपसे कोई पूजा नही ।

अनेनैव जीवेनात्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरोत् परमात्मामें यह इच्छा प्रगट हुई मैं जीवरूपसे प्रगट हो जाऊ ।

तो चेतनका आभास बुद्धिमे पडातो साभास बुद्धि और अधिष्ठान कूटस्थ साक्षी ये तीनो मिलके जीवबना । तो माने साभास बुद्धिमे जीवपणा आया ।

जैसे– स्त्री और पुरुषपना शरीरमें बैठा है अगर चे स्थूल शरीर हटादे तो कौन पुरुष है कौन स्त्री ?

अहम तो सब जगह बराबर है किन्तु साभास शरीरका जो अधिष्ठाता बना– वह पुरुष या स्त्री बना ।

इसी तरह साभास बुद्धिका अधिष्ठाता कूटस्थ चेतन उसमें जीव भावका आरोप है– तो माने तुम्हारो स्वरूपमें स्त्रीभाव– पुरूषभावका आरोप ही है ऐसा कुछ है नही ।

जैसें रस्सीके अन्दर सर्पका आरोप है । क्यों आरोप है तो रस्सी स्वरूपका अज्ञान है इसलिये आरोप रस्सी स्वरूपका जब बोध हो गया तो वह सर्प है– प्रतीति मात्र है । इसी तरहा साभास बुद्धिके सम्बन्धसे जीवभावका आरोप हो रहा है कूटस्थ साक्षी में ।

बुद्धिमान शिष्यको गुरु उपदेश करेगा की हे वेटा तुं ब्रह्म है– तुम हेतु माने- कर्म और फल माने देहादि स्वरूप नही हो । माने कर्म शरीरवाले तुमनही हो । तुम शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव है उसको समझो वह निर्गुण निराकार हो जायेगा– किन्तु साभास बुद्धि दिखती है तब तक अपने स्वरूपका विवेक तो हुआ नही तो ये अपने अन्दर कर्ता– भोक्ता– संसारी सुख दुःखका आरोप किया और उसेही रटता हुआ चला जा रहा है । अगर कोई इसको रोके तो वह उस कोही पागल समझेगा कहेगा– मैं क्यों कर्ता नही ? मैं भोक्ता क्यों नही ?

इसलिये बुद्धिमान मनुष्यको ये जो ब्रह्मविद्या है वह स्वरूप तत्त्व विवेक करनेके लिये समझना चाहिये । शिष्य– पुछता है– हे भगवन यह जीवपना आभा- समात्र ही है तो यह कोई तत्त्व ठहरा नही तो जो बडे बडे पुण्य करनेवाला जीव परलोकगति को कैसे पाएगा ? या बडे पाप करनेवाला अधोगति को कैसे पायेगा? क्योंकि आभासमात्र ही है तत्त्व कोई नही ।

तो इसको समझाते हुए कहते है– तुम आभास की दृष्टि से यह कह रहे हो–

तो सोचो जरा जैसे तुम दर्पणमें अपना मुह आभास देखते हो तो वह प्रति- बिम्ब क्या निराश्रय है . मुखके बिना वो आभास नही । उपाधिसे प्रतिबिम्ब दिख रहा है शीशेमें किन्तु उसका आश्रय मुख ही है– इसी तरह आभास है अधिष्ठान रूपेणसत् इति व्याख्यायते अधिष्ठान तथा सत्य है– अधिष्ठान अंशको लेकर ये मिथ्या हैं इसका कोई स्वरूप नही ।

स्वर्ग– नरक ये आभास ही जायेगा किन्तु आने जानेका आरोप कूटस्थ साक्षीमें होगा । श्रीमद् भागवतके ग्यारहवे स्कन्धमें भगवान कृष्ण उद्धव को– उपदेश करते हुए कहते है –

मनके अन्दर अनेक कर्मोका जंगल पडा हुआ है। हम लोगोका इस जीवन में जो कर्म भोग हो रहा है वह तो बहुत थोडेका ही समझो। जैसे हमारी आँख है देखनेमें तो बडी चतुर है किन्तु ये बताओ ये जगतको कितना देखती? तो कहेना पडेगा जरासी देखती है। सारे ब्रह्माडकी दृष्टिसे इस जगतको कितना देखती है– सारा ब्रह्माड तो हमारे लिये अदृष्ट है। ऐसे ही हमारे अन्दर अनेक जन्मोके सञ्चित कर्म पडे है किन्तु हमको कौनसा दिखता। सामने भोग देनेके लिये जब कर्म अदृष्ट है सामने आ जायेगा तो निमित्त सुन्दर आ जायेगा– निमित्त दृष्ट है। देखनेमें निमित्त सुन्दर आ गया तो सुखी और सुन्दर निमित नही तो दुःखी प्रारब्ध कर्म अदृष्ट है।

जहांसे हम सुखी– वहांसे दुःख भी आ रहा है– जैसे बाल्यावस्थामें हम सुखी तो उसीमें ही कभी हम दुःखी ऐसे ही सब अवस्थाओ में समझो। दूसरे काल या देशमें हम दुःखी नही।

तो हे उद्धव तीन प्रकारके कर्म है,
संचित कर्म, प्रारब्ध कर्म और क्रियमाण।

संचित कर्मको तो बैंक बेलेन्सका तरह समझो– आगेके जन्म के लिये। प्रारब्ध कर्म का तो जो अभी भोग हो रहा है।

क्रियमाण– वर्तनानमें जो हम कर्म कर रहे है उसका कुछ फल तो अभी मिलेगा कुछ सचित हो जाता है जैसे धर्म बुद्धिसे कोई दूसरो पर उपकार ही ऐसा कर्म किया तो एक तो पुण्य फल मिला वह तो संचित हो गया और जो तुम्हारेको अभी फल मिला उससे कुछ तुमने अपने परिवार कुछ समाज और जातिके लिये खर्च किया तो इसमें सबका भला भी हुआ।

इसलिये– यह कर्म करते समय लोभ– मोह नही इसलिये धर्मोपदेश है–। जैसे गाडी चलती है तभी Stearing की जरूरत है– चलती नही तब कोई जरूरत नही। रोडमे चले तब स्टीयरींग द्वारा संयम करना पडता है नही तो कहीं लोभमें, कहीं मोहमे फस जायेगा, कही क्रोधमें फस जायेगा। सद्गुणोमेंतो कभी ही आयेगा दैवयोगसे इसलिये ये दब जायेगा– लोभ– मोहमें– कभी मिट्टीको खोदते है तो नीचेसे कांटा नीकल आया– तो सोचो क्यों नीकला तो– कहेना पडेगा ऐसा कर्म करके गया है इसलिये दब गया है कही ऐसा न हो।

धर्मोपदेश द्वारा वर्तमान कर्मोको ठीक किया कर्मजब शुद्ध होता है तो ये समझना चाहता है कि मेरा असली स्वरूप कौनसा है? तो यह जो शरीर है यह

तो पंचभूतोका है । वह जब अपने स्वरूपकी ओर चलता है तब उसको ब्रह्मका उपदेश करते है ।

परमात्मा इच्छा करता है मैं जीव रूपसे प्रवेश करू– तो अनादि अनन्त कालसे यह जगत ऐसा ही चलता आया– । जीवभाव पहले भी आया– परमात्मा उसको देखता है कि वह कैसे–(जीवभाव) बनता है ।

ॐ स इमाँल्लोकानसृजत । अम्भो मरीचीर्मरमापोऽम्भः परेण दिवं द्यौः प्रतिष्ठान्तरिक्षं मरीचयः पृथिवी मरो या अधस्तात्ता आपः ॥१॥

(ऐत० १–१–२)

मैं प्राणियोंके कर्मफल भोगार्थ भिन्न भिन्न लोकोंकी रचना करूँ यह विचार करके परमात्माने अम्भ, मरीचि, मर और जल – इन लोकोकी रचना की । इन शब्दोको स्पष्ट करनेके लिये आगे श्रुतिमें ही कहा गया है कि स्वर्गलोकसे उपर जो महः जनः, तपः और सत्य लोक है, वे और उनका आधार द्युलोक– इन पाँचो लोकोको यहाँ 'अम्भः' नामसे कहा गया है । उसके नीचे जो अन्तरिक्षलोक (भुवर्लोक) है जिसमेंसूर्य, चन्द्र और तारागण– ये सब किरणोंवाले लोकविशेष है, उसका वर्णन यहाँ मरीचि नामसे किया गया है । उसके नीचे जो यह पृथ्वी-लोक है जिसको मृत्युलोक भी कहते है. वह यहाँ 'मर' के नामसे कहा गया है और उसके नीचे अर्थात् पृथ्वीके भीतर जो पातालादि लोक है, वे 'आपः' के नामसे कहे गये हैं । तात्पर्य वह कि जगतमे जितनेभी लोक त्रिलोकी, चतुर्दश भुवन एवं सप्त लोकोके नामसे प्रसिद्ध है, उन सब लोकोकी परमात्माने रचनाकी फिर समष्टि स्वरूप ब्रह्माकी रचना किया किन्तु परमात्माकी बहुभवनकी इच्छा पूरी हुई नही क्योंकि जैसे पिता अपने पुत्रके लिये रहेनेकी और खानेदानेकी व्यवस्था करता है ऐसे तो अभी हुआ नही– ।

जीवोने प्रार्थना कि हे भगवन हमारे लिये रहेनेके लिये पहले तो योग्य स्थान शरीर चाहियें– तो

ताभ्यो गामानयत्ता अब्रुवन्न वै नोऽयमलमिति ताभ्योऽश्वमा नयत्ता अब्रुवन्न वै नोऽयमलमिति ॥

(ऐत० २–२–२)

इस प्रकार उनके प्रार्थना करनेपर सृष्टिकर्ता परमेश्वरने उन सबके रहनेके लिये एक गौका शरीर बनाकर उनको दिखाया उसे देखकर उन्होने कहा– 'भग-

बब। यह हमारे लिये पर्याप्त नही है, अर्थात् इस शरीरसे हमारा कार्य अच्छी तरह नही चलता । इससे श्रेष्ठ किसी दूसरे शरीरकी रचना कीजिये।' तब परमात्माने उनके लिये घोडेका शरीर रचकर उनको दिखाया। उसे देखकर वे फिर बोले– भगवन। यह भी हमारे लिये यथेष्ट नही हैं, इससे भी हमारा कार्य नही चल सकता। आप कोई तीसरा ही शरीर बनाकर हमें दीजिये।

ताभ्यः पुरुषमानयत्ता अब्रुवन् सुकृतं वतेति। पुरुषो वाव सुकृतम्। ता अब्रवीद्यथायतनं प्रविशतेति ॥

(ऐत० २–२–३)

परमात्माने उनके लिये तब पुरुषकी अर्थात् मनुष्य शरीरकी रचना की और वह उनको दिखाया । उसे देख ही सब देवता बडे प्रसन्नहुए और बोले– यह हमारेलिये बहुत सुन्दर निवासस्थान बन गया।

जब सब देवताओं ने उस शरीरको पसंद किया, तब उनसे परमेश्वरने कहा तुमहोग अपने अपने योग्य स्थान देखकर इस शरीरमें प्रवेश कर जाओ। तो परमेश्वरकी आज्ञापाकर अग्नि देवताने वाक्इन्द्रियका रूपधारण किया और पुरुषके मुखमें प्रविष्ट होकर जिव्हाको अपना आश्रय बना लिया। यहाँ वरूणदेवता भी रसनाइन्द्रिय बनकर मुखमें प्रविष्ट हो गये, वह बात अधिक समझ लेनी चाहिये। फिर वायुदेवता प्राण होकर नासिकाके छिद्रोसे (उसी मार्गसे समस्त शरीरमें) प्रविष्ट हो गये। अश्विनीकुमार भी प्राणइन्द्रियोंका रूप धारण करके नासिकामें प्रविष्ट हो गये– यह बात भी यहाँ उपलक्षणसे समझी जा सकती है, क्योकि उसका पृथ्क वर्णन नही हैं। उसके बाद सूर्यदेवता नेत्र–इन्द्रिय बनकर आँखोमें प्रविष्ट हो गये। दिशाभिमानी देवता श्रोत्रेन्द्रिय बनकर दोनो कानोमें प्रविष्ट हो गये। औषधि और वनस्पतियोके अभिमानी देवता रोम बनकर चमडेमे प्रविष्ट हो गये तथा चन्द्रमा मनका रूप धारण करके हृदयमें प्रविष्ट हो गये। मृत्युदेवता अपान का रूप धारण करके नाभिमें प्रविष्ट हो गये। जलके अधिष्ठातृ देवता वीर्य बनकर लिङ्गमें प्रविष्ट हो गये। इस प्रकार सबके सब देवता इन्द्रियोके रूपमें अपने अपने उपयुक्त स्थानोंमें प्रविष्ट होकर स्थित हो गये।

यह मनुष्य पुरुष मेरे बिना कैसे रहेगा ? यदि इस जीवात्माके साथ मेरा सहयोग नही रहेगा तो यह अकेला किसप्रकार टिक सकेता ? भावयह कि मेरे बिना इन सब इन्द्रियोद्वारा कार्य सम्पन्न करलेना इसकेलिये असम्भव है।

यह सोचकर परमात्माने विचारकिया कि मैं किसमार्गसे प्रविष्ट होऊ ।

परमात्मा इस मनुष्य शरीरकी सीचा (मूर्धा) को अर्थात् ब्रह्मरन्ध्रको चीरकर (उसमें छेद करके) इसके द्वारा उस सजीव मनुष्य शरीरमें प्रविष्ट हो गये और हृदयमें बैठ गये । तो प्रवेश माने आभास रूपसे ही आना और जानेका मार्ग यही है, किन्तु माया भगवती बडी चतुर है इसने उसको बन्ध कर दिया ।

आज भी तो जब बच्चेका जन्म होता है तो तालु पोल होता है कि नही ? बह ब्रह्मरन्ध्रकी सूचना देता है । इसका ध्यान करो । परमात्माका प्रवेशका अभिप्राय है परमात्मा अभिव्यक्त हुआ । घरमें रहते है और घरमें प्रवेश करते है तो ऐसा मत सोचोकी परमात्माने इसको (इसघरको– शरीरको) बनाया फिर प्रवेश किया आभास मात्र देवता है– वह सूक्ष्म शरीरमें पहले से ही विद्यमान है ये नही की स्थल शरीर बनेगा तब ये प्रवेश करेगा ।

माता– पिताके शरीरमें आता है तब वह आत्माही है– फिर वह शरीरको बनाता है– तो जिसकी सत्तामें ये इतना सुन्दर शरीर बनता है उसमें ज्ञान है कि अज्ञान है ।

सोचोतो शरीरको कैसे बनाया– एक अगुली कोही देखो तो उसमें तीन गांठसे जोडे बनाये– क्योंकि ये मुठ्ठी कैसे बन्ध करेगा ये बिचार है ज्ञान है इसके अन्दर । अगर यह विवेक नही होता तो एक ही हड्डी रखा देता– तो भोजन कैसे करते । एक हाथके बनाने में कितना बडा विज्ञान है– वह सर्बज्ञ कौन होगा? जिसका ज्ञानरूप तप है वह सर्वज्ञ ।

यः सर्वज्ञः सर्वविद्यस्य ज्ञानमयंतपः । (मुण्ड० १–१–९)

तो परमात्मा अपने ज्ञानके द्वारा प्रकृति जगतके कण कणका दर्शन करता है । मायासे जगत सब स्वभावसे ही चल रहा है । जंसे कोई बुद्धिमानने यह घडी बनाके रखदी तो अब ये अपने स्वभावसेही चल रही है– चलना नही पडता । उसकी सत्तामें जब तक ये चेतना आत्मा शरीरमें रहेगा ये शरीर बनता रहेगा ।

पंचीकरण जब हुआ तो ब्रह्म जो था– वह विराट विष्णु बन गया– विष्णु– माने व्याप्तोति सर्वम् सबको व्याप्तकरे वो विष्णु– सारे ब्रह्माण्डकी ये आत्मा बना तो सोचो तुम्हारे देहकी भी आत्मा बना की नही ? तो तुम्हारेको विष्णुके दर्शन करने कही जानेकी जरूरत नही– यही उसके दर्शन करो । समष्टि शरीरमें आनेसे विराट कहलाया और व्यष्टि शरीरमें आनेसे विश्व ।

अब यह आत्मा– समष्टि शरीरमें आया तो सगुण साकार भावमें आ गया– विष्णु रक्षा करनेवाला है इसलिये मन्दिरमें कही भी मूर्ति मिलेगी शंख–चक्र गदा–पद्म युक्तही मिलेगी– । अब व्यष्टि शरीरकी बात सोचो तो तुम जब व्यष्टि शरीरके अहंकारी बनेतो तुमको इसके भूख प्यासका ज्ञान होगा– पडोशीको नही– तो इस तरह अपने ज्ञानको जाग्रत रखोगे तो सब ऐश्वर्य मिलेगा बेहोंशीमें न तो ज्ञान और ना कर्म– अब जब ज्ञान और कर्मने छोड दिया तो वासनाका बजार तो गर्म है ही तो धर्म यहाँ पर ये कि अपने ज्ञानकी रक्षाकरो अपने भोजनको ठीक रखो– नशा बढे बेहोशी बढे ऐसा भोजन मत करो ।

सात्त्विक राजसिक और तामसिक यह तीनोगुण है भोजनमें प्रबलरजोगुणकी एवम तमोगुणी भोजन न ग्रहण करे । शरीरवत्की रक्षा करकेकर्म करो– आज ही कर्मको खतम करना है ऐसी इच्छा मत करो हम सब नही कर शकते– ऐसा सोचले लोभका संयम करो । हमको दवाना नही चाहिये तब ज्ञान जाग्रत हो जायेगा । विश्व एक स्थूल शरीरमें अहंकार कर रहा है पुरुषोहम्– स्स्त्यहम् अब इसको जो देना है । क्योंकि पशुके लिये तो कोई उपदेश नही । किन्तु मनुष्य शरीरमें परमात्माने सुन्दर मन– बुद्धि एवम कर्मेन्द्रिया रखी है तो ज्ञानके लिये– जो सगुण-निराकार– भगवान शिव है मनुष्क उसकी उपासना करे उससे उसको सब ऐश्वर्य इच्छानुरूप देता है और मायाको हटाके ज्ञानकीवृद्धि कर देता है । अब दो मिनेट सीधे होके ध्यान करो–

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. १४

ॐ सेयं देवतैक्षत हन्ताहमिमास्तिस्रो देवता अनेन जीवेना-
त्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरवाणीति ।।२।।

ॐ तासां त्रिवृतं त्रिवृतमेकैकां करवाणीति सेयं देवतेमास्तिस्रो
देवता अनेनैव जीवेनात्मनानुप्रविश्य नामरूपे
व्याकरोत् ।।३।।

ॐ तासां त्रिवृतं त्रिवृतमेकैकामकरोद्यथा तु खलु सोम्येमा-
स्तिस्रो देवतास्त्रिवृदेकैका भवति तन्मे विजानीहीति ।।४।।

ॐ यदग्ने रोहितं रूप तेजसस्तद्रूपं यच्छुक्लं तदपां यत्कृष्णं
तदन्नस्यापागादग्नेरग्नित्वँ वाचारम्भणं विकारो नामधेयं
त्रीणि रूपाणीत्येव सत्यम् ।।१।।

ॐ यदादित्यस्य रोहितं रूपं तेजसस्तद्रूपं यच्छुक्लं तदपां
यत्कृष्णं तदन्नस्यापागादादित्यादादित्यत्वं वाचारम्भणं
विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाण्येव सत्यम् ।।२।।

ॐ यच्चन्द्रमसो रोहितं रूपं तेजसस्तद्रूपं यच्छुक्लं तदपां
यत्कृष्णं तदन्नस्यापागाच्चन्द्राच्चन्द्रत्वं वाचारम्भणं
विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाणीत्येव सत्यम् ।।३।।

ॐ यद्विद्युतो रोहितं रूपं तेजसस्तद्रूपं यच्छुक्लं तदपां यत्कृष्णं तदन्नस्यापागाद्विद्युतो विधुत्व वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाणीत्येव सत्यम् ।।४।।

(छान्दो० ६–३–२।४, छान्दो० ६–४–१।४)

तो बिचार आया पंचभूतोकी सृष्टि परमातमा पहले करता है ये पंचभूत पहिलेजब कार्यरूपमें प्रकट होंगे–उन पांचोके मन्थनसे सूक्ष्म शरीरकी रचना हुई । कारण शरीर– वह तो अविद्या है अज्ञान है –। संसारकी प्रवृत्तिका कारण अविद्या है–

यत समात कारणम् संसार प्रवृत्ते । यह अविद्या जब निवृत्त हो जायेगी तो सुक्ष्म शरीरकी पकडसे जीव छूट जायेगा इसका नाम है मोक्ष । उदाहरणके लिये समझो रस्सीमें सर्पभ्रम हो जाता है कभी उस समय आदमी सर्प सर्प चिल्लाता है ।

रस्सी स्वरूपका ज्ञान नही होनेसे अज्ञानही सर्पके आकारमें खडा हो गया–और सर्प नामकी कोई वस्तु वहां नही किन्तु रस्सीके अज्ञानसे सर्प नामकी वस्तु वहां भासनेलगी । अज्ञानके बससे ही सर्प भासनेलगी– भय हो गया तो चिल्लाये भी कुछ चोट भी लगी । रस्सी रूपका ज्ञान होता तो ये कुछ भी नही होता । ऐसे ही जगत मूल, नामरूप प्रपंचका मूल कारण अविद्या भगवती ही है– जब ब्रह्मतत्त्वका बोध हो जायेगा– सत्– चित् आनन्दरूप जो आतमा उसमें जब मनकी स्थिति होगी तो देहाकार छूट जायेगा । यह परा देवता अपने स्वरूपमें ये नाना नही नाना जो होगा वह मायिक रूपसे होगा ।

ये परा देवता सोचना है मैं जीवरूपसे प्रवेशकर अब जीवकी भी अपने व्याख्या करके आये है कि परा देवताका बुद्धिमें जो आभास है– वह साभास बुद्धि ही जीव है जैसे सूर्यका आभास जलमें पडा अब यह जल अनेक पात्रोंमें भरा है इसलिये आभास अनेक रूपसे दिखा– आभास सत्य नही सत्य तो एकमात्र ये परा देवता ही है– इसलिये इस परा देवता सत्– चित् आनन्दरूप में आभास मात्रसे जीव भाव आनेसे नाम रूपकी सृष्टि बनी –

तो आगे श्रुति कहते है यह तीनो भूतोका त्रिविधीकरण किया तो आगे मिलानेकी क्या किया है– तो कहते है जहां पृथ्वी है वहां पृथ्वीतत्त्व प्रधान होगा और उसमें जल और तेज तत्त्व गौणहोगा । जहां जल तत्त्व प्रधान होगा और

उसमें पृथ्वी और तेज तत्त्व गौणहोगा। जहाँ तेज तत्त्व प्रधान होगा वहाँ पृथ्वी और जलतत्त्व गौण होगा तो वहाँ क्रिया जो होगी तेज प्रधान होगी।

यह पंचीकरण उपलक्षण समझो। भूतमें मानलो पृथ्वी तत्त्व है अब पृथ्वी तत्त्वके दो भाग कर दिये– आधे भागमें पृथ्वी तत्त्व और आधेके चार टुकडे करके एक एक सब भूतोको दे दो पाँच भूतोके पंचीकरण होगे ये पाँचोभूत आपसमें मिल जाते है अब इन्ही भूतोके द्वारा ये नाम रूपकी सृष्ठि होगी जैसे हम लोगोके शरीर इन पाँच भूतोसे बने है किन्तु हमारे इस शरीरमें पृथ्वी तत्त्वकी प्रधानता होनेसे इसको पार्थिव कहते है।

महाऋषि उद्दाकल अपने प्रिय बेटे श्वेतकेतुको समझाते हुये आगे कहते है।

ॐ तासां त्रिवृतं त्रिवृतमेकैकामकरोद्यथा तु खलु सोम्येमास्तिस्रो देवतास्त्रिवृत्त्रिवृदेकैका भवति तन्मे विजानीहीति ।।

(छान्दो० ६–३–४)

महाऋषि कहते है देखो तेरेको त्रिवृत कर्म हम समझाते है ये जो देवता है- तीन– एक एक भूत त्रिवृत होगया एकमें तीनो मिलके रहेंगे जो प्रधान तत्त्व होगा उसीके अनुसार काम होगा और दूसरे भूत सहायक है। जैसे हमारा यह शरीर– पार्थिव है तो पृथ्वी ही जीवनी शक्ति है पृथ्वीको छोडके जीना मुश्कील हो जायेगा– मानलो आज विज्ञानका युग है– और आप कही लोक लोकान्तरमें भी चलेजाये फिरभी आपको पृथ्वी तत्त्व तो चाहिये– तो यहींसे सचय करके ले जातेहै।

इस बातको और आगे समझाते हुये दृष्टान्त देते है

ॐ यदग्ने रोहितं रूपं तेजसस्तद्रूपं यच्छुक्लं तदपां यत्कृष्णं तदन्नस्यापागादग्नेरग्नित्वं वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाणीत्येव सत्यम् ।।

(छान्दो० ६–४–१)

देखो बेटा इस अग्नि तत्त्वके अन्दर रोहित माने लाल रूप दिखाई पडता है वो अग्निमें ये कहाँसे आया तो ये रूप तेजसे आया और अग्निमें सफेद रूप प्रतीत हो रहा है– तो ये जलसे आया– क्योंकि जलका स्वरूप भास्वर शुक्लम् जलम्।

श्रौर श्रग्निके अन्दर कुछ कालारूप भी है तो ये पृथ्वीसे आया। अग्निकी ज्वालामें तीन प्रकारके रूप प्रकट होते है इसका अर्थ है- पृथ्वी, जल, तेज ये तीनो मिलकरही अग्नि है स्वतंत्र अग्नि तत्त्वतो कुछ भी नही है- इसलिये अग्नि नामरूप है। बेटा अग्नि प्रतीत तो होता है अग्नि है नही।

तीन ही तत्त्व अग्निके रूपमें प्रकट है- अग्निशब्द तो वाणीका विलास मात्र है।

जैसे एक एक धागेको जोडते जाओ तो वस्त्र बन जायेगा और धागेके रंगाके अनुसार काला- पीला वस्त्र बन गया किन्तु अगर एक एक धागेके खींचके निकालते जाओ तो कुछ भी नही वस्त्रका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नही-।

तत्त्व जो है एक स्वरूपमें उसमें कोई विकृति नही रूप बदलता जायेगा। वस्त्र जो है अपने कारणकाही रूपान्तर है स्वतंत्र कुछ भी नही इसलिये ये मिथ्या है।

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते, नान्तो न चादिर्न च संप्रतिष्ठा।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूलमसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा॥

(गीता १५-३)

हमारा यह शरीर चेतन दिखता है- सत् दिखता है। शरीर अपनी सकलमें बदलता है कि नही? देखते देखते बच्चा- कुमार हो गया- कुमारसे फिर युवान हो गया युवानसे बुढ्ढा हो गया- फिर भी चेतनकी छांयामें यह शरीर प्यारा ही है। यह अहम्‌रूपसे भासमान चेतना तो है वही प्यारा है- उस चेतनको देखनेका प्रयत्न नही करते हमलोग और शरीरकी परिक्रमा करते रहेते है और जीवनका अन्त कर देते है। यही बडा अज्ञान है।

जैसे कोई मार्केटमें गया और अपने घरको भूलगया तो कब लौटके आयेगा? भूल चूका है अपने घरको तो जब कोई घरकी स्मृति देगा तो ये घरका रास्ता पकडेगा- ऐसे ही उपनिषद विद्या जीवको उसके स्वरूपकी स्मृति देती है- तो जब स्मृति होगी तो ये अविद्याको छोड देगा अनात्मा अहंकारको छोड देगा। इसलिये यहांपर भगवान कृष्ण अर्जुनको समझाते हुये कहते है- इस संसारका कोई रूप नही- तो अर्जुन कहते है हे भगवान्। तब तो ये अपने आप निवृत्त हो जायेगा- क्योंकि इसका तो कोई रूप ही नही इसलिये हमतो अपने खानेदाने मे ही लगे रहें- हमतु जगतसे मुह मोडे जिस दिन ये खतम हो जायेगा हमारा भी मोक्ष हो जायेगा-

भगवान कहते है– बेटा इसका अन्त होनेवाला नही एकरूपका अन्त होगा दूसरा सामने आ जायेगा बेटा तूं छूटनेवाला नही क्योंकि– नान्तो न चादिर्न च संप्रतिष्ठा– इस संसारका आदि नही अन्त नही कारण भी नही मायामय चल रहा है है । जैसे सोते ही स्वप्न चालु हो गया तो– उस स्वप्नको कोई अकलसे थोडे ही बनाया– वह तो तुम्हारे संस्कारका खेल है–अपने आप ही चालु हो गया तुमको द्रष्टा बनाके रख दिया– अब द्रष्टा बनाके रखनेके बादमें तुम्हारा उसमें आसक्ति हो गई – मोह हो गया– तुम सुखी दुःखी होने लग गये– किन्तु यह तो स्वप्न है कल तक भी रहेगा नही– तो इसकी कोई प्रतिष्ठा भी नही ।

इसी तरह यह संसार भी सब प्रतीति मात्र है मिथ्या है । महाऋषि उद्दालक और आगे दृष्टान्त देकर समझाते है

ॐ यदादित्यस्य रोहितं रूपं तेजसस्तद्रूपं यच्छुक्लं तदपां यत्कृष्णं तदन्नस्यापागादादित्यादादित्यत्वं वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाणीत्येव सत्यम् ।।

(छान्दो० ६–४–२)

ये जो महान आदित्य है– आदित्य माने सूर्य– महाऋषि आदित्यका व्याख्या करते हुए कहते है अदनात् आदित्य– सबको जो भोजन करले ये आदित्य सबके रसको खींचके खा रहा है– नही नाले पर्वत पृथ्वी हमारे ये शरीर– सूर्य सबका रसको ले रहा है देखते देखते ही हमारी आयु खा रहा है और हम बर्थ जन्म-दिन डे मनाते है । सोचो बडी सुन्दर एक रोटी है उसका एक टूकडा खा गया कोई तो वह रोटी पूरी है की अधूरी ? अधूरी ही है– तो हम लूट रहे है– और बर्थ डे भी मना रहा है ।

तो अपने विचार कर रहेथे– की ये जो आदित्य है इसमें तीनरूप प्रतीत हो रहे है लालरूप जो तेजसे प्रतीत हो रहा है– शुक्लरूप जलसे और कृष्णरूप पृथ्वीसे प्रतीत हो रहा है । तो यह तीन भूत मिलके ही आदित्य खडा हो गया– ये आदित्य कहनेकी एक भाषा मात्र है कोई तत्त्व नही । वाणीका विलास मात्र है । स्वतंत्र कोई तत्त्व नही । तीन रूप– पृथ्वी, जल, तेज स्वरूपमें सत्य है इसने जो कल्पित हो रहा है वह मिथ्या है– नामरूप देखने मात्रका ही है ।

बुद्धिमान एस मूलतत्त्वमें दृष्टि रखे । सारा ब्रह्माण्ड और ये तीनो मूल तत्त्व भी जिसमें कल्पित है वह मूल तत्त्व है । उस मूल तत्त्वमें ध्यान देनेकी

जरूरत है। व्यवहारमें नामरूपका उपयोग है जैसे कोई घरवालीको– लाके चूडी– दे सोनेकी तो वह प्रसन्न होगी अगर कोई उठाके सोनेकी पगडी दे दे तो गुस्सा करती है की इसका हम क्याकरे? मतलब व्यवहारमें नामरूपका उपयोग है।

ॐ यच्चन्द्रमसो रोहितं रूपं तेजसस्तद्रूपं यच्छुक्लं तदपां यत्कृष्ण तदन्नस्यापागाच्चन्द्राच्चन्द्रत्वं वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणिरूपाणीत्येव सत्यम्॥

(छान्दो० ६–४–३)

महाऋषि दूसरे दृष्टान्तके द्वारा समझाते हुअे कहते है हे बेटा– यह जो चन्द्रमाके अन्दर लालरूप प्रतीत हो रहा है वह तेजका है– और सफेद रूप जो दिख रहा है वह तो जलका समझो और कृष्ण रूप जो दिख रहा है वह पृथ्वी का समझो– तो चन्द्रमाका इन तीन भूतोके अतिरिक्त कोई अस्तित्व ही नही है– चन्द्रमा ये नाम तो केवल भान मात्र है वाणीका विलास है। भानमात्र पदार्थ सत्य नही होता।

रस्सीमें सर्पका भान हो रहा है तो सच्चा सर्प वहाँ दिखता है की जूठा? समझोगे भला? अगर जूठा मालुम पडेगा तो फिर डरेगा क्यों? तों सर्पके अन्दर सत्यता आयी कहाँसे? तो कहेना पडेगा अधिष्ठानकी सत्यताही कल्पित की सत्यता है। अधिष्ठानकी सत्ता वही कल्पितके अन्दर प्रतीत हो रही है।

शरीरके अन्दर सत्यता आत्माकी ही भास रही है इसलिये ना ये आत्मा जैसा प्यारा लग रहा है। और जिसदिन आत्माकी सत्यता छोड देगी तो ये मुरदा हो जायेगा कोई इसको प्या नही करेगा।

ॐ यद्विद्युतो रोहितं रूपं तेजसस्तद्रूपं यच्छुक्लं तदपां यत्कृष्णं तदन्नस्यापागाद्विद्युतो विद्युत्त्वं वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाणीत्येव सत्यम्॥

(छान्दो० ६–४–४)

अब विद्युतके स्वरूप समझाते हुअे कहते है कि विद्युतमें जो लालरूप प्रतीत हो रहा है वह तो तेजका है– और सफेद रूप दिख रहा है वह जलका है और जो कालास्वरूप दिखरहा है वह पृथ्वीका है। तो ये तीन रूप ही बिजली के रूपमें दिखनेलगे– विद्युत्त्व तो भान मात्र है कल्पित है। तीन मूल तत्त्व ही सत्य है।

द. नं. ९४३५

NEPAL SANSKRIT UNIVERSITY
पुस्तकालय

जैसे शरीरके अन्दर पृथ्वी तत्वकी प्रधानता है किन्तु उसमें जल- तेज, वायु आकाश आदि पाँचोंकी मिश्रण है इसलिये यह देह पाँच भूतोका विकार है ।

शरीर कल्पित है- किन्तु चेतनके समीप होकर ये चेतन जैसा हो गया ।

जड प्रकृति चेतनकी ऐसी भक्ति करेगी तो चेतनमय चिन्मय हो जायेगी ।

चेतनके समीप प्रकृति पहुँची तो चिन्मय होगई तो अब इसके समीपमें आयेगा वह मोहासक्त हो जायेगा क्योंकि मनुष्य शरीरसे ही व्यवहार होगे यह शरीर ही बेटाबेटी बनेगा- तो शरीरकी प्रधानता होनेसे व्यवहारमें शरीरमें मोह हो जायेगा । किन्तु सोचो जीवनमें चेतन आत्मा नही होगा तो ये कुछ बनेगा ?

चेतनके विना यह शरीर कुछ भी नही इसलिये ये मिथ्याहै वेदान्त विद्या इसवातको समझाती है कि देहादि अहंकारमें अपनेको मत बाँधो ।

संस्कार बल से यह जीव चल रहा हैं । जैसे गौ चरने गई हां तो वह सामको वापस आके खडी हो जाती है चाहे घरवाले उनको देखे या नही- इधर उधर कही नही गई- संस्कार वैसे है की मेरे खडे होनेकी जगह यही है । गौ संस्कारसे अपने खुंटेको पकडके बैठी ऐसेही अनादि अनंतकालसे जीवके सस्कार है इसलिये ये देहको पकडके बैठा है- । महाऋषि उदालक अपने प्रिय पुत्रको इस देहाहंकारसे उपर उठानेके लिये तत्वकी समीक्षा करते है- पंचीकरणको स्पष्ट करके आगे चलते हैं ।

आज तो समय हो गया है-

सीधे होके बैठो दो मिनट ॐ कार की ध्वनि करके ध्यान करो ।

हरि ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. १५

ॐ यद्विद्युतो रोहितं रूपं तेजसस्तद्रूपं यच्छुक्लं तदपां यत्कृष्णं तदन्नस्यापागाद्विद्युतो विद्युत्वं वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाणीत्येव सत्यम् ।।

ॐ एतद्ध स्म वै तद्विद्वांस आहुः पूर्वे महाशाला महाश्रोत्रिया न नोऽद्य कश्चनाश्रुतममतमविज्ञातमुदाहरिष्यतीति ह्येभ्यो विदाञ्चक्रुः ।।

ॐ यदु रोहितमिवाभूदिति तेजसस्तद्रूपमिति तद्विदाञ्चक्रुर्यदु शुक्लमिवाभूदित्यपां रूपमिति तद्विदाञ्चक्रुर्यदु कृष्णमिवाभूदित्यन्नस्य रूपमिति तद्विदाञ्चक्रुः ।।

ॐ यद्वविज्ञातमिवाभूदित्येतासामेव देवतानां समास इति तद्विदाञ्चक्रुर्यथा नु खलु सोम्येमास्तिस्रो देवताः पुरुषं प्राप्य त्रिवृत्त्रिवृदेकैका भवति तन्मे विजानीहीति ।।

(छान्दो ६-४-४।७)

तो बडा रहस्यपूर्ण विचार चल रहा । यह जगत है कैसे बना है– छान्दोग्य उपनिषदमें श्रुति स्पष्ट करती है कि परमात्माने सबसे पहले तीन देवताकी सृष्टिकी– पृथ्वी, तेज ग्रौर जल फिर जीव रूपसे देवताग्रोमें प्रवेश करूँ यह संकल्प किया ग्रौर फिर ग्रागे सृष्टि करूँ– इसके लिये इन भूतोको ग्रापसमे मिलना पडेगा–, जैसे कोई छोटासा मकान बनाना हो तो कितनी वस्तुऐं मिलानी पडती है । तो परमात्माने संकल्प किया मैं इन भूतोका त्रिवृतकरण करूँ– श्रुति यहाँ तीनो भूतोका नाम लेती है पृथ्वी– तेज ग्रौर जल– किन्तु ग्राकाश ग्रौर वायु का नाम नही लेती इसका ग्रभिप्राय है रूपवाला द्रव्य ही इन्द्रियोका विषय है । वायु ग्रौर ग्राकाशमें रूप– रस नही है ।

त्रिविधकरण करनेके लिये तेजको पहले पकडती है श्रुति महाऋषि उदालक कहते है ग्रपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतुसे कि हे बेटा यह जो ग्रग्निमें लालरूप तूं देखता है वह तेजका है सफेदरूप जो है वह जलका है ग्रौर कालरूप है पृथ्वीका है– तो इन तीन भूतोका मिश्रण ही ग्रग्नि है ग्रग्निका कोई स्वतंत्र ग्रस्तित्व नही ग्रग्नि शब्द नाम मात्र वाणीका विलास मात्र है स्वतंत्र कोई तत्त्व नही । किन्तु तीन रूप भी ग्रपनेमें सत्य नही उन सत्‌की महिमामें सत् है ।

सत्‌के ज्ञानसे सबका ज्ञान हो जायेगा इसलिये सबके पहले महाऋषि कहके ग्राये

येनाश्रुतं श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं विज्ञातमिति ।
कथं नु भगवः स आदेशो भवतीति ।।

(छान्दो. ६–१–३)

हे बेटा तुम इस सतको जान जाग्रोगे तो सर्व ज्ञातृत्व प्रकट हो जायेगी । तुम सर्वज्ञाता हो जाग्रोगे ।

कोई लोभ नही दे रहे है–

स्वभावसे ही जीवकी यह इच्छा है हम सबकुछ समझजाये हमारे लिये ग्रज्ञात कुछ भी न रहे । समझनेका रास्ता है यह सत्‌का है । ग्रज्ञान ही दुःख है । जब तक ग्रज्ञानके घेरेमे यह जीव रहेगा इसको ब्रह्मा भी सुखी नही कर सकता । ग्रज्ञानके घेरेमेसे बाहर नीकलेगा कब– जब सत्‌को समझेगा । इस दृष्टिसे सब जगह उस सत्‌का व्याख्यान कर रहे है । मेघोमें चमकती जो बिजली है वह भी

इन तीनों भूतोंका मिश्रण ही है–बिजलीका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नही। बिजली तो प्रतीति मात्र है।

यद्यपि प्रतीतिमात्र पदार्थ सत्य नही होता किन्तु व्यवहार में उपयोगी होता है।

तीनो भूतोंमें वह एक तत्त्व विराजमान है उस एकके जाननेसे सब जाना जायेगा। आगे महाऋषि कहते हैं–

ॐ एतद्ध स्म वै तद्विद्वांस आहुः पूर्वे महाशाला महाश्रोत्रिया न नोऽद्य कश्चनाश्रुतममतमविज्ञातमुदाहरिष्यतीति ह्येभ्यो विदाञ्चक्रुः ॥

(छान्दो. ६–४–५)

महाऋषि यहाँ समझाते है हमारे जो महाशाला महाश्रोत्रिय विद्वान हो गये वे घोषणा करते है जो हमारे कुलमें जन्म लेंगे उनको सबकुछ ज्ञान होगा– उनके लिये कुछ अश्रुत नही होगा– स्वभावसे उसकी बुद्धिके अन्दर प्रकाश होगा। मालुम पडेगा की पहले ही सुना है– कल्पना किया है। यहाँ दो शब्द और आये उसके बारेमें भी कुछ समझोले महाशाला– शालते शोभते इति महाशाल– विशाल जिसका आश्रम है ऐसा वह ऋषि है। जिनके आश्रममें रहके हजारों बच्चे पढते है– वेदाध्ययन करते हैं। महाश्रोत्रिय– वेदका सस्वर पठन एवम् अध्ययन ही नही किन्तु जो वेदके अर्थकोभी अच्छी तरह जानता है उसका अनुभव भी किया है जिसने उसको महाश्रोत्रिय कहते है। गुरुमुखसे सस्वर वेदका अध्ययन सुनो फिर उस वेदके अर्थको जानो। केवल मन्त्रको पढनेसे पुण्य नही होगा। इसलिये कहा–

अथातो ब्रह्मजिज्ञासा– वेदार्थको जानो।
ज्ञानके बिना मोक्ष नही होगा।
कर्मभीमांसामें भी एक विधान है–
यस्यै देवतायैं हविर्विहितं स्यात्तां
मनसा ध्यायन् वषट्करिष्यन्।

जिस देवताके लिये हवि बिहित है उस देवताका मनसे ध्यान करुगा– किन्तु जब मन्त्रका अर्थ ज्ञान होगा तो देवताका ज्ञान तुम्हारी बुद्धिमें आ जायेगा? श्रुति कहती है सर्वज्ञ एवं ज्ञानवान् हि सर्वज्ञो भवति।

इस तरह तत्त्वज्ञानको जाननेवाला है वह सर्वज्ञ हो जायेगा वह सर्वज्ञ है। सर्वाधार है–। इस अपने शरीरको ही देखो– सुन्दर खानेको दिया– सुन्दर घर दिया किन्तु अगर आत्मा नही तो ये जीयेगा ? क्या भोजनके आश्रयमें ही ये जी रहा है ? उस चेतन आत्माके आश्रयमें ही ये सत् जैसा दिख रहा है। जब तक बेटा उसको नही समझेगा तब तक तो इस शरीर के उपर ही तुं घूमता रहेगा जैसे पशु– पक्षी घूमते रहते है। पशुको तो फिर भी सारी इन्द्रियोका स्वाद नही। एक रसना इन्द्रियोके लिये ही देखो कितने पदार्थ बना लिये है–मनुष्यने– कहते है षडरस भोजन चाहिये। एक जीभके स्वादके लिये बडा वर्ग लगा हुआ है– सुखता चल जाता है ये मनुष्य। जिस बंगलेमें हम हरेभरे हुएथे–उसीमे ही सुख गये तो सत्यकी ओर क्या लिये बेटा। क्योंकि संसारसे कुछ लेके जाओगे नही– बल्कि जो लेके आये थे वह भी खर्च हो गया। तो उस सत्यको जानो जिसके आश्रयमे ये सारी प्रजा जी रही है। उस एक जानने से सबका ज्ञान हो जायेगा– वह एक ही इन भूतोके रूपमे प्रकट हो गया– पृथ्वी– जल– तेज आदि।

शिष्य कहता है तब तो भगवान उसका जन्म हो गया ऐसा लगता है।
आचार्य कहते है– बेटा– सब माया मात्र है।

सतो हि मायया जन्म युज्यते न तु तत्त्वतः
तत्त्वतो जायते यस्य जातं तस्य हि जायते ।

(माण्डूक्यका० ३।२७)

सत् के अन्दर जन्म प्रतीति मात्र है वह माया मात्र है क्योंकि जो है उसको कैसे फिर है कहोगे ? जैसे उदाहरण से समझो।

किसी ड्रामामें लडकेको लडकी बना लिया अब कोई बुड्ढा पहुँच गया ड्रामा देखने– तो उसको तो लडकी बडी पसन्द आयी तो उसने सोचा– इसको अपने बेटेके लिये घरमे लाया जाय तो बडा अच्छा होगा– उसकी बदनकी रूप देख कर बडा स्वाद आया अब–पता करते करते उसे पता चला अरे ये तो अपना लडका ही लडकी बना है– तो बताओ अब उस नकलीरूपमें कोई स्वाद आयेगा ? जो कुछ भी है सच्चा समझलेते है तो स्वाद आता है किन्तु जब ये समझ लेते है माया-मात्र ही है तो स्वाद की जगहमें बेस्वाद होजाता है।

फिर वह स्वाद नही तो द्वेष भी नही– मोह भी नही तो चित्तमें निर्मलता आजाती है ।

तत्त्वमें अनेक रूपोकी सृष्टि मायामात्र है ।

असतो मायया जन्म तत्त्वतो नैव युज्यते
वन्ध्यापुत्रो न तत्त्वेन मायया वापि जायते ।

(माण्डूक्यका० ३।२८)

जो पदार्थ असत् होगा उसका जन्म होगा नही– न मायासे न तत्त्वसे ।

अस्ति रूपसे कहा जायेगा वहसत् है जैसे ये फूल है अस्ति कहना पडेगा– व्यावहारिक सत् है ।

किन्तु कोई दोस्त कहे– हे मित्र आज तो मेरे शरीरमें बडी पीडा है– डाक्टरको बुलाया और उसने देखा दवाई बतादी की नृसिंग ले आओ और घीसके उसका लेप करो तब पीडा ठीक होगी– अब बताओ नृसिंग– माने मनुष्यका सिंग तो बताओ ये कहाँ मिलेगा– ? तो जो असत् पदार्थ है– तीनो कालमें नही मिल सकता– वही है ही नही । तो जो असत् होगा उसका जन्म होगा ही नही ।

नाना रूप पृथ्वीका जन्म तत्त्वत नही मायासे ही है । जैसे अपने शरीरके उपर साफ समझो बचपन आया फिर रूपान्तर प्राप्ति तो ये कुमार बन गया ।

ऐसे एक पदार्थका रूपान्तरमें भान होना जन्म है मिट्टीमें घटका जन्म-तन्तुमे कपडेका भान हो गया जन्म नामकी कोई वस्तु है नही जिस समय कपडा दिखता– तब भी वह तन्तुही है ।

नामरूप चाहिये उसको तो कंकण दिखेगा किन्तु सोना चाहिये वह कंकणको नही देखेगा ।

वेदान्त भानमात्र पदार्थको मिथ्या कहता है । इसलिये जब असली सत्यको जान जाओगे तो उसमें दिखनेवाले पदार्थ मिथ्या होके दिखेगा ।

तो महाऋषि उद्दालक अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतुको मन्त्र ५ में समझाते हुए कहते हैं– कि जो इस सत्यको जाननेवाला होगा उसके लिये ये सब ही विज्ञान होगा–। और कुल परम्परामें भी सब सर्वज्ञ होंगे ।

आगे कल और तुमको समझायेंगे– सीधे होके बैठो हरि: ॐ की ध्वनि करके दो मिनट ध्यान करो–

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. १६

ॐ यदु रोहितमिवाभूदिति तेजसस्तद्रूपमिति तद्विदा-
ञ्चक्रुर्यदु शुक्लमिवाभूदित्यपां रूपमिति तद्विदाञ्च-
क्रुर्यदु कृष्णमिवाभूदित्यन्नस्य रूपमिति
तद्विदाञ्चक्रुः ॥६॥

ॐ यद्वविज्ञातमिवाभूदित्येतासामेव देवतानां समास
इति तद्विदाञ्चक्रुर्यथा नु खलु सोम्येमास्तिस्रो देवताः
पुरुषं प्राप्य त्रिवृत्त्रिवृदेकैका भवति तन्मे विजानी
हीति ॥७॥

ॐ अन्नमशितं त्रेधा विधीयते तस्य यः स्थविष्ठो
धातुस्तत्पुरीषं भवति यो मध्यमस्तन्मांसं योऽणिष्ठस्त-
न्मनः ॥१॥

ॐ आपः पीतास्त्रेधा विधीयन्ते तासां यः स्थविष्ठो
धातुस्तन्मूत्रं भवति यो मध्यमस्तल्लोहितं योऽणिष्ठः
स प्राणः ॥२॥

(छान्दोग्य. ६–४–६।७, ६–५–१।२)

तो विचार चला तत्त्वकी खोज करनेवाले जो ऋषि थे उन्होने निश्चय किया कि जो लालरूपवाला पदार्थ है वह तेजरूप है– लालपना तेजरूप है– लाल पदार्थ सचनही उसकी कोई स्वतंत्र सत्ता नही ऐसे ही जिसमें पदार्थमें सफेदपना दिखता है वह जलका रूप है स्वतंत्र कुछ नही जल ही उस आकारमें आगया है अगर हम देखेंतो जल तो सरस और कोमल होता है किन्तु कभी कभी सफेद दिखनेवाले पदार्थ कोमल नही होते । तो कहते हैं अवस्था विशेषमें जल भी पथ्थर हो जाता है हिमालयके कुछ हिस्सेमें ऐसा बर्फ है हजारो वर्षोंसे गलाही नही । सूर्यका तापही उसको मिला नही– किन्तु ये बर्फ भी जलका स्वरूप । और जो पदार्थ काला दिखता उसको उन्हो ने अन्नका रूप ही समझा । और जो कुछ समझमें नही आती ऐसी वस्तुको भी उन्होने इन तीनो तत्त्वसे ही बनी है मान लिया ।

अब श्रुति भगवती मनुष्यको बडे मूलतत्त्वका निर्देश करती है कि ये जो जगत है ये इस पुरुषके पास कैसे पहुचता है और कैसे पुरुष भावमें प्रकट हो गया । इसबातको समझाते हुए महाऋषि कहते है श्रुति भगवती पृथ्वी तेज जलको प्रधान रूपसे जगतका कारण मानती है– ये अगर तुम्हारा शरीर ही नही बनेगा– माने अगर ये किसी आकारमें नही आयेगा तो भोग किस कर्मका होगा ? महान पुण्यसे स्वर्ग जाये तो वहाँ भी स्वर्गीय देह है और वह स्वर्गीय देहभी पंच-भौतिक ही है । केवल सूक्ष्म और कारण शरीर अन्दर कर्मभोग है नही– वहा और कवर चाहिये । जब तक ये भूत तुम्हारे शरीरके आकारमें खडे नही होंगे तब तक ये परमात्माकी इच्छा है कि– मैं बहुत हो जाऊँ नानारूपसे मैं सबको दिखु– ये इच्छा तब बनेगी जब यह पांचभूत सामने प्रकट हो जाये– । इन पंच-भूतोंके द्वारा नाना भूत दिखेगा । तो पंचभूतोंका त्रिवृतकरण किया माने एक एकमें तीन तीनका मिश्रण किया ।

हमारे शरीरमें पृथ्वीकी प्रधानता है तो जल और तेज तत्त्व गौण हो जायेगा । ये त्रिवृतकरण पंचीकरणका उपलक्षण समझो । अगर कुछ करना होगा- तो मिलके चलना होगा ।

मनुष्य प्राणीको महान सुन्दर कर्म करना होगा तो मिलके चलना होगा । इसलिये मानवके लिये जो महान ऋग्वेदमें घोषणा है समवदध्वं- समगच्छध्वम्

अच्छा करनेके लिये मिलके चलना पडेगा ।

वाणीको ठीक रखना पडेगा । अपनी वाणीको मिश्रित रखोगे जैसे वह मधुमखखी होती हैना- जंगलमें खीले हुये फूल है उसमेंसे मधुर रसको ग्रहण करती

हैं कभी कभी पुष्प विषैले भी हो सकते हैं किन्तु फिरभी मधुमखखी उसमेंसे अमृत भागको निकाल लेगी । ऐसे वाणीमे स्वाद होना चाहिये जीवनके सुसम्पन्न करनेके लिये वाणीकौसंय ममें रखो । दूसरेके चित्तकी प्रसन्नताके लिये बोलोगे तो तुम्हारे चित्तमें भी प्रसन्नता आयेगी । हमारे मनकी शान्ति भी तब सुरक्षित रहेगी जब हम दूसरेकी शान्तिके लिये प्रयत्न करे ।

अच्छा सुनना हो तो अच्छा बोलो । वाणीके लिये ऋषि । परमात्मासे प्रार्थना करते है जिव्हामे मधुमत्तमा– मेरी जीभ अतिशय मधुमती– मीठी हो जाये ।

वाणीसे हम अंगार फेंकेगे तो वह जहां जायेगा जलायेगा और हम तक उसका ज्ञान निश्चय होगा– तब मनुष्य उपदेश ग्रहण करेगा और और सूक्ष्मतत्त्वकी खोजमें चलेगा । जैसे ये भूत देखलो इस चेतनकी खोजमें चलते चलते तुम्हारे शरीरके आकारमें आगये– किन्तु ये कैसे हुआ ? तो महाऋषि उद्दालक अपने प्रिय पुत्रश्वेतकेतुको समझाते हुये कहते है कि हे सोम्य– । जैसेये भूत चेतनके पास पहुँच करके वडे सुन्दर हो गये– शरीरके आकारमें खडे हो गये– तो कैसे

ॐ अन्नमशितं त्रेधा विधीयते तस्य यः स्थविष्ठो धातुस्त-
त्पुरीषं भवति यो मध्यमस्तन्मांसं योऽणिष्ठस्तन्मन : ।।१।।

(छान्दो० ६–५–१)

शरीरके ढांचेको लेकर हम चल रहे है वह शरीर कैसे बना है– कहते है पंचभूत अन्नके रूपमे सामने प्रकट हो गये– आम– अंगुर, केला, मोसम– पुरी परोठाके रूपमे तो यह पौधेको तो सुन्दर रीफाइनरी ही समझो– और मिट्टी ही सेबकी सकलमे रीफाल हो गई– या जल जो निराकार है मिट्टीमें आ गया और बीजकी सकलमें पानी ही सामने आ गया– साकार भावमें आ गया सब सुन्दर पुष्प, पत्र, फुल फल है यह सब पानीकाही आकार सामने आ रहा है । ऐसे यह पंचभूत ही Refine होके अन्नकी सकलमें आके हमारी थाली में पहुँच गया तो वह हमारा भजन हो गया । तो अन्न जैसे रीफाइन होके सुन्दर सकलमें– हमारे सामने पहुँच गये तो इससे एक शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये –

किसी बडे महापुरुषको मिलना हो तो महापुरुषके गुण अपनेमें धारणा करो तुम पवित्र बनो । इसलिये एक शास्त्रीय विधान भी है देवो भूत्वा देवं यजेत– देवता बनके देवपूजन करो । आसुरी प्रकृति को न छोडके देवताका भजन भी करो

ग्रीर कदाचित देवता प्रसन्न भी हो जाये तो भी तुम्हारा देवभाव नही चमकता- ग्रासुरी प्रकृति तो रहेगी ।

तो ग्रब ग्रन्न जो सामने ग्राया निर्मल होके ग्राया क्योंकि तुम निर्मल हो इसलिये इसको इतना रीफाइन होके ग्राना पडा । देखो तो एपल सेव कितना सुन्दर तत्वहै इसमें उसको फिर कवर करके रखा है हमारा भोजन बना जब ये ग्रंदर गया तो ग्रन्दर हेवी रीफाइनरी लगी हुग्री है- त रस को जुदा ग्रौर व्यर्थ स्थूल- भाग तो है उस को जुदा करके रख दिया । ग्रब रससे लोह- मांस- मेद हड्डी ग्रौर मज्जा इत्यादि ग्रन्दर ही बन रहा है इस शरीररूपी बिल्डींगके लिये ।

बुद्धिमान मनुष्य कहता है विज्ञानने कमाल कर दिया- किन्तु सोचो रक्त- माष- मेद हड्डीं मज्जा इत्यादि हम बना सकते है ? वह परमात्माकी रीफाइनरी- में ही बनता बच्चा जब जन्मता है तो कितना बडा होता है- उसके शरीरमें साथ साथमे सब तत्व बन रहे है- लोहू- मांस- मेद, हड्डी, मज्जा हड्डीमें जो Life giving Matter है उसको मज्जा कहते है । ग्रगर हड्डी सूख गई मज्जा नही रही तो हम जी नही शकते बडे इन्जीनमें जैसे ग्लीज इस्तमाल करते है- वैसे ग्रगर हड्डी टुट गई तो उसको प्लाटर करदो तो जाडनेवाला ये ग्लीज उस को जोडेगा- किन्तु जब ,डाक्टरका भी डाक्टर ग्रन्दर बैठा है तब ।- चेतन उसके प्रकाशमें जड प्रकृति मानारूप धारण करती है ग्रात्मा बैठा है तो हड्डी जूडती चली जायेगी ।

मज्जा ग्रोर भी रीफाइन होके शुक्र धातु बनता है उसको यह चेतन पकड लेता है । शुक्रधातु- हेवी वाटर है । मनुष्य सकलमें जब तक जीव प्रवेश करेगा नही यह धातु इसको मिलेगी नही तो मम्मी भी वैसी नही मिलेगी

चेतन इसको पकडके रम रहा है । पुराणोमें कथा सूनते हो- विष्णु भग- वान क्षीर समुन्द्रमें रम रहा है ।

दुनियाके किस कोनमें क्षीर समून्द्र है बतलाग्रो- ? क्षीर समुन्द्र माने क्षीरवत् समुन्द्र (दुधका समुन्द्र) ग्रौर विष्णु माने सर्व मीवयति विष्णु- तो वह चेतन जो विष्णु है कहां पडा है शेष शय्यापे । शेषका मतलब- यतः परोमास्ति जिसके बाद कुछ नही रहे वह शेष ।

नेति नेति- जो जो नाम रूप ग्राया उसका निषेध किया तो ग्रसली जो तत्त्व है इसके बाद निषेध नही हो सकता है जहां नामरूपके कारणकी निवृति

हो गई– यह सत्– चित् आनन्द रूप अधिष्ठान आत्मा वहे ब्रह्म उसका नाम हैं शेष तो जीवभावका अधिष्ठान है शेष । यह जो विष्णु कहां कल्पित हुआ प्रतीति मात्र है उपाधि हट गई तो विष्णु कहाँ रहा । जितने भी भेद है उपाधि मात्रसे है– उपाधि हट गईतो भेद कहाँ रहा ।

तो ये शेषशायी विष्णु पिताको शरीरसे माताके शरीरमें आया वहाँ घर जाकर भोजनसे शरीरको बनाया– । वही अन्न चेतनके समीपमें आतेही चिद्-भावमें आ गया– चेतना भावमें आतेही चेतनने अपने स्वरूपसे मिलाया तो ये हम– हम– हम– करने लगा ये सब भूल गया इसलिये इसको भोलानाथ भी कहते है ।

नाथ– का मतलब समझो– नाथते बध्नाति सर्वम् जो सबको बांधके सुव्य-वस्थित रखे ।

यह चेतना जब अन्दर बैठा है तो शरीरमें सब चीजे सुव्यवस्थित है– रक्त-की जगहे रक्त– हड्डी मांसकी जगह हड्डी मांस– इत्यादि सब सुव्यवस्थित मिलेगा अपनी अपनी जगह पे किन्तु जैसे ही चेतन ने छोडा- तो यह शरीर मुरदा हो जायेगा कोई व्यवस्था नही होगी इसकी । यह विष्णु चला जा रहा है सोचनेकी बात है ।

थालीके अन्दर अन्न है वह तुम्हारे अन्दर जाने पर भी वह क्या रहा–? अन्न ही रहा । और उसी अन्नका कुछ बचा अंश मलमूत्र बन गया । सोचो मलमूत्रको थालीमें या शरीरके स्वरूपमें स्वीकार करोगे ?

कौनसा स्वरूप है तुम्हारा इसमें? तो कहेना पडेगा जब थालीमें रखा अन्न तुम्हारा नही– तो मलमूत्र तुम्हारा रूप नही तो यह शरीररूप अब तुम्हारा कैसे ? उसको तुम्म अपना मानके बैठा तो तुम्हे कितना इमानदार कहेगा कोई ? इस-लिये इस इमानदारीसे उपर उठो । यह ब्रह्मविद्या इस बातको समझाती है कि तुम इतेसे उपर उठो– इस अहंकारसे बाहर निकलोगे तो तुम अपने मुक्तत्वका अनुभव करोगे । इस अहंकारसे बन्द रहोगे तो जैसे कोई वैज्ञानिक किसी शेलमें बैठता है और शुक्रतारापे चला जाता हैं– किन्तु वह उसके अन्दर बन्द ही रहेगा भले चाहे वह वहाँ पर घूमके आये । इसी प्रकार तुम्हारा बडा वैज्ञानिक है हम– हम– हम आत्मा शेलमे बन्द है– सूक्ष्म शरीर ही शेल है और सूक्ष्म शरीरके पीछे कारण शरीर– इससे मुक्तनही होगा तब तक

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननी जठरे शयनम् ।
इह संसारे खलु दुस्तारे कृपयापारे पाहि मुरारे... ।।

भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ।

तो तत्व विचार शील है वह अपने मनको अपने अनुकूल करे अपनी बुद्धि को अपने अनुकूल करे– मतलब श्रद्धासंपन्न करे तब मूल जीवनको जाननेकी इच्छा होगी तुम्हारी । करोडो करोडो शरीरोमें हम हमकी स्मृति से घूमके आये है जिसकी स्मृति करते है वो आगे कोई नही रहेगा– हमारे बेटा– बेटी माता पिता सब कहते जाते है आंख बन्द करले देखो तो कौन है– यह सब वाचारम्भणम् विकारो नाम धेयं– वाणीका विकार है भानमात्र– प्रतीतिमात्र तेरा मेरा कुछ भी नही है । मनुष्य इन आंखोसे देखले समझता है की मैं सबकुछ समझ गया– किन्तु यह तो बुद्धिका विषय है । श्रीमद्‌भगवत गीता में भी भगवान कृष्ण अर्जुनको उपदेश करते है

सुखमात्यन्तिकं यत्तद्‌बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम् ।
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वत : ।।२२।।

(गीता ६–२१)

जिस ब्राह्मी स्थितिमें ऐसे तत्त्वको समझ जायेगा– तो ये तत्त्वसे विचलित नही होगा । ठीक है कोई चाहे इसका प्राण लेता है किन्तु ये सच बोलना नही छोडेगा यह इसका दृढ विश्वास हैं । छोटासा रोग आता है तो अपने कांप जाते है इसका मतलब आत्माके अमृत्तत्वमें अभी हमारी धारणा पूरी नही है ।

आगे महाऋषि उद्‌दालक अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतुको समझाते हुए कहते है– हे वेटा जोभी हम अन्न ग्रहण करते है उसके तीन विभाग हो गये– स्थूल भाग है– था उसको तो बाहर कर दिया– जो मध्यम भाग है– मासकी सकलमें आ गये– और जो अतिसूक्ष्म भाग है अन्नका वह सारे शरीरमे नाचता हुआ हिता नामकी नाडीमें प्रवेश करके हृदयमें पहूँचता है और मनकी शक्ति बन जाताहै । मनको जाग्रत करता है । इसलिये कहते है जैसा खायेगा अन्न वैसा बनेगा मन । अन्नके अनुसार ही मन बनेगा । मनके अन्दर जोभी शक्ति है वह अन्नसे आ रही है । अगर अन्न अच्छा है तो मनके अन्दर अच्छी शक्ति आयेगी ।

एक बात और भी साथमें समझो थालमे जो भोजन है हमतो उसको ही भोजन समझते है । कोई कोई लोग तो कहते है महाराज हमतो बडा पवित्र

आहार लेते है केवल दूध पीते है फल खाते है । किन्तु वह है बडा तामसी बडा क्रोधी तो बतलाओ इस भोजनका क्या अर्थं निकला । अरे फ्रूट तो कीडा भी खाता है किन्तु देखोतो क्या सकल है उसकी ।

इसका मतलब है यह सब ज्ञानेन्द्रिया है इससे तुम भोजनले रहे हो- नाकसे गन्ध रूपी भोजन ग्रहणकर रहेहो- रसनेन्द्रियसे रसरूपी भोजन ले रहे हो । चक्षुरिन्द्रियसे रूप और त्वगिन्द्रियसे स्पर्शरूपी भोजन ले रहे हो ।

छान्दोग्य श्रुति भगवती कहती है

आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः सत्त्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः
स्मृतिलम्भे सर्वग्रन्थोनां विप्रमोक्षः ।

(छान्दो० ७-२६-२)

आहारकी शुद्धि होगी तो सत्त्वकी शुद्धि होगी- सत्त्व- चितम् मनः । आहार का मतलव जो वाहर से ग्रहण करके तुम अन्दर खींचते हो उसको आहार कहते है । रूप, रस, गन्ध शब्द-स्पर्श सबको वाहरसे अन्दरले रहे हो अगर वह सात्त्विक विषय है तो तुम्हारे मनमे सात्त्विक विचार हो जायेगा । और अगर कभी रूप ऐसा देखा के तुम्हारे मनके अन्दर खलबली हो गई तो वतलाओ निश्चल कैसे बैठोगे ।

एकबार हम यहां काठमाण्डुमें ही रहे थे- स्वामी श्रीयोगेश्वरानन्दजी भी साथमे थे- तो हम सोये पडेथे तो इतने में भूकम्प हो गया- हम दोनो तो नीचे खूले में चले आये किन्तु पृथ्वी तो कमलके पत्ते की तरह कांपने लगी- लगता था इसमें कुछ दम ही नही मालुम पडता । इस तरह वह धरतीकंप जो हुआ तो उसका असर हमारे अन्दर भी होने लग गया । तो यह जो विषय है तुम्हारे मनके अन्दर पहुँचके भृकम्प कर देते है-।

लालमुहवाले बन्दर होते है ना वे पेडपे रहते हैं जंगलमेंतो कभी उधरसे शेर- व्याघ्र निकला और जमीनमें मुह लगाके उसने हुंकार युं मारी दी तो वे बन्दर सब नीचे कैसे गिरते है पक्के आमकी तरह टप- टप... सब गिर जाते हैं- बेहोश हो जाते हैं- शेर आके एका दोका भोजन करके फिर चला जाता हैं- सबको नही मारता- क्योंकि कल भी उसको अपना भोजन चाहिये । मनमें जब विषय आता है तो धरतीकंप हो जाता है शुद्ध बुद्ध इसकी सब गायब हो जाती है इसलिये कहा जाता है की सत्सग करते रहो ।तुम्हारे मनको बल कौन देगा ?

विषयोके समाने ये कंप आयगा । तुमको होशमे रखके तुम्हारे मनको कोई डाक्टर स्वस्थ नही रख सकता । इसलिये कहते है सत्संग करो । श्रुति भगवती–

आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः

(बृ० उ० २–४–५)

किस तत्वकी महिमामें यह सारा जीवन चल रहा है उसको सुनो–शास्त्र-विद्याको समझो और शास्त्र विद्याको अपनी अनुभूतिमे ले आओ । अनुभूति है उसका नाम है विज्ञान । जबतक विज्ञानमे ज्ञान नही पहुंचेगा तब तक वह ज्ञान शब्दके घेरेमे ही है उससे तुमको कोई लाभ नही होगा– कोई पूछेगा तो बोल दोगे किन्तु तुम्हारे अन्दर राग– द्वेष– घृणा, इर्ष्या इसमे कोई परिवर्तन नही होगा । इसमें शुद्धि नही आयेगी जब तक ये राग द्वेषके जंगलमें लगा हुआ है तबतक मन कहां उस दिव्य ब्रह्म लोकमें गया ? मन गया ही नही– मन नीचेही है ।

महान दिव्यालोकको पानेके लिये मनको मुमुक्षु बडी श्रद्धासे साफ करे– इसका नाम है अन्तरशुद्धि । निर्मल बनोगेतो निर्मल ज्ञान तुम्हारेमे आयेगा । सत् चित् आनन्द रूप आत्माका ध्यान करो ।

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. १७

ॐ आपः पीतास्त्रेधा विधीयन्ते तासां यः स्थविष्ठो धातुस्तन्मूत्रं भवति यो मध्यमस्तल्लोहितं योऽणिष्ठः स प्राणः ॥२॥

ॐ तेजोऽशितं त्रेधा विधीयते तस्य यः स्थविष्ठो धातुस्तदस्थि भवति यो मध्यमः स मज्जा योऽणिष्ठ सा वाक् ॥३॥

ॐ अन्नमयं हि सोम्य मन आपोमयः प्राणस्तेजोमयी वागिति भूय एव मा भगवान्विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच ॥४॥

ॐ दध्नः सोम्य मथ्यमानस्य योऽणिमा स ऊर्ध्वः समुदीषति तत्सर्पिर्भवति ॥१॥

ॐ एवमेव खलु सोम्यान्नस्याश्यमानस्य योऽणिमा स ऊर्ध्वः समुदीषति तन्मनो भवति ॥२॥

ॐ अपां सोम्य पीयमानानां योऽणिमा स ऊर्ध्वः समुदीषति स प्राणो भवति ॥३॥

ॐ तेजसः सोम्याश्यमानस्य योऽणिमा स ऊर्ध्वः समुदीषति सा वाग्भवति ।।४।।

ॐ अन्नमयं हि सोम्य मन आपोमयः प्राणस्तेजोमयी वागिति भूय एव मा भगवान्विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच ।।५।।

(छान्दो ६-५-२ । ४, ६-६-१ । ५)

प्रश्न चलाथा तीन देवता– पृथ्वी, तेज, जलको श्रुति देवता शब्द से कहती है क्योंकि ये वडे प्रकाशवान है– यह तीनो देवता जिस समय पुरुष आत्माके पासमे प्राप्त हुए– तो चेतनके पासमें आनेसे यह जड भूत भी चेतनरूपमें ही दिखने लगे देखनेमें पृथ्वी जल है– तेज भी जल भी– किन्तु चेतन आत्माके समीप पहुँचते ही ये चिन्मय हो गये। आगे श्रुति कहती है जो भी अन्न हम खाते है तीन भागमें विभक्त हो गया स्थूल भाग है वह तो मल होकर वाहर नीकल गया। मध्यम भाग है वह मांस बनकर शरीरका हिस्साबन गया। और सूक्ष्म जो भाग है वह मनके रूपमें आ गया। मन इन भूतसे ही उपचय (वृद्धि) पा रहा है और ये नही मिलगे तो अपचय (ह्रास) हो आयेगा।

वृद्धि और ह्रास मनके अन्दर इन भूतोके द्वारा देखनेमे आया इसलिये यह निश्चय हुआ की ये मन भौतिक पदार्थ है। भूतोसे बननेवाला।

कुछ वैशेषिक मत में माननेवाले लोग है– वे दार्शनिक कहते है– नित्यम् मनः मन नित्य है और निरवयव है। किन्तु आचार्य शंकराचार्यजी कहते है जब ये भौतिक है तो नित्य हो नही सकेगा और निरवयव भी नही होगा। क्योंकि भूतों से ये वृद्धि और ह्रासको प्राप्त होता है। तो कोई पूछते है– आचार्य से की हे भगवान फिर उन्होने ऐसा क्यों कहा ?

आचार्य ने तब कहा दूसरे भूतोकी अपेक्षा– यह मन सूक्ष्म होनेसे निरवयव कह दिया– स्वयं निरवयव नही। और दूसरेकी दृष्टिसे इसको नित्य भी कहा– क्योंकि हम देख रहे है दूसरे भूत जल्दी जल्दी नष्ट हो रहे है। मनका जल्दी नाश होता नही इसलिये यह जो मन है यह सापेक्षित नित्य है– सापेक्ष यह निरवयव है।

इसको नित्य कहनेका रहस्य एक यह भी है की वह मन दूरतककी बात सोचता है। जो कालके गर्भमें पडा है उसके बारेमे भी संकल्प कररहा है। जो इन्द्रियोकी पकडमें नही है उसके बारेमें भी मन संकल्प करता है इसलिये भी मनको सूक्ष्म कहा– मनको नित्य कहा– सापेक्षित नित्य कहा दूसरे दार्शनिको ने। वेदान्त दृष्टिमें भी यही है– मनका नाम नही किन्तु उसका नाश भी होगा जब तत्त्वज्ञानमें मन पहुंच जायेगा। तत्त्वभूमिमें जब पहुंचेगा तो मन निवृत्त हो जायेगा। मनोनाशो ही मोक्षः।

मनने छोड देना तुम्हारेको– इसलिये पहले भी श्रुति आयी

सदेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेव द्वितीयम्। तद्धैक आहुरसदेवेदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयं तस्मादसतः सज्जायत ॥२॥

(छान्दो. ६–२–१)

एक सत् ही अद्वितीयम् है। वही नित्य है। सत् भूतोके सामने आनेसे उसमे जीवभावकी कल्पना होती है। जैसे अपने शरीरकी दृष्टिसे विचार करो जिस आकारका यह कवर आया तुम अपनेको वैंसा मान लेते हो। अगर सिंग पूंछ मिल गये तो पशु मान लिता– पक्ष लग गये तो पक्षी मान लिया कही मनुष्यका शरीर मिल गया तो– हम– हम– हम यह अहंकार मनुष्य शरीरमें चला जायेगा और फिर उसमें भी अवस्था विकार आया तो उसके अनुसार अहंकारका परिवर्तन हो रहा है जैसे बालक, कुमार, युवान, बुढ्ढा इत्यादि...

तो बाह्याकारको लेकर के अपने अन्दर जैसे अहंकारका आरोप है। इसी तरहा आभस माने चिदाभास सहित बुद्धिके सबन्धसे जो सत्– चित रूप जो चेतन है उसमें जीवभावका आरोप आया। जैसे फिल्ममें सबकुछ हो रहा है– शोक का आरोप मात्र है सोन ड्रोप हो गयातो कुछ भी नही किन्तु तुम्हारे अन्दर करुण उत्पन्न हो गई– सीन देखके तो तुम्हारा चित्त भावमें बह गया– किन्तु वहाँ पर कुछ भी नही हुआ।

श्रुति आगे जलके परिणामको समझाते हुअे कहता है जो हमने जल पिया उसका जो स्थूल भाग है वह तो मूत्र के रूपमें बाहर निकल जायेगा– जो मध्यम भाग है उससे रक्त बनेगा और जो सूक्ष्म भाग है उसमे प्राण बनता है प्राण बडा उत्तम तत्त्व है– क्योंकि याबानेषः प्राणो वसति तावान् आयु। शरीरमें प्राण है तब तक आयु।

इसलिये जल भी शुद्ध चाहिये– विकारी जल पियोगेतो प्राणके अन्दर नाना प्रकारके रोगोकी स्थिति होगी। इसलिये जलके अन्दर जो सूक्ष्म शक्ति है वह प्राणमें बलको उत्पन्न करती है।

अब तेजके परिणामके श्रुति आगे समझाती है- तेज– यहाँ घृत तेल आदि रूपमे समझे यथाश्रुत तेज नही इसके स्थूल भागसे हड्डी बनी मध्यम भागसे मज्जा और सूक्ष्म भागसे वाणी बनी। यह जो वाणीमें बल है वह घृतके परिणाम से माना गया इसलिये वाग्–इन्द्रियका ज्यादा उपयोग करनेवालोके घृत आदि ज्यादा उपयोगमे लाना चाहिये अगर ऐसा नही होगा तो वाग्इन्द्रिय कमजोर हो जायेगी अब आगे श्रुति भगवती कहती है

अन्नमयं हि सोम्य मन आपोमयः प्राणस्तेजोमयो वागिति भूय एव मा भगवान्विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच।

(छान्दो. ६–६–५)

महाऋषि उदालक अपने प्रिय पुत्रश्वेतकेतुको समझाते हुए कहते है कि हे सोम्य अन्न ही से मनकी शक्ति है– जल ही प्राणकी शक्ति है।

तब श्वेतकेतु महाऋषिसे नम्रभावसे प्रश्न करता है कि हे भगवन सृष्टिमें चुहे जैसे प्राणी है केवल अन्न काही भक्षण करते है ये वाणीसेयुक्त और प्राणशक्तिसे युक्त देखने मे आते है– वे कहाँ घृत यातेल खाते है? और केवल जलमे निवास करने वाले मत्स्य इत्यादिमें जो केवल जल पीते है वे भी मन और वाणीसे युक्त देखे जाते है– तो मेरेको इस बातको आप फिरसे समझाओ।

तब महाऋषि उदालक कहते है– हे सोम्य श्रुति भगवती तो बिलकूल ठीक कहती है किन्तु तुमने सोचने में थोडी गलती किया है क्योंकि पहले ही कहके आयेकी सारी सृष्टितो त्रिवृतकरणसे बनी है तो माने पंचीकरण– माने पंचतत्त्व मिलके चल रहे है–

इसलिये जहाँ पृथ्वी है वहाँ और चारो भी है– जैसे अपने यह शरीरमें पृथ्वी तत्त्व प्रधान होनेसे इसको पार्थिव कहाँ– किन्तु और तत्त्व भी इसमें है ही।

और एक बात समझो गौ– भैंस इत्यादि– सूखा घास खाती है– उस अन्नका स्थूल भाग तो गोबर बन गया मध्यम भाग उसके शरीरका हिस्सा– मांस रूपमें बम गया और सूक्ष्म भागसे मन और दुग्ध आदि बन गया–।

अगर गौ को तुम घास दो नही तो क्या दूधकी हंडी भरेगी तुम्हारी– तो मतलब भूतोके अन्दर सब चीजे पडी है तुम्हारी जितनी सूक्ष्म बुद्धि होगी तुम उतना निकाल लोगे– ।

पशुके लिये परमात्माने दूधकी सृष्टि किया । मनुष्यके लिये अन्नकी सृष्टि किया और देवताके लिये दो अन्नकी सृष्ठि की प्रभूत भूत आहुति जो देते है अग्निमें उसको प्रभूत अन्न कहते हैं ।

पशुके लिये पहले दूधकी सृष्टि क्योंयि आगेतो इसने सूखा घासही खाना है– और मनुष्यके लिये भी पहले दूध की सृष्टि क्योंकि जीव यूं तो सभ पशु हैं– जबतक तुम ठीकसे बोलना चलना नही जानोगे तब तक तुम्हारे लिये दूधका प्रबन्द किया हुआ है,

जगतके भूतमे ज्ञानका सम्बन्ध है इसलिये परमात्माके स्वरूपका व्याख्यान करते हुये श्रुति कहती है –

सर्वज्ञः सर्वविद्यस्य ज्ञानमयः तपः । (मुण्डको. १–१–६)

अब सबके लिये परमात्माने अन्नकी व्यवस्था किया– फिर सोचा मेरा भोजन क्या ?

जैसे बरात सजधजके नीकाली किन्तु अगर दूल्हा नही तो ये जिस घरमे जायेगी बडा पडेगाकी नही ? इसी तरहा समझो माया भगवतीकी यह बरात है दुल्हा तो वह चेतन आत्मा ही है उसके बिना इसकी शोभा क्या होगी ?

इसके लिये माया भगवती ने वाक्– मन प्राण ये तीन भोजन बनाये ।

देखते नही हो सुन्दर वाक् सुनते ही ये मस्त हो जाता है और यह प्राण ठीक है तो मस्तीसे जी रहा है और मन ठीक है तों मस्तीसे रहेगा । तीन आत्माको भोजन है इसलिये मुमुक्षु लोकजीवनमें इसको इसका उपयोग करते हुये आध्यात्म जीवनेमें इसको दे– । क्योंकि तुम्हारी आत्माको खानेको मिलता नही तो आत्मा उपवासी होगा– पाँच भौतिक शरीर तो मोटा होता जायेगा– किन्तु आत्माका लाभ होगा नही क्योंकि मन जो उसका भोजन है वह तो उसको मिला नही । मनको आत्माकी ओर कैसे फेके–? तो श्रुतिसे शास्त्रसे बुद्धिमान आचार्यको अनुग्रहसे मनको उधर फेको ।

कैसी हमारी वाणी हो–प्राण हो जो अच्छी तरहसे उसको लेके घूमे– फिरे । इसलिये परमात्मा तुम्हारी आत्मा बना है– वाक्– मन– प्राण ये देते रहोगे तो

कोई पाप नही और ये नहीं देते रहे आत्माको तो कोई पुण्य नही। आसुरी वृत्ति वाला तीनोका विचार नही करता। श्वेतकेतु फिर अपने पितासे कहता है हे भगवान मेरेको आप फिरसे वह वात समझाओ– तव महाऋषि उद्दालक फिर दृष्टान्त देकरके समझाता है

दध्नः सोम्य मथ्यमानस्य योऽणिमा स ऊर्ध्वः समुदिषति तत्सर्पिर्भवति ॥

(छान्दो० ६–६–१)

हे सोम्य जैसे कोई माता दहीका मन्थन करती है तो सार उपर आ जाता है और वाकी नीचे दब जाता है ऐसे ही यहाँ पर भी जो अन्न तुम्हारे अन्दर गया तो अन्नका मन्थन होने लगा– तो जो असली सार रूप मखन की तरह ऊपर आ गया वह मन बना– मनकी शक्तिका उपचय करना ये अन्न? अन्न नही खाओगे तो ठंडा होता चला जायेगा।

एवमेव खलु सोम्यान्नस्याश्यमानस्य योऽणिमा स ऊर्ध्वः समुदीषति तन्मनो भवति ॥

(छान्दो० ६–६–२)

ऐसे ही श्रुति आगे स्पष्ट करती है

अपां सोम्य पीयमानानां योऽणिमा स ऊर्ध्वः समुदोषति स प्राणो भवति ॥

(छान्दो० ६–६–३)

हे सोम्य जो पानी पीते है उसका भी मन्थन हुआ तो जो मलीन अंश है मूत्र बनके बाहर नीकल गया मध्यम अंश है– रक्त बन गया और जो स्वच्छ सूक्ष्म अंश है वह प्राणकी शक्तिका संबर्धन करेगा। जैसे भूमि पर वर्षा नही हुई तो भूमि सुख जायेगी तो निरस होने पर सारी बनस्पति भी सुख जायेगी– इसी तरह अपना शरीर है– पानी पीनेको नही मिला तो खून नही बनेगा तो शरीर सुख जायेगा–।

प्रकृति सब चीजे दे रही है तुम्हारेको देखनेमे पानी है अन्दर जाके रक्त बन गया– तो ये सिद्धिसे हुआ की असिद्धिसे? कई लोग कहते है महाराज सिद्धिका दर्शन कराओ– तो ये देखलो सिद्धि।

हे सोम्य अच्छी तरहा तुम समझो ये श्रुतिका विज्ञान है इसमे शंकाका कोई स्थान नही।

हे सोम्य– सोम्य माने प्रियदर्शन । पुत्रको शिष्यको प्रियदर्शन शब्दसे कहते है– जो पुत्र परंपरासे कर्मकी रक्षा करता है वह पुत्र भी प्रियदर्शन है किन्तु जो अपने जीवनको नही समझेगा और केवल भोगमें गया तो वह प्रियदर्शन नही ।

तो शिष्य जो गुरुके ज्ञानधनको धारण कर रहा है परंपरा प्राप्त श्रद्धा है भावना है उसकी रक्षा करता है वह प्रिय दर्शन है । जिज्ञासु शिष्य महान गुरुका जो दिव्य ज्ञान है उसको धारण करे– ज्ञानका प्रचार करे । मनुष्य जीवनमें केवल अन्नमात्र से नही जी शकता इसको कर्म– भावना और वडा शुद्ध ज्ञान भी चाहिये ।

अगर कर्म शुद्ध नही होगा तो कर्म इसको असुरवृत्तिमे फेक देगा । कर्म शुद्धका मतलब आत्मा परमात्माका ध्यान जिसमे होगा वह कर्म शुद्ध होगा । जिस भावनामें लोक परलोकका बोध हो वह भावनामय शरीर है इसकी रक्षा होनी चाहिये । ज्ञान क्यूं ?

यह हम कौन है सोचो । देखो शरीर तो ना ना कह रहा है की तुम हम । शरीर कहता है हम बच्चे थे तो तुमने हमको पकड लिया– तो हम छीपके कुमार बन गये–फिर तुमने पकडा तो हम कुमार से जवान बन गये– यही शरीर ही हमारा गुरु है । बुढ्ढे को पूछो– अच्छा नही लग रहा है तो जाओ– किधरसे नीकलोगे– तो दरवाजे तो बन्द है तो आत्माका बोध होगा तो दरवाजे खुलेगे ।

इसलिये पहलेही तत्त्व विज्ञानको प्राप्त करो । यह मनुष्य शरीर तो पुण्य देह है । तुम्हारा पारिवारिक– सामाजिक, राष्ट्रिय जीवन भी है इसका भी उपकार करते हुए अपना भी उपकार करो । राष्ट्रसे निरपेक्ष नही हो इसकी भी रक्षा करो । जैसे जिस गौका दूध हम नीकालते है घासभी उसको देना पडेगा– ।

जीवन तो वह है जो बिलकुल वैज्ञानिक हो । इस तरह प्रेक्टीकली जीवन-पकडके चले ।

अन्नमयं हि सोम्य मन आपोमयः प्राणस्तेजोमयी वागिति भूय एव मा भगवान्विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच ।

(छान्दो॰ ६–६–५)

अन्नकी है प्राणमें शक्ति है– मनमे जितनी शक्ति है वह वाणीमें जो शक्ति है जलकी है और वाणीमें जो शक्ति है घृतसे है । ये स्वतंत्र कुछ भी नही ।

तो श्वेतकेतु कहता है हे भगवन अभी कुछ समझमें तो आया है फिर भी मनमे तृप्ति पूरी नही हुई– ।

महाऋषि कहते है आगे तेरको कल हम समझायेंगे थोडी देर ध्यान करो–

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. १८

ॐ षोडशकलः सोम्य पुरुषः पञ्चदशाहानि माशीः काममपः पिबापोमयः प्राणो न पिबतो विच्छेत्स्यत इति ।।१।।

ॐ स ह पञ्चदशाहानि नाशाथ हैनमुपससाद किं ब्रवीमि भो इत्यृचः सोम्य यजूंषि सामानीति स होवाच न वै मा प्रतिभान्ति भो इति ।।२।।

ॐ तं होवाच यथा सोम्य महतोऽभ्याहितस्यैकोऽङ्गारः खद्योतमात्रः परिशिष्टः स्यात्तेन ततोऽपि न बहु दहेदेवं सोम्य ते षोडशानां कलानामेका कलातिशिष्टा स्यात्तयैर्तीह वेदान्नानुभवस्यशानाथ मे विज्ञास्यसीति ।।३।।

(छान्दो. ६–७–१।३)

महाऋषि उद्दालक एक बडे अच्छे रहस्यको स्पष्ट कर रहे है आगे वे इस बातको कहके आयेंगी ये जो मन है अन्नमय है– अन्नकाही विकार है। इसलिये लोक भाषामे एक सामान्य उक्ति है।

जैसा खायेगा अन्न वैसा बनेगा मन। तो इसका अर्थ सीधा है अन्नके द्वारा मनको अन्दर शक्तिका आधान होगा। श्वेकेतु कहता है हे भगवन मेरेको इस

रहस्यको स्पष्ट करो । तो महाऋषि कहते है । हे बेटा यह जो षोडशकल पुरुष यह जो तेरी आत्मा है– । यह जीवात्मा षोडशकलासे युक्त है । यह कलायें अन्नके द्वारा बनती है । मनके अन्दर अन्नके द्वारा सोलह प्रकारकी शक्तियों उत्पन्न होती है । उन शक्तियोंको यहाँ पर कलाशब्दसे कहते है । यह जो शक्तियाँ जो मनमे उत्पन्न हुई उसका अभिमानी कार्य– कारण संघातको लेकरके बैठा हुआ ये हम– अर्थ है– यह जो हम– हम– हम– हमस्पष्ट संपूर्ण कार्य मायाका कार्य मन आदि और कारणरुपसे माया– ये अविद्या इसके सघातको पकडके बैठा हुआ यह जीवात्मा । यहाँ संघातका मतलब समुदाय– और पकडनेका अर्थ तत्तादात्म्य भावापन्न ।

जैसे लोहेको अग्निमें डालो तो थोडी देरमे लोहा अग्निके स्वरूपमे परिणत हो जाता है इसका अर्थ नही की लोहोने अग्निको पकड लिया । किन्तु अग्निके संबन्धसे अग्नितादात्म्य लोहामे आया- अग्नि तद्रूप हो गया तो अग्नि जो काम करेगा- अब इससे भी वह काम होगा । अगर हाथ लगाओ तो यह भी जलायेगा यद्यपि कहनेको तो लोहाने जलाया किन्तु लोहा नही जलता– जलायेगी तो अग्नि ही किन्तु अग्नि लोहेका आकारको पकडके बैठा है ।

इस प्रकार ये कार्यकारण समुदाय है उसमे तुम्हारा मन आया इसके साथमे चेतन आत्माने तादात्म्यभावको पकडा–

तो यह तादात्म्यभावको पकडमे पर हम– हम– हम– यह जीव अहंकार । सोलह प्रकारकी कला अन्नके द्वारा मनमे उत्पन्न हुई और उस मनको धारण करनेवाला यह षोडशकल पुरुष । जैसे इस लोकमे जैसा व्यक्ति होता है उसके अनुसार नाम पड जाता है जैसे कोई व्यक्ति घासका गट्ठर उठाये जाता है नाम– गामका तो अपनेको पता नही किन्तु उसका कोई काम है हमको तो हम कहेगे ओ घासवाले– वह भी समझ जाता है– तो उपाधिसे नाम पड जाता है । अगर कोई उपाधि तुम्हारे पास नही होगी तो तुम नामसे परे हो जाओगे किन्तु इसलोक जीवनमे नाम–रूपसे ही व्यवहार होगा रूप शब्दका अर्थ है आकृति– ।

मनुष्यकी आकृति है तो मनुष्यका नाम होगा और अगर पशुकी आकृति है तो पशुका नाम होगा । सत् चित् आनन्द रूप आत्मा है तुम्हारी उसको समझनेसे मुमुक्षु अपने मोक्ष धाममे प्रवेश करेगा अविद्यासे पार हो जायेगा वह जो महान ब्रह्म हैं उसके लिये श्रुति भगवती कहती है

हिरण्मये परे कोशे विरजं ब्रह्म निष्कलम् ।
तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योति स्तद्यदात्मविदो विदु : ।।

(मुण्ड० २-२-६)

हिरण्मयस्- ज्योर्तिमयम्- हिरण्य माने स्वर्ण- वह बडा चमकीला होता है तो उसकी तरहा चमकनेवाली तुम्हारी सुन्दर बुद्धि- उससे परे माने विज्ञानमय उपाधिसे यह जीव षोडशकल पुरुष बना तो अब इसकी जो भी प्रवृत्ति होगी मनोमय और विज्ञानमय होंगी मनसे ये संकल्प- विकल्प करेगा- और विज्ञानमय कोश निश्चय प्रधान है । जब तक वह पुरुष मनोमय कोशमे रहेगा तो शंकाशील होगा- तो उसको तो ब्रह्माभी सुखी नही कर शकता इसलिये भगवान कृष्ण श्रीमद्भागवत गीतामे कहते है

संशयात्मा विनश्यत्ति

मनका काम है संकल्प करना किन्तु संकल्प करके विज्ञानमें चले जाना । संशय न करके निश्चयमे चले जाओगे तो लोक जीवनमे भी एक सत्य है उस सत्यका दर्शन होगा । यह फुल देखलो हमारे हाथमें है । जब तक वह सत्य है इसमें है ये हमारे हाथम रहेगा या किसीके भी हाथमें आयेगा किन्तु जब वह सत्य इसको छोड देगा तो ये मर जायेगा फिर इसको हम नही लेगे ।

इसलोकमें भी परस्पर प्राणीयोका व्यवहार है वह सत्यके अधीन है । इसलिये व्यावहारिक जगतमें भी एक सत्य है : वह कौनसा होगा तो वह सत्य होगा व्यवहारोपपादक परमार्थ सिद्धि के लिये उस सत्यको पकडके फिर खोज करो इसलिये ज्ञानमय कोशकी प्रधानता- किन्तु उससे भी परे वह ब्रह्म कैसा है तो कहते है

हिरण्मये परे कोशे विरजं ब्रह्म निष्कलम् ।

विरजम् माने रजोगुणादि विकारसे रहित है और निष्कलम् माने यहां कोई कला (अवयव) नही है कलाये तब तक है जब तक नाम रूप उपाधिको या उसके कारणको पकडके बैठे हो कलाके द्वारा ये साकार भावमे आजायेगा । तो ये ब्रह्म निष्कलम् और आगे कहते है

तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद्यदात्मविदो विदुः

तच्छुभ्रं माने वह सर्वथा विशुद्ध है आत्माके शुद्ध रूपका निरूपण हो रहा है ।

यह अपना शरीर है जबतक वह चेतन इसको पकडके बैठा है तब तक हम-हम- हम कर रहा है और अब शरीरके संबन्धको पकडेगा तो मनुष्य- पुरुष- स्त्री- शरीर अपनेको मानता है- शरीर पवित्र मालुम पडता है किन्तु ये तब तक पवित्र है जबतक वह अन्दर बैठा है और व्यवहार भी आपसमें चल रहा है वह उसकी कृपा है जिसको हमने कभी नही देखा। उसका क्या स्वरूप है उसकी क्या सकल है कभी नही सोचा- उसके बारेमे केवल उसके कवरको देखा।

जैसे वे बुरकेवाले नही होते जालीमेंसे एक दूसरेको झांकते है- साथ साथ चल रहे है और एकदिन मर गया तो कहेंगे हायरे- मर गयारे मर गया। क्या मर गया ? तो इस शरीरको भी एक बुरकाही समझो और इस आंखको तो शीशे उससे बाहर ही देखते जाते है, मेरा तेरा करते जाते है- न मेरा निकला न तेरा निकला।

गला फाडके हम चिल्लाते है यह मेरा है किन्तु शरीर ये मेरा निकला ? यह शरीर यहां ही पडा रहेगा इसको उठानेके लिये और चार आदमी चाहिये और उपरसे एकमन लकडी भी तो ऐसी हालतमें जिसके रहनेसे यह शरीर बडा प्यारा है वह कौन तो यह आत्माहै- इसलिये श्रुति कहती है- तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योति- वह ब्रह्म- आत्मा यह ज्योतिका भी ज्योति है।

परमात्माकी तरफ से सूर्य, चन्द्र विद्युत आदि बडी विलक्षण ज्योति है। अगर यह सूर्य न होता तो हमारी पृथ्वी एक बर्फ का गोला बन जाती- यह तो उसकी कृपासे इसके उपर यह पेंड पौधें- अन्नादि उत्पन्न होता है मनुष्य प्राणीका जीवन टीक रहा है। वैज्ञानिक दृष्टिसे पूर्वसे पश्चिम के बीचमे जो देखाहै उसको विषुवत् रेखा कहते है उसके बीचमेही आबादी है- प्राणी जगत है दक्षिण और उत्तरध्रुव मे कोई आबादी नही क्योंकि वहां सूर्यका प्रकाश नही। तो परमात्माने सोचा बेटेके लिये लोकजीवन भी चाहिये तो इसके लिये महान सूर्यकी रचना की। उस सूर्यके द्वारा हम जी रहे है परमात्माने उसके द्वारा जगतके प्राणोकी रचना कि। महान सूर्यके अन्दर भी वह ज्योति बनके बैठा है अगर ज्योति नही होगा तो सौरपिण्ड मूरदा हो जायेगा।

सूर्यके अन्दर वे महान बह्म आत्मारूप होकर न भासे तो उस सूर्यका क्या हाल हो जायेगा- तो सूर्यका भी आत्मा है इसलिये आगे बृहदारण्यक उपनिषद मे मन्त्र आता है

वे महान परमात्मा सूर्यके अन्दर विराजमान है– किन्तु फिर भी वह सूर्यसे न्यारा है। सूर्यरूप नही है। सूर्य उसने दिख रहा है। सोचो भला यह तुम्हारेमे शरीर दिख रहा है की तुम शरीरमे दिख रहे हो? तो कहना पडेगा यह शरीर हमारेमे दिख रहा है। तो तुम अपनेको शरीरसे मनुष्य कह रहे हो और कहीं पूछवाली सकल मिल गई तो ?

तो यह आत्मा भोलानाथ है इसकी अपनी कोई भाषा नही इसको अपना कोई शब्द नही– यह सब मायाकि दुनिया है। इसमे सब शब्द बने इसको वह रट लेता है– जैसे कोई माता बजारसे किसी तोतेको खरीदके ले आई पींजडेमें बन्ध किया और सीखाती है उसको गोपीकृष्ण– गोपीकृष्ण बोलो गंगाराम– तो वह बोलने लगा जाता है वोही शब्द इसको कोई अपनी भाषा नहो– आग्रह नही– ।

श्रुति आगे समझाती है यह आत्मा सूर्यमे विराजमान है उसको सूर्य नही जानता इस बातके दर्शनके लिये अपने शरीरको पकडो इस शरीरमे सौ वर्ष भी तुम रहो यह शरीर तुमको जानता नही– पूछो कभी क्यो मीठु भाई इतने माल-मसाले बना रहे है तेरे लिये क्या तुम हमको जानता है ? तो कहेगा है भगवन अपनेको तुम आप ही जानो हम तो तुम्हारे पालतु गधा है।

गधा जो होता है उसको अपने मालिकका पता नही होता। किन्तु जब मालिककी इच्छा होती है तब रस्सीको खींचा पीठपे चडा अब मालिकने समझता है कि किधर जाना है जिधर भी अंडी मारी मालिकने उधर चल पडता है। यह जो तुम्हारा शरीर है यह तुम्हारेको नही पहचानेगा– चाहे कुछ भी खीलाओ–। जैसे तुम दूसरेको जानते हो अपनेको भी जानो। तुम्हारे अन्दर जो प्रकाश है वह स्वयं प्रकाश है। इस आत्माको स्वयं प्रकाश कहते है इसके प्रकाशके लिये किसी प्रकाशकी अपेक्षा नही।

जिस तरह शरीरमे रहते हुए भी यह शरीर तुम्हारा चिद्भावमें आया हुआ भी शरीर तुम्हारेको नही जानेगा जब तक बैठे रहोगे ये खानादाना भी खायेगा। टाइम टाइममें इसको खानादाना देते रहोगे तो ये गधा तुम्हारेको उठाके चलेगा।

भगवती श्रुति कहती है यस्य सूर्य शरीरम्- जो जगतका प्रकाश भी वोही है कांटेकी सृष्टि भी उसने किया जो सूर्यका शरीर बना है और उसकी ही प्रकाश कहता है बेटा कांटेसे बचके जाना यह ज्ञान भी तुम्हारेको यह दे रहा है तो यहा पर श्रुति तुम्हारे आत्मा और सूर्यके आत्माकी एकताका व्याख्यान करती है।

बेटा तुम देह परिच्छिन्न नही हो तुम महान व्यापक वह आत्मा हो। यह बातको जब प्राणी स्वीकार कर लेगा उस समय सोचो तो तुम्हारे अन्दर कितने मन घूम रहे है। जैसे कोई मालाके एक धागेमे हजारो फुल नाच रहे है। यह जो कुछ भी तुम्हारी नजरमें आ रहा है नाम- रूप वह सूत्रावार सूत्रके अन्दर ओत प्रोत है।

श्रुति भगवती कहती है अनृतं वै मनः।

मनोऽनन्तम्- मन जो है अनंत है उस विश्वात्मा में अनुस्यूत है। जब तुमने अपनेको उस विश्वात्मा में मिसाया तो तुम विश्वात्मा हो गये-।

अब बताओ तुम्हारे मन अनन्त है कोई मन हस रहा है कोई मन रो रहा है, कोई मन सो रहा है तो तुम किसकी बातको सच्ची मानोगे ?

वेदान्त की भाषामे इसको मिथ्या कहते है- हे बेटा यह सब भाव तेरेमे मिथ्या है इसलिये भगवान कृष्ण श्रीमद्भगवद्गीता में कहते है-

यहाँ पर भगवान कहते है जीवनकाल में मुमुक्षुके लिये बहुतसे विक्षेपोके कारण रहते है इसलिये ब्राह्मी स्थिति बना नही पाते किन्तु अगर प्राणके वियोग कालमे भी स्थिति बन गई तो ब्रह्म निर्वाण हो जायेगा।

इधरसे उधर चला गया कभी उधरसे इधर चलाजाये तो उसको वांण कहते है और उस चक्करमें से नीकल जाये उसको निर्वाण कहते है। उसको विदेह कैवल्य कहते है। गतिका कारण है सूक्ष्म शरीर और उसके पीछे है कारण शरीर- यही लोकलोकांतर में ले जाते है- और यह नाना प्रकारकी स्वर्ग नरक इत्यादि योनि यह जीवकी चल रही है। जब आत्माका बोध हो गया तो सूक्ष्म शरीर जुदा होगया निर्वाण हो गया।

एक दृष्टान्तसे सीधीबात समझो- कोई बड शहरमें गये जहाँ हजारो घर है- किन्तू तुम्हारा घर तो एक कौनेन है ना ? तुम उसको याद करके चलोगे तो

घरपै पहुंचोगे– किन्तु अगरं दूसरे घरको देखनेको चलेगा तो कभी वह अपने घरमे नही पहुँचोगे– इस जीवको अपने स्वरूपकी तो स्मृति होनी चाहिये– नहितो–

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे शयनम् इह संसारे खलु दुस्तारे कृपया पारे पाहि मुरारे ...

आगे अब श्रुति कहती है इस अन्नके द्वारा मनमें सोलह प्रकारकी शक्ति आयी यह कार्य है उसके पीछे अविद्या यह कारण शरीर बैंठा है। और उस कार्यं कारण संघातको पकडके यह जीवत्मा बैठा है वह षोडशकल पुरूष कहलाया–। अन्न खाओगे तो मन बलवान रहेगा तो शरीर बलवान होगा। मनसा बलिना सर्वे। अन्नके द्वारा सोलह प्रकारकी शक्तियाँ मनमें उत्साह और साहस रहेगा– अगर ज्ञानबल न होगा तो भी मन कमजोर हो जायगा और अन्न के न खानेसे भी मन कमजोर हो जायेगा मनको बल देते रहना चाहिये– यह मानसिक शक्ति हैं। पुरुष किसको कहते है। जो पूर्णं होवे उसकी पुरुष कहते है श्रुति है पूर्णात पुरुषः अथवा पुरि शयनात् हृदय पुण्डरीक हृदकके अन्दरं शयनकरे वे- तो वहाँ हृदय वह मांसपिंड नही किन्तु हृत्‌पिंड– माने बुद्धि अन्दर सो गया– वह पुरुष– जीवात्मा। क्या सोया तो यह चिदाभास पकडके हम– हम– हम यह षोडशकल पुरुष। विशेषण के बिना विशेष्य का बोध नही होता–

जैसे किसीको कहोगेतो– लाल पकडाले आओ तो यहाँ कपडा– विशेष्य और लालपना विशेषण व्यवहारमे विशेषणके बिना वस्तुका उपयोग नही हो पाता। इसी तरह यहाँ परभी यह मायिक जगतमे भी हम– हम– हमस्मि– यह भी एक व्यवहार है क्या ये स्वतः आया या किसी निमित्त से आया अगर स्वतः आया तो निर्विशेष जो चेतन है वहाँ भी हम होना चाहिये–।

किन्तु गाढ निद्रामें हम लोग सो जाते है वहाँ हम नही होगा आनन्दका बोध तो होगा किन्तु मैं सोया पडा हुं यह बोध नही होगा। सुषुप्ति मे अविद्या बैठी है– अहंभावका कारण है अहंभाव वहाँ नही।

जैसे बीजको पकडके देखोगे तो वृक्ष नही दिखेगा– किन्तु कारण तो वहाँ है– अगर वट वृक्ष नही तो आगे उत्पति कैसे होगी अगर है वृक्ष तो बीजमे दिखता क्यु नही। ऐसे यह मायिक जगत है इसके निर्वंचनमें मन पडे।

अहंकार आदिका कारण है स्वरूपसे अहंकार नही । तो जब महावाक्य ब्रह्मास्मि द्वारा अविद्याकी निवृत्ति हो गई तो अहंका कारण ही नही– । ऐसी ब्राह्मीस्थिति हो गई तो वहाँपर कोई है नही तो भाषा भी कोई नही– इसलिये श्रुति भगवती

यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह

वाणी वहाँसे लौट आती है कहती है हे भगवान में आपके स्वरूपका क्या व्याख्यान करू । वाणी जहाँ जायेगी मन उसका संकल्प करेगा अब वाणी ही जब गई नही तो मनका भी जरूरत नही तो ऐसा मन अति निर्मल हो गया तो वहाँ शोक नही कोई मोह नही

तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यत : ।

हे बेटा जहाँ क्या शोक होगा– क्या मोह होगा–? क्योंकि एकत्वमें मन चला जाएगा ।

"एकमेवाऽद्वितीयं ब्रह्म"

शोक मोह तो जहाँ अपनेसे भिन्न किसीको समझते है वहाँ होगा– अगर प्रिय है तो मोह और वह चला गया तो शोक होगा ।

अद्वितीय तत्त्वका अनुभव करनेवाला मुमुक्षु है उसका मन निवृत हो गया– तो कोई शोक मोह नही– । तो ऐसी ब्राह्मीस्थिति– भूमि मुमुक्षु पानेके लिये बारंबार तत्त्व बोध श्रवण करे–

पतंजलि महाऋषिने भी योगसूत्रमें लिखा है– स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्काराऽऽसेवितो दृढभूमिः क्योंकि वह अभ्यास बहुत कालतक निरन्तर (लगातार) और आदर पूर्वक साङ्गोपाङ्ग सेवन किया जानेपर दृढ अवस्थावाला होता है । इसलिये मुमुक्षु अभ्यासको ही अपने जीवनका आधार बनाकर आदर और प्रेमपूर्वक साङ्गोपाङ्ग करता रहे ।

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन स. १६

ॐ षोडशकलः सोम्य पुरुषः पञ्चदशाहानि माशीः काममपः पिबापोमयः प्राणो न पिबतो विच्छेत्स्यत ।।१।।

ॐ स ह पञ्चदशाहानि नाशाथ हैनमुपससाद किं ब्रवीमि भो इत्यृचः सोम्य यजूंषि सामानीति स होवाच न वै मा प्रतिभान्ति भो इति ।।२।।

ॐ तं होवाच यथा सोम्य महतोऽभ्याहितस्यैकोऽङ्गारः खद्योतमात्रः परिशिष्टः स्यात्तेन ततोऽपि न बहु दहेदेवं सोम्य ते षोडशानां कलानामेका कलातिशिष्टा स्यात्तयैतर्हि वेदाननुभवस्यशानाथ मे विज्ञास्यसीति ।।३।।

ॐ स हाशाथ हैनमुपससाद तं ह यत्किञ्च पप्रच्छ सर्वं ह प्रतिपेदे ।।४।।

ॐ तं होवाच यथा सोम्य महतोऽभ्याहितस्यैकमङ्गारं खद्योतमात्रं परिशिष्टं तं तृणैरुपसमाधाय प्राज्वलयेत्तेन ततोऽपि बहु दहेत् ।।५।।

ॐ एवं सोम्य ते षोडशानां कलानामेका कलाऽतिशिष्टाभू त्साऽन्नेनोपसमाहिता प्राज्वाली तयैतर्हि वेदाननुभवस्य- न्नमयं हि सोम्य मन आपोमयः प्राणस्तेजोमयी वागिति तद्धास्य विजज्ञाविति विजज्ञाविति ।।६।।

(छान्दो० ६–७–१।६)

तो विचार आया कल महाऋषि उद्दालक अपने प्रियपुत्र श्वेतकेतुको षोडश- कल पुरुषका उपदेश दिया। यह अन्न जो मनुष्य प्राणी खाता है उसके द्वारा मनके अन्दर सोलह प्रकारकी शक्तियोका विकास होता है। उस शक्तियोसे युक्त यह मन और इसके कार्य कारण संघात आत्मा यह जीवात्मा है इसलिये जीवात्मा- को षोडशकल पुरुष कहा। कलाका अर्थ है अवयव।

मन निराकार नही–क्योंकि जो भूतोसे उत्पन्न होनेवाला है वह साकार ही होगा और जो साकार पदार्थ होगा वह विनाशी होगा– मनका नाश केवल ब्रह्म- विद्यासे होगा। अपने स्वरूपका बोध होते ही मन निवृत्त हो जायेगा। शरीरके नाशके लिये तो परमात्माने काल देवताको रखा है क्योंकि इस शरीरमें इतनी शक्ति नही की वह ज्यादा हमारे साथ चल शके– ५०–६० वर्ष तक जैसे तैसे ठीक रहता है आगेतोफिर खांसी– खुर्रा– जीनेका रस नही रहता इसलिये काल अमुक सीमामे जाके शरीरको जूदा कर देगा। मन आत्माका ब्रह्म रूपसे बोध होगा तो निवृत हो जायेगा। आत्माका सामान्य अहम् अहम् रूपसे तो बोध हो रहा है किन्तु ब्रह्मरूपमें आवरण है। उस आवरणकी निवृत्ती करनी पडेगी। श्वेत- केतु अपने पिता महाऋषि उदालकसे कहता है– हे भगवान जो अन्न खाया उसीसे यह मन बनता है– उसमें सोलह प्रकारकी कलाका विकास होता है यह मैं प्रत्यक्ष देखना चाहाता हुं। महाऋषि कहते है अगर तेरेको प्रत्यक्ष करनेकी इच्छा है तब तो इतना दिन तक उपवास करो बेटा अन्नको मुहमे नही लगाना भूख भी हो फिरभी– बेटा पूछता है तो मैं जीउगा कैसे पिताजी तो महाऋषि समझाते है– पानी पीकर जितनी इच्छा है– पानी पीओ क्योंकि प्राण जो है वह तो जलका विकार है कार्य यदि है तो कारण बना रहेगा। प्राणका नाश नही होगा। तो बेटा श्वेतकेतु ने कुछ सोचना तो है नही– क्योंकि जवानमें जोश ज्यादा होश कम। बुढ्ढेमें होश ज्यादा जोश कम। उसने तो उसी दिनसे अन्न छोड दिया। २५ दिन तक कुछ नही खाया पानी ही पीया इस प्रकार व्रतके द्वारा शरीरका कमजोर हो जानातो स्वभाविक था।

सोलहवे दिनमें स्नानादि करके वह महाऋषिके पासमें बड़े नियमसे गया– तो गुरुके पासमे बडा विनम्र होके जाओगे तो जो भी वाणी वे बोलेंगे वह चित्तमें आ जायेगी ।

हात जोडके पूछता है हे भगवान मैं क्या बोलु मेरेको आज्ञा करो । तो महाऋषि कहते है– बेटा ऋग्वेद– सामदेव–यर्जुवेदकी ऋचाये बोलो । आज्ञा देदी अब श्वेतकेतु सोचने लगा इस समय मेरी बुद्धिमे कुछ भी नही दिखा रहा– मैं विद्याको विस्मृत कर गया हुँ । अर्थ निकला की अन्नके द्वारा बुद्धिमें जो शक्ति आयी उस शक्तिका ह्रास हो गया । उन शक्तियोमें स्मृति नामकी भी एक शक्ति है । इसलिये वैदिक संप्रदायमें अधिक उपवासका निषेध किया । अगर अधिक उपवास करोगे तो बुद्धि काम नही करेगी तो तुम तत्त्वज्ञानसे रहित हो जाओगे ।

बुद्धि बेहोशीमें तुमको क्या देगी ? बुद्धि होशमें रहेगी तब तत्त्वविचार करेगी । शरीरके स्वास्थ्यके लिये एकाद उपवास भले करें किन्तु ज्यादा उपवास मुमुक्षु नकरे ।

श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान कृष्ण भी इस बातका प्रतिपादन करते है

श्वेतकेतु महाऋषि से कहता है– हे भगवान मै सबकुछ भूल गया हुँ– तो महाऋषि पूछते है, बेटा तुमने इसका कारण समझा ? जैसे प्रबलरूपसे कोई अग्नि जल रही है अब उसने धीरेधीरे लकडी देना बन्द करदो तो ये अग्नि धीरेधीरे ठंडी हो जाती है– केवल छोटीसे चिनगारी मात्र अग्नि रह जाती है उससे क्या जलाओगे–? अब धीरे धीरे उसमे घास भूसा डालो तो अग्नि फिर प्रज्वलित होगी– लकडी डालो– तो जल जायेगी ऐसेही उपवास से धीरे धीरे मनकी सारी शक्तियाँ गायब होगई अब केवल छोटासा मन रह गया– मन्त्र कहता है अब केवल एक कला बाकी रह गई– वही कारण है तेरेमे वेद विद्या है किन्तु विस्मृतिके कारण तेरेको उसका अनुभव नही हो रहा है । इसलिये कहते है हे सोम्य अब चलो तुम खाओ– अवश्य दिनसे बच्चा भूखा था तो माताने बढिया बढिया भोजन बनाया श्वेतकेतुके लिये– अब वह भोजन करके फिर बडी विनम्रतासे पिताके पास पहुँचा तो महाऋषिने जोभी प्रश्नकिये सबको समझा और सबका ठीक ठीक उत्तर दिया ।

एक वैरागी रहे– खानेक समय पर तो खूब खाते है एक बिचारा रहा उसने कहा महाराज मेरेको आप अपने साथ रखलो– वैरागी बनाओ–। महात्माने

कहा अरे तेरेसे नही होगा यूँ रहैने दे किन्तु माना ही नही तब उन्होने कण्ठी और माला दिया और कहा– ले इससे सीताराम सीताराम रटा कर– और समय ये सेवा भी कर । अब इसको तो यहाँ ठाकुरजी को जो भोग लगे वह बढिया माल खानेको मिलने लगा तो बडा खुश हो गया– अब आयी एकादशी तो उस दिन तो वैरागीका उपकार होता था– । तो वह विचार भंडारका दरवाजा ही देखता ही देखता रहा– जब दोपहर तक नही खुला तो पहुँचा द्वारपे गुरुमहाराजके पास की महाराज आज क्या बात है भंडारका दरवाजा क्यों नही खोला तो कहने लगे गुरुमहाराजके बेटा आजतो एकादशी है आजतो ये नही खुलेगा– तुमको भी एकादशी करनी पडेगी– तो बोला– 'भूखे पेट भजन होय ना गोपाल ।

ये ले कण्ठी ये ले माला' और चला गया– ।

तो महाऋषि इस रहस्यको स्पष्ट करते है की बेटा अन्नसे ही मनमें सारी शक्तियोका विकाश होता है– तो अन्न कारण है तो मनको ऐसा अन्न दो जो सात्त्विक हो तो मनमें सात्त्विक बलका विकाश होगा– राजस या तामस आहार मिला तो वैसी शक्तिका विकाश होगा । इसी तरहा मनुष्य प्राणीमें भी तीन प्रकारके भेद आ गये । सात्त्विक प्राणी– राजस और तामसिक । तामसी वे है जो आलस्य और प्रमादमें रहता है काम करनेको मनही नही करता– मनमें संकल्प विकल्प तो होते है

श्रीमद्‌भगवद्‌गीतामें

तमोगुणकी वृद्धि अविद्यासे है । विवेक शक्तिको आदर नही दिया– सत्–असत् विवेकको जाग्रत नही किया और यह जो अज्ञान है– मोहमे ही मनुष्य घूमता रहा तो इसका कल्याण नही होगा तो सत् और असत्का विवेक कैसे करोगे ? तो इस शरीरमें एक तत्त्वको सत् स्वीकार करना पडेगा– बाहरका शरीरका ढांचा तो प्रतिक्षण बदल रहा है– किन्तु जिसके आश्रयमें यह फिर भी नही मरा वह जो अन्दर आत्मा है वह सत् है इसलिये कठोपनिषद कहती है

अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो
रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा
रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च ॥६॥

(कठ० ५–६)

जिस प्रकार समस्त ब्रह्माण्डमें प्रविष्ट एक ही अग्नि नाना रूपोमें उनके समान रूपवाला सा हो रहा है– जड चेतन सबमें अग्नि है– इस शरीरमें भी गरमी है की नही ? पत्थर में भी अन्दर वह अग्नि है, मारो तो उत्पन्न होगी किन्तु यह अग्नि उस रोटीको नही पका सकती– । रोटी बनाना है तो उसको प्रकट करना पडेगा तो माने रूप रूपं प्रतिरूपो बभूव भिन्न भिन्न रूप अग्नि ने धारण किया है वैसे ही समस्त प्राणियोका अन्तरआत्मा परब्रह्म एक होते हुए भी नाना रूपोमें उन्हीके जैसे रूपवाला हो रहा है और उनके बाहर भी है ।

ऐसे ही समझो मन किसीका सात्त्विक है तो सात्त्विक भाव आयेगा राजस है तो राजस भाव आयेगा और अगर तामसी है तो तमोगुणकी वृद्धि होगी । आभास आनेसे मनके अन्दर जीवभाव तो आगया किन्तु यह मन जीवभावसे बाहर है ।

श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान कृष्ण अर्जुनको उपदेश करते हुए कहते है ।

यहाँ संबोधन किया है भारत– भा माने प्रकाश और रत माने प्रकाशमें श्रद्धा रखनेवाला– । यह प्रकाश कौनसा भला? अन्तः ज्योति– ज्ञान प्रकाश– जिसके प्रकाशमें वाणी बोलती है आँख देखती है कान सुनता है– तो तुम्हारी वह ज्योति अन्दरकी ठीक होगी तो तुम्हारेको दिखाई देगा किन्तु तमोगुण तुम्हारे इस अन्दरके प्रकाशको दबायेगा और जैसे प्रकाश बन्द होने लगेगा तो प्रमादकी वृद्धि होगी ।

प्रमादका अर्थ कर्तव्य कर्मसे च्युत होना इसका व्याख्या करते हुये कहते है कर्तव्य है कर्म करना किन्तु श्रद्धा नही है– आत्माका यह लोक है जैसे परलोक भी है– किन्तु उसमें श्रद्धा नही तो कर्म करेगा नही– । अब कोई कहे परलोक दिखाओ आँखसे तब मानेंगे तो आँखसे कौन दिखायेगा इसको ?

जन्म ये अब हुआ है तो पहले भी हम थे ऐसे दूसरा जन्म भी होगा । यह जन्म अच्छा हुआ है हम अच्छे है तो अगला जन्म जो हो वह भी अच्छा हो– इस कामनासे ऐसे भावोसे कर्म करो जिस कर्मके द्वारा तुम्हारेमें पुण्यकी वृद्धि होवे– तब सत्त्वगुणकी वृद्धि होगी तो रजोगुण– और तमोगुण दबेगा । और अगर कर्म ठीक नही तो तमोगुण और रजोगुणसे पाप उत्पन्न होगा ।

सात्विक कर्म श्रद्धासे करो–तो प्रमाद नही ठीक घेरेगा–। श्रद्धा उत्साह आ-गया तो प्रमादका छोटा भाई आलस्य और छोटी बहने निद्रा और तंद्रा– ये सब मायाके बेटे– बेटी सोचते है ये अगर भाग जायेगा तो मोक्षमें चला जायेगा तो मेरा क्या होगा–उसे घेरते है किन्तु जो सत्वगुणी है वह इसको दबाता है–। अपने मनका खयाल करके यह मन सत्वगुणी बना रहे ऐसा ध्यान रखना है– मुमुक्षुको आगे कल और समझायेगे

अब दो मिनेट ध्यान करो–

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. २०

ॐ उद्दालको हारुणिः श्वेतकेतुं पुत्रमुवाच स्वप्नान्तं मे सोम्य विजानीहीति यत्रैतत्पुरुषः स्वपिति नाम सता सोम्य तदा सम्पन्नो भवति स्वमपीतो भवति तस्मादेनं स्वपितीत्याचक्षते स्वं ह्यपीतो भवति ॥१॥

ॐ स यथा शकुनिः सूत्रेण प्रबद्धो दिशं दिशं पतित्वाऽन्यत्राऽयतनमलब्ध्वा बन्धनमेवोपश्रयत एवमेव खलु सोम्य तन्मनो दिशं दिशं पतित्वाऽन्यत्रायतनमलब्ध्वा प्राणमेवोपश्रयते प्राणबन्धनं हि सोम्य मन इति ॥२॥

ॐ अशनापिपासे मे सोम्य विजानीहीति यत्रैतत्पुरुषोऽशिशिषति नामाप एव तदशितं नयन्ते तद्यथा गोनायोऽश्वनायः पुरुषनाय इत्येवं तदप आचक्षतेऽशनायेति तत्रैतच्छुङ्गमुत्पतितं सोम्य विजानीहि नेदममूलं भविष्यतीति ॥३॥

(छान्दो० ६-८-१।३)

महाऋषि उद्दालक इस आत्माके स्वरूपका बोध अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतुको देते हुए इस बातको समझा रहे है सुषुप्तिकी घटना द्वारा। जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति इन तीन अवस्थामे सुषुप्ति एक ऐसा अवस्था है– जिसमे जानेपर कुछ

कही अपने पराये का होश और कोई दुःख भी नही ऐसी सुन्दर गाढ निद्राको सुषुप्ति अवस्था कहते है हे बेटा देख तो जरा इसको– ये क्या है ?

पहले इस बातको समझाके आये कि वह जो परादेवता है परादेवता माने ईश्वर- ईश्वरका मनमें प्रवेश हुआ तो साक्षात् प्रवेश नही आभास रूपसे हुआ। जैसे सीसेमें हम लोग अपना मुह देखते है– तो हमारा मुखतो है ये सीसेके अन्दर नही गया किन्तु उसका आभास सीसेके अन्दर झलका तो प्रतिबिंबको देख करके मुखकाअनुभव करता है ऐसेही और एक दृष्टान्तसे समझो– यह जो महान सूर्य है आकाशमें चमक रहा है नीचे हजारो घडेमें उसके हजारों किस्मके प्रतिबिंब जलमें दिखने लगे कीसीमें जल साफ है तो बडा सुन्दर स्वच्छ प्रतिबिंब दिखता किसीमें ठीक नही दिखा तो– सूर्य तो एक है उसका प्रतिबिंब भी एक ही है किन्तु उपाधि भिन्न होनेसे प्रतिबिंब भी अनेक दिखा– प्रतिबिंबके अन्दर अनेकता उपाधि से है। इसी तरह यहाँ पर समझो परमात्माका आभस पडा किसमे ? मनमे तो श्रुति कहती है

अनेन जीवेनात्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरवाणीति ।।२।।

परमात्मा साक्षात् नही जीव रूपसे प्रवेश करेगा तो ये जीव क्या है? आत्मा-मेरे से न्यारा कोई जीव नही जीवभाव भी मेरेमें कल्पित है। किन्तु जिस समय वह चिदाभास मनमें आया– अब ये जो मन है अन्नसे शक्ति प्राप्त करना है और घृत आदि भी खाता है इसलिये बलवान है इसलिये इसको कहा अन्नमयम् तेजोमयम्। यह मन जब जब वाक् और प्राण से मिला तो हम– हम– हम यह सामान्य अहंकार की स्थिति बनी– किन्तु फिरभी यह कुछ नही कर सकता जब तक इसको स्थूल शरीर नही मिलेगा। सूक्ष्म शरीर ज्ञाननेन्द्रिय और कर्मेन्द्रियों को लेके अहम् अहम् कह रहा है किन्तु अहम्का असली स्वरूप अज्ञानमें चला गया यही आवरण बन गया तो यह जीव अहम् ब्रह्म ऐसा नही कहता केवल अहम् अहम् करता है। अब इसके अन्दर अविद्या– काम कर्म ये आ गया। अविद्या तो पहले ही बैठी है, काम माने वासना माने धर्माधर्म– नाना जन्मको देनेवाला यह धर्मा-ऽधर्म भितर है उसीके द्वारा यह मनुष्य शरीर मिला यहाँ फिर कर्म आया तो यह कर्मका कर्ता बन गया वह अहम्। कर्म करने लगा ज्ञानेन्द्रियों से कर्मेन्द्रियों से तो कहेगा ज्ञाताहमस्मि ज्ञानेन्द्रियों को लेकरके और कर्ताऽहमस्मि कर्मेन्द्रियोंको लेकरके और कर्मके सम्बन्धसे भोक्ताऽहमस्मि। और इसी तरह दोडे दोडें चला जाता है अनेक चिन्ताओसे दोडे चले जाता है। इसके दोडनेके लिये यन्त्र है यह ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय किन्तु इसकी शक्ति तो परिमित है श्रुति भगवती कहती है

श्राम्यत्येव वाक्
श्राम्यति चक्षुः श्राम्यति श्रोत्रम्

तो ये इन्द्रिया परिश्रात होगये माने दोडते दोडते शक्तिहीन हो ये गये अब काम नही होगा ।

देखते नही हो आजकल फिल्मको देखना तो एक सभ्यताका लक्षण माना जाता है– अगर कोई मेहमान आ गये तो जरूर फिल्म दिखाना होगा– नही तो कहेगा बैठे बैठे बोर हो गये । किन्तु अगर कोई मेहमान आये और तुम उसको लगातार– दो तीन बार फिल्म दिनमे रातमें दिखाते जाओ बीचमे खाना– दाना भी हो – किन्तु रात्रिमे सोने नही दो तो क्या वह सुखी होगा ? इसका क्या अर्थं निकला प्रियसे प्रियकी स्मृति सुखका हेतु है उसकी विस्मृति और ज्यादा सुख देने-वाली है ।

इसका अर्थ निकला यह जाग्रत अवस्था सुख देनेवाली प्रियको प्रियका योग भी हम ज्यादा देर तक नही ले सकते अमुक समय तक ले सकते है । इस-को विस्मृति चाहिये । विस्मृति क्या ? निद्रा चाहिये । इसलिये परमात्माने निद्रा-की सृष्टि किया यूं तो जो अविवेकी है कह बार कह बैठते है मेरेको तो महाराज खोपडी खाजानेकी भी फुरसद नही है– किन्तु अगर निद्रा उसको नही आवेतो उसको देखो उसका क्या हाल होता है । इसलिये यह निद्रा अमृत वर्षा करनेवाली है– जवनी शक्तिका सिंचन करनेवाली है जैसे मेघोसे वर्षा होती है तो पृथ्वी हरी-भरी हो जाती है नही तो वर्षा नही हुई तो पृथ्वी नीरस हो जाती है ऐसी ही समझो– निद्राभी तुम्हारे जीवनी रसको बनाये रखती है ।

जाग्रत और जाग्रतके बाद स्वप्न नामकी अर्धनिद्रा जाग्रतमें यह जीव पर-मात्माकी और अपनी दोनो सृष्टिमे घुमता है– परमात्माकी सृष्टि ये पंचमहाभूत– पृथ्वी जल, तेज, वायु, आकाश ये अपने स्वरूसे कभी इसको दुःखी नही करते किन्तु इसका उपकार करते है– । जीव दुःखी होना है अपनीही सृष्टिसे– ।

जैसे थोडीसी पृथ्वीको हमने घेर लिया– बाउन्ड्री लाइन लगादी अब पृथ्वी है तो परमात्माकी किन्तु अब हम मालिक बन बैठे तो कोई उसको छानेगा तो आपसमें लडेगे– ऐसे जीवसृष्टि दुःखका कारण है । उससे उपर उठनेकी लिये इसको निद्रामे जाना पडेगा । किन्तु अब जब निद्रामे गया तो यह मन वहां फिर अपनी सृष्टि करने लगा –

इसबातको भगवान यमराज नचिकेताको ब्रह्मविद्याका उपदेश देतेहुए समझाते है

य एष सुप्तेषु जागर्ति कामं कामं पुरुषो निर्मिमाणः ।
तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते ।।
तस्मिँल्लोकाः श्रिताः सर्वे तदु नात्येति कश्चन ।
एतद्वै तत् ।।८।।

(कठोप० २-२-८)

देखो बेटा यह इन्द्रियागण जब सो गये वह जाग रहा है तो वह इनसे न्यारा हुआ की नही ।

आंख देखती नही– कान सुनती नहीं– वाणी बोंलती नही हात पैर हिलते नही किन्तु स्वप्नमे मन नही सोया वह सब कार्य कर रहा है ।

किसी महाराजके पासमे कोई पहलवान आया तो उसने कहा है भगवान् हमकोभी नोकरी चाहिये किन्तु हम दस व्यक्तियोका भोजन लेगे– दस व्यक्तियोकी तन्खाह लेगे तब हम सर्वीस करेगे तो महाराजाने पूछा भाई ऐसा क्यों– तो कहता है जब दशोव्यक्ति काम करेगे तब मै काम नही करूँगा किन्तु जब दशो बठ जायेगे मे अकेला सबका काम करूँगा । अब महाराजा मना करेंगे ? नही ।

एक ही दशका काम करेगा तो अच्छी बात है । उसको सर्वीसमे रख लिया– अब यह सोचो यह आदमी कौन है ? तो तुम्हारा मन है और ये हम– हम यह जीवात्मा महाराज है और जाग्रतमे जब सब दशो इन्द्रियाँ अपने काम कर रही है तब ये पीछे रहता है और जब यह इन्द्रिया छूट्टी लेती है स्वप्नमें तो मन अकेला सब काम कर रहा है । कोई भी इन्द्रिय वहाँ जाग्रत नही फिर भी देखनेका बोलनेका– चलनेका सुननेका, खानेका सब कार्य मन कर रहा है और पीछे बैठा महाराजा सबका स्वाद ले रहा है । अब बताओ भला यह मन सिद्ध है कि नहीं ? वहाँ कुछ भी नही और यह सब तुमको अपने संस्कारके अनुसार दिखा रहा है वहाँ तो यह बडी सिद्धि नही हुई ?

मन्त्र कहता है नाना प्रकारकी वहां सृष्टि हो रही है किन्तु जिसकी महिमामें यह सृष्टि हो रही है वह तदेव ब्रह्म तद् शुक्र– उसको तुम जानो ।

वह कैसा है तो शुक्र– माने शुद्धम्– पवित्रम् । वह सबसे पवित्र है ।

पवित्रम् शब्दका एक और भी अर्थ समझो– पवि माने मृत्यु–त्रम् माने त्राण करनेवाला– । तो मृत्युसे त्राणकरनेवाला– पवित्रम् ।

कोई ऐसा देश, काल, ग्रह या नक्षत्र नही जहां मृत्यु न हो– एकमात्र ब्रह्म-विद्या परमात्माने बनाया मृत्युसे त्राणके लिये । उस ब्रह्मविद्याको मुमुक्षु बुद्धिमान जो है गुरुमुखसे महावाक्य ब्रह्माहमस्मि ग्रहण करे । ब्रह्मा हमस्मि महावाक्यसे उत्पन्न जो बुद्धिकी वृत्ति बनाये मुमुक्षु यह योग है ।

यही राजपथ है मोक्षका वेदोमें । इसको पकडके आगे बढो– तो इस राज-पथका विषय क्या ? तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म– यही अमृत है– इस महान ब्रह्मके आश्रयमें सम्पूर्ण लोक जी रहे है– इसके लिये दृष्टान्त कोई है तो वह तुम्हारा शरीर इससे पूछो क्यों भीडभाड तुम कहा रहते हो तो ये क्या एड्रेस बतायेगा ? सीनामङ्गल– कालीमाटी डोल ? इसको यहाँ कौन रहने देता है– तो कहना पडेगा उस महान चेतन आत्माकी छायामें यह शरीर जी रहा है ।

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उसीके आश्रयमें जी रहा है मन्त्र कहता है आगेकी उस महान ब्रह्माका कोई अतिक्रमण कर नही सकता– उसकी सत्ताको पार करके कोई जी नही सकता उसके लिये भी दृष्टान्त है यह तुम्हारा शरीर । आत्माके बिना ये जी नही सकता एकपल भी हे नचिकेता यही ब्रह्म है– वह सुषुप्तिका साक्षी है भाष्यकार इस बातको और स्पष्ट करते है

ध्यायतीव लेलायतीव स हि स्वप्नो भूत्वे
मंलोकमतिक्रामति, स वा अयमात्मा ब्रह्म ।

सुषुप्तिमें जब चला जाता है तो शरीर कैसे पडा है । एकदम सूखे लकडेकी तरहा पडा है तो मालुम क्या पडा की ये श्मशानमें सोया पडा है । ये मर गया इस लोकका अतिक्रमण कर देता– माने जाग्रतके लोकसे बाहर निकल जाता है वह सुषुप्तिका साक्षी वह ब्रह्म विज्ञानमयो मनोमय: वह महान ब्रह्म मनको पकडता है आभास रूपसे उस समय हम– हम– हम ।

एक बातको समझो जिस प्रकार हम दर्पण सामने रखते है तो हमारा मुख दर्पणमें दिखा । और दर्पणको फिर सामनेसे हटा दिया तो अपना मुख प्रतिबिंब विकार गया ? तो वह मुखका प्रतिबिंब अपने स्वरूपमे लीन गया । ऐसे ही जिस समय सुषुप्तिमें चलागया तो मन नही वहाँ तो चेतनका आभास भी नही– तो वह

चिदाभास जिसका था उसीमें लीन होगया– तो माने वह चिदाभास रोज रोज ब्रह्मलोकमे चलागया– तो इसलिये श्रुति भगवती कहती है ।

अहारहः सर्वाः प्रजा ब्रह्मलोकं हि गच्छन्ति
न विदन्ति

सम्पूर्ण प्रजा प्रतिदिन ब्रह्म लोक तो जाती है– किन्तु बात ऐसी होगई– इसको दृष्टान्त से समझो कोई बडे महाराजा है उसने अपना कार्यालय अंडर-ग्राउन्ड बनवाया है वहां बैठे वह सब केस सुनता है अब कोई बडा भयानक अपराधी है उसको महाराजाके सामने लाना है तो वह पोलिसमेन उसको बांधके और आंखोमे पट्टी बांधके रास्ते से लाके राजाका सामने खडा करके तब आंखोकी पट्टी खोल देते है– वह देखता है सामने महाराजा बैठा है उसका केस सुना जो सजा देनी थी–दी किन्तु बाहर जब निकालेमें तो फिर आंखोपे पट्टी बांध देगे– किधरसे गया किधरसे निकाला उसको कोई पता नही ।

इसी तरह समझो यह जो तुम्हारी आत्मा है महाराज है जीव है उस अपराधी की तरह– सुषुप्ति अवस्थामे रोज उसकोबांधके ले जाते है वहां किन्तु महाराजाके सामने जब जीव पहुँच गया तो कोई पुलिस उसको हाथ नही दिखा सकते । दिखा सकते है चाहे कितना ही भयंकर अपराधी क्यों न होवे महाराजा आर्डर करे बात जुदी है तो भी वह अपने सामने नही मरवायेगा होता है की नही ? कोई भी बुद्धिमान महाराजा अपने सामने अपराधीको पीटवायेगा नही पीटनेकी जगह जुदा है । जीव जब सुषुप्ति अवस्थामें पहुँच गया तो चारो ओर आनन्द ही आनन्द है । पुलिसमेन पीछे सेल्युट मार रहे है वेभी कुछ नही करसकते ।

जब तक महाराजा उसके केसको सुनते रहे– एक घण्टा, दो घण्टा, चार घण्टा– लम्बा केस है तो ट्रायल तो चलती ही है । ये मजेमे है उसको वहां कोई दुःख नही । किन्तु जब बाहर ले जाओ तो बाहर छाती पीटता है हायरे हायरे– मर गयारे मर गयारे । यह जाग्रत की जेल है– इसमें हम लोग कैदी है माया मन्दिर के कैदी है । हमारी सरकारकी जेल है वह तो छोटी है उसकी दिखवाल-को तो हम पार करके भाग सकते है किन्तु यह जो परमात्माका कैदखाना है चाहे कितनाही चिल्लाते रहो भाग नही सकते इतना विशाल– ये किल्ला है । जहां

जाओगे यह किल्लाही मिलेगा इसीके अन्दर तुम अपनेको पाओगे इसलिये श्रुति कहती है- वह ब्रह्म

महतो महियान्- वह महानसे भी महान है वह जो तुम्हारी अन्तर आत्मा है- मन्त्र कहता है

अनन्वागत पुण्येनान्वागतं पापेन ।
तीर्णो हि तदा सर्वाञ्छोकान् हृदयस्य भवति ।

वह जो सुषुप्तिकी गाढ निन्द्राकी अवस्था है उसमें चिदाभास जीव अपने परमात्मा स्वरूपमें चला गया पाप भी नही पुण्य भी नही तुम्हारे पासमें ।

पाप-पुण्य कहाँ है- ? तुम्हारे मनमें तो जब मनही वहाँ नही जाता तो सुषुप्तिमें तो तुम्हे अकेलेही जाना पडेगा- तो सारे शोक मोहको पार कर गया क्योंकि वहाँ न पुण्य है न पाप है ।

जैसे कई मातायें पर्समें सब माल रखके बाजारमें जाती है तो यही पर्स रख दिया तो सारा सामान वहाँ ही पर्समें पडा रहा और आगेतो वह अकेली चली गई- ।

कर्मका फल है शोक मोहादि- जीवनमें बहुत कम कर्म ऐसे है जो तुम्हारे मनको शान्ति देते है जो कर्म शान्ति देता है उसको धर्म कहते है जो तुमको यहाँ पर सुख दे रहा है उसने आगे भी सुख देगा- जो यहाँपर दुःख दे रहा है उसने आगेभी दुःख ही देगा । सुषुप्तिमें जीव चला गया संपूर्ण शोकोको पार कर जाता है । महान ब्रह्मके आनन्दसे सब आनन्द दिखता है- । जाग्रतमें भी जो आनन्दरूप दिख रहा है वह उसकी कृपासे- उसी आनन्दको लेके अब बाहर जैसे आजकल देखते है ना की कोई बरात जब पहुँचती है- छोकडेके ससुरालमें तो वहाँसे गुलाब जल छीडक देना है क्यों छीडकता है तो इसलिये की मूरखको बाहरकी गंदगी अन्दर नही ले जानी । इस तरह समझो आत्माका आनन्द जो है यह मूरख बाहर छीडक रहा है जिससे बाहर चारो ओर आनन्द दिख रहा है अगर ये न छीडकता तो बाहर आनन्द कुछ है? दुःखही दुःख दिखता है । यह स्वयं दुःखी हो गया तो जिधर नजर मारता है उसको दुःख ही दुःख दिखता है किन्तु जब अन्दर आनन्द है तो बाहर भी आनन्द ही आनन्द है । यह इस शरीरकी

परिक्रमा करते है लोग इसलिये कहते है की यह अन्दरके आनन्दको पकडके बाहर ले आए और बाहर छोडके सब इसके मोहमें मुग्ध है ।

इस रहस्यको स्पष्ट करनेके लिये महाऋषि उद्दालक समझाते है- मन्त्र में इसको स्वपिति- कहते है क्योंकि निद्रामें यह सत्ता रूप जो परमात्मा है उसके साथ जाके मिल गया तो सारी प्रजा प्रतिदिन उस ब्रह्मलोकमें तो जाती है किन्तु इसको नही जानती । इस बातको आगे कल और समझायेंगे-

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. २१

ॐ स यथा शकुनिः सूत्रेण प्रबद्धो दिशं दिशं पतित्वाऽन्यत्रा-
यतनमलब्ध्वा बन्धनमेवोपश्रयत एवमेव खलु सोम्य
तन्मनो दिशं दिशं पतित्वाऽन्यत्रायतनमलब्ध्वा प्राणमेवो
पश्रयते प्राणबन्धनं हि सोम्य मन इति ।।२।।

ॐ अशनापिपासे मे सोम्य विजानोहीति यत्रैतत्पुरुषोऽशिशि-
षति नामाप एव तदशितं नयन्ते तद्यथा गोनायोऽश्वनायः
पुरुषनाय इत्येवं तदप आचक्षतेऽशनायेति तत्रैतच्छुङ्ग-
मुत्पतितं सोम्य विजानीहि नेदममूलं भविष्यतीति ।।३।।

(छान्दो० ६–८–२।३)

तो विचार आया बुद्धिमान मुमुक्षुको इस आत्मतत्त्वका बोध कैसे होना चाहिये। सुषुप्तिके दृष्टासेन्त महाऋषि उद्दालक इस बातको स्पष्ट किया की वह जो सत्– चित् आनन्द रूप जो आत्मा है यही तत्त्व है। इसलिये जीवको कहते है निद्रामें रोज अपने स्वरूपको प्राप्त करता है। और जिस समय वह अपने स्वरूप-में पहुच जाये उस समय महान आनन्दका अनुभव होता है।

अथैष संप्रसाद: यत्‌दब्रह्मेति

निद्रा अवस्थामें शरीरभावका त्याग कर देता है यह जीव और परम ज्योति स्वरुप आत्मा हो जाता है– और ये संप्रसाद है– यहां संप्रमाद शब्दका अर्थ होता है जहां यह जीव अच्छी तरहसे प्रसन्न हो जहां पहुंचनेपर कोई दुःख नही।

इसका मतलब क्या निकला की जीवभावकी उपाधि थी वह मन– जब मन सामने है तो मनके अन्दर चिदाभासकी स्थिति बनी हुई है– और यह ज्ञानेन्द्रिय– कर्मेन्द्रिय सबको पकडके यह कर्ता भोक्ता– ज्ञाता बनता है और नाना प्रकारके दुःखका भोक्ता है– जाग्रत और स्वप्नमें प्रपंचमें परेशानी तो बहुत है है किन्तु जब निद्रामें जाता है तो इस शरीरसे उपर उड जाता है जैसे अपने आसनसे उठ जाते है । शरीरमें बैठा है सब अहंकार करके की अयमहमस्मि– यह मैं हुँ तो शोक मोहकी लहरे आती रहेगी– किन्तु जब इस अहंकारसे अपनेको जुदा कियाना, मै देहमैं देहा दिसंघात आतमा, तो शोक मोहसे उपर उठ जायेगा । छान्दोग्य श्रुति यहाँ दृष्टान्तसे इस बातको समझाती है– शकुनि– बुलबुल नामकी पक्षी होता है उसका पिछेका भाग थोडा लाल होता है और यह पक्षी बडी सुन्दर बोली बोलता है तो इधर उत्तर प्रदेशमे लखनऊ आदि शहरोमें उसके पालनेकी बढी प्रथा है । वे पक्षीको पालते है तो उसके पैरमें धागा बांध देते है और वह धागा फिर लकडीमें वांध देते है– तो इच्छा होती है तो यह पक्षी बुलबुल आकाशमें उडने लगता है तो ये आकाशमें कितनी दूर जायेगा की जितना लम्बा धागा है और परिश्रांत हो गया तब जायेगा कहाँ ये? और तो उडनेसे विश्रामकी जगह है नहीतो उसके विश्रामकी जगह है तो जहाँ बधा ~ रही है– लकडीपर इसलिये वहाँ उसको लौटना पडेगा । वहाँ वह सुखका अनुभव भी करेगा । इसी प्रकार श्रुति दृष्टान्त देती है कि यह जो जीव है– तो सत्– चित्– आनन्दरूप पराबेवता उसका चिदाभास जो बुद्धिमें आया । बुद्धिमें कहो मनमें कहो एकही है । जिस समय चिदाभास आया– तो ये साभास मन जाग्रत और स्वप्न अवस्थामें जहाँसे तहाँ दौड रहा है– नाना प्रकारकी इच्छाओंके अनुसार चलता रहेगा– और जब परिश्रांत हो गया तो लौटकरके यह अपने स्वरूपमें प्रवेश करेगा– । तो हे सोम्य जो मनस्थचिदाभास जीवमें है उसने अपने स्वरूपमें आना है ना, मनतो उसमें लीन नही होगा क्योंकि मनतो मायाका पुत्र है इसलिये जिस समय सुषुप्तिमें चिदाभास जब आत्मस्वरूपमें चला गया तो यह मन अपनी मम्मी अविद्यामें लीन होगया– ।

अब यहाँ श्रुति प्राण शब्दका उपयोग करती है किमन उसमें लीन हो गया तो प्राण शब्दको सामान्य तया तुम मुखसे निकलने वाले श्वासको समझते है किन्तु यहाँ उसका नाम प्राण नही है प्राण शब्दका अर्थ केनोपनिषद की श्रुति समझाती है

ॐ श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो मनो यद्वाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्राणश्च-
क्षुषश्चचक्षुरतिमुच्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति ।।

(केनोप. १-१-२)

और इसके पहले मन्त्र आया

ॐ केनेषितं पतति प्रेषितं मनः । केन प्राणः प्रथमः प्रैति युक्तः ।
केनेषितां वाचमिमां वदन्ति । चक्षुः श्रोत्रं क उ देवो युनक्ति ।।१।।

(केनोप. १-१-१)

हे भगवान यह मन किसके द्वारा इच्छित और प्रेरित होकर अपने विषयोमें गिरता है ? किससे प्रयुक्त होकर प्रथम (प्रधान) प्राण चलाता है . प्राणी किसके द्वारा इच्छा की हुई वह वाणी बोलते है ? और कौन देव चक्षु तथा श्रोत्रको प्रेरित करता है ।

मा के पेटमें बच्चा होता है तो पांच महीनेमें जैसे बनना है पूरा शरीर तैयार हो जाता है– जिस आकार प्रकारको उसने लेना है बन जायेगा– जिसने लेना है वह तो वहाँ है ही पिताके शरीरमें से–मेटर लेगा और माताके शरीरमें दोनो मेटरको मिलाके बैठे बैठे वह पाँच महीनेमें पूरा अपना शरीर बनाता है । शरीर पुरा बन गया तो सबसे पहले प्राणकी क्रिया चालू हो जायेगी तो बच्चा हिलने डुलने लग जायेगा तो जो चतुर माँ है वह समझ जाती है बच्चा अन्दर हिलता है । किन्तु यह प्राण क्रिया युक्त किसकी कृपासे हुआ और यह चक्षु श्रोत्र–मन आदि किसकी कृपासे क्रियाशील है– वह कौन देवता है ? दूसरे मन्त्रमें उसका उत्तर देते हुए श्रुति भगवती कहती है

श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो मनो यद्वाचो ह वाचं स उ प्राणस्य प्राणश्चक्षुष-
श्चचक्षुरतिमुच्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति ।।

(केनोप. १-१-२)

जो श्रोत्रका श्रोत्र, मनका मन और वाणीका भी वाणी है, वही प्राणका प्राण और चक्षुका चक्षु है (ऐसा जानकर) धीर पुरुष संसारसे मुक्त होकर इस लोकसे जाकर अमर हो जाते है ।

कई बार ऐसा हो जाता है एक एक कोई बेहोश हो गया तो बेहोशीमें क्या वाणी बोलेगी ? जब होशमें रहेगा तो चेतन आत्माके करंटमें चित्त रहेगा तो वाणी बोलेगी– मन्त्र आगे कहता है यह आत्मा वाणीकी वाणी है– चक्षुका भी

चक्षु है । ऐसा मत सोचोके यह आंखो देखती है– यह चक्षुतो चश्मेकी तरह है– अपना चश्मा टेबलपे रखदो तो ये चश्मा अपने आप कुछ नही पढेगा– और हमारी आंखपे आ जायेगातो पढेगा। इसी तरह वह जब अन्दर है तो आंख देखती है । कभी कभी नही होता किसी किसीकी आंखे निद्रामें भी खुली रहती है फिर भी वह धर्मात्माओके सब उठाके चल देता है किन्तु मालिकको कुछ भी पता नही खुली हुई आंखे कुछ कामकी नही जब तक हम अन्दरसे नही देखते । तो जाग्रतमें हम देखते है तो कहना पडेगा वह जब देखनेवाला है कोई दूसरा है । है । इसलिये मन्त्र कहता है– हे बेटा तेरेको मोक्षमें जाना है तो इन इन्द्रियके सम्बन्धसे अपनेको जुदा करो । इन्द्रियोंका सम्बन्ध अंधा संबन्ध है बाधा करता है । ज्ञानपूर्वक का इन्द्रियोसे सम्बन्ध बाधा नही डालता ।

लोक जीवनमें हमको पतिभी चाहिये– पत्नी भी चाहिये बेटा– बेटी– मित्र बन्धु भी चाहिये हमारे सम्बन्धी है तो ये कौन है ? केवल यह शरीर है ? तो हड्डी मासका थैला है– इसके अन्दर जब वह आत्मा है तो यह भी प्यारा है– तो उस आत्मामें बुद्धिमान मनको ले आये और आत्मामें मन आया तो शोक– मोह नही होगा और जरा शोक मोह आयेगा तो वह विवेकसे हट आयेगा यह शरीर इन्द्रिया तो कोई तत्त्व नही है । मन्त्र कहता है

ॐ एवमेव खलु सोम्य तन्मनो दिशं दिशं पतित्वाऽन्यत्रायतनम-
लब्ध्वा प्राणमेवोपश्रयते प्राणबन्धनं हि सोम्य मन इति ।।१।।

(छान्दो. ६–८–२)

मनके अन्दर जो चिदाभास है वह अविद्याको भी पकड लेगा और अविद्याके कार्यको भी पकडेगा– यह जो प्राण और इन्द्रिया है इसकोभी पकडलेगा और जाग्रतमें ये कर्ता, भोक्ता– ज्ञाता बनेगा और कर्ता भोक्ता भावमें ये बडा परेशान है और इसमें चलते चलते जब जब परिश्रांत हो जायेगा तो यह विश्रामके लिये माया भगवती जानती है कि जब तक यह अपने परमार्थ स्वरूपमें लौटेगा नही तो विश्राम तो है नही– इसलिये परमार्थ स्वरूपमें लौटनेके लिये एक दृष्टान्त एक अंश रखा सुषुप्तिका– वहा गया किन्तु ज्ञानसे नही गया– प्रकृतिके नियमसे गया– जानेपर भी ज्ञानसे जाओ तो मोक्ष इसक फल है और ज्ञानसे नही जायेगा तो प्रकृतिके नियमसे गया तो उसका फल है केवल दो– चार घण्टेका विश्राम ही है । जिसका निद्रा ठीक– जागना ठीक तो उसका स्वास्थ्य ठीक रहेगा ।

मन्त्र कहता है इस शरीरसे उठकरके वह उस परादेवतामें विलीन हो गया– तो ज्ञानवानको क्या करना पडेगा यह सत्– चित्– आनन्द रूप आत्माका स्वरूप है वह संप्रसाद है वहाँ पहुंचना पडेगा– तो वहाँ कैसे पहुँचेगा उसके लिये केवल एक ही रास्ता है ब्रह्मविद्याका श्रुति भगवती कहती है

नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय

इसको जानेगा तो मृत्युसे तर जायेगा उसके अलावा और कोई मार्ग नही मोक्षके लिये ।

इसलिये इस शरीरसे उपर उठे तो इस शरीरमें अहंकार करके बैठा है उस अहंकारको दूर करना पडेगा । मनुष्य हम– पुरुष हम यह शरीरसे ही है– जब हमनें समझलिया यह शरीर हमारा मिथ्या तो अहंकार भी मिथ्या ही है । कोई कहे शरीर क्यों मिथ्या– है ? यह जो शरीरका प्रतिक्षण परिणाम हो रहा है इसलिये शरीरका स्वरूप जो हमारे सामने दिखता है वह नही है कुछ भी । मिथ्या शरीरमें जो अहंकार है वह भी कौनसा सच्चा– देखते देखते शरीर बच्चेसे जवान हो गया तो वह अपनेको जवान कहेगा कि बच्चा कहेगा?

इस दृष्टिसे बुद्धिमान ज्ञानी उस अहंकारसे परे हो जाता है ।

यूं सीधा समझो एक नो जवान लडका बडा बुद्धिमान अपने ससुरालमें जाता है तो बडे प्यारके वहाँ रहता है, वे लोगभी बडे प्यारसे उनको रखते है किन्तु इसका अहंकार क्या है ? यह मेरा घर है की ससुरालवालोका ? यहाँ रहता भी है किन्तु इसको अपना घर नही मानता इसी तरह समझो इस शरीरको तो यह जो अविद्या भगवती का घर है– तुम्हे रहेनेके लिये दिया है तो तुम अपना परमार्थ सिद्ध करो यहाँ रहके कुछ कर सकते हो इसलिये– वना यहाँ तो जबर-जस्ती खाली करना पडेगा– कोई केस भी चलनेवाला नही है अहंकार छोडके परम ज्योति रूप आत्मा स्वस्वरूपसे यह सामने आ गया– तो ब्रह्मभाव होतेही जीवभाव जो था हट गया । मन्त्र कहता है यही आत्मा है यही तेरा स्वरूप है इस अमृततत्त्वको तुम जानो और अभय हो जाओ ।

क्योंकि यह अभयपद है तेरेको भय नहीं रहेगा । मृत्युके भयसे सब जीव परेशान है यद्यपि आजतक किसीने इन आँखोसे मृत्यु देवताको देखा नही । किन्तु जो बडेसे बडा है उसकी सुरक्षाकी बडी व्यवस्था है वह भी मृत्युके भयसे डरता है । उस मृत्युसे बचनेसे कोई व्यवस्था नही । किन्तु जो अपना चीज पकडके

रहेगा वह निर्भय रहेगा जो दूसरेकी चीजमें हाथ रखेगा वह निर्भय कैसे रह सकता है ?

यह शरीर तो पंचभूतोका बंगला है इसको अपना मानोगे तो मार खानाही पडेगा– क्योंकि यह अपना नही ।

पुराने जमानेमें कोई एक बडा शेठ रहा– । उसने देखा कोई धर्मशाला खाली पडी है तो उसने पंचोसे प्रार्थनाकी कि हे भगवन अगर मेरेको यह धर्मशाला किराये पर दोतो इसमें हम अच्छे अच्छे कार्य करे दिन– दुःखीकी सेवा करेंगे– । पंचने सोचा इसको क्यों न दे दे– यूं भी वह खाली पडी है धर्मशाला । तो उन्होने बडी खुशीके साथ दे दिया । तो रोडमे एक तरफ तो अपनी दुकान खोल दिया दूसरी तरफ गोडाउन कर दिया– अपने लिये रहनेके लिये एक बेडरूम और अगल बगलमें अपने बच्चोंके लिये बेडरूप बनालिये– तो अब दूसरे लोग सोचने लगे यह धर्मकार्य करेगा– कल करेगा– ऐसेही दो– चार महीने हो गये । लोगोने कहा अरे शेठजी आप क्या सेवा कार्य करोगे धर्मशालामें– ? तो कहने लगा अरे आप कौनसी धर्मशालाकी बात करते हो ? धर्मशाला होगा तुम्हारा घर यह तो हमारा बंगला है– अकड गया तो पंचोने अपना केस चालू कर दिया– क्योंकि उसको सीधे तो निकाल नहीं सकते– । अब इसको पूछा– तूं छोडेगा की नही ? वृद्धावस्थामें किसी बुढ्ढेसे पूछो भाई– यह शरीर अब कैसा लगता है ? छोडोगे– की नही ? तो शीर यूं यूं हिलाके रहेगा– नहीं– किन्तु अन्तमे जबरजस्ती इसको यह घर– शरीर छोडना पडता है ।

किन्तु अगर तुम अपने ज्ञानसे बाहर निकलोगे तो तुम्हारेको कोई दुःख नही होगा ।

इस ब्रह्मभावमे चले जाओगे तो तुम्हारेमें निर्भयता आयेगी क्योंकि जब यह जीव अपने परमार्थ स्वरूपमे पहुँचेगा तो वहां कोई दुःख नही वे निर्भय हो जायेगा परमार्थ स्वरूपमें पहुँचने के लिये यहांपर दृष्टान्त दिया सुषुप्तिका सुषुप्तिमें यह जीव रोज परमार्थ स्वरूपमें जाता है किन्तु ज्ञानसे गया नही इसलिये निर्भय नही किन्तु जो विवेकी है श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान कृष्ण अर्जुनको उपदेश देते हुए कहते है

इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः ।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि ते स्थिताः ।।१९।।
(गीता ५-१९)

जो एकरस चिद्रस है उसमें जिसका मन समाहित हो गया तो जीवभावको छोड दिया अहंकारको छोड दिया तो उसका सर्ग माने आगे होनेवाला जन्म टल जायेगा उसको मोक्ष हो जायेगा ।

जगतमें अपने इस शरीरको पकडके फिरते है- स्थूल शरीर तो केवल ड्रेस मात्र है- किन्तु उससे परिचय हम देते है अमुकके बेटे है अमुककी बेटी है किन्तु जब स्थूल शरीर जुदा कर दिया तो- तुम्हारी ही मम्मीके पास जाओ वो ड्रेस नही होनेसे कहेगी तुम तो भूत हो- वह इस स्थूल शरीरसे ही प्यार करती है अगर वह दिखता नही तो कहेगी भूत है- तो तूम भूत हो तो तुम हमारे नही हो इसका तो यही मतलब निकला । यह संसार क्या है दृष्टि सृष्टि ।

यह दिख रहा है तुम्हारा है जब आँख बन्द किया तो तुम्हारा यहाँ क्या है ? कुछ भी नही ।

मन्त्र यहाँ पे स्पष्ट कहता है- यह जो ब्रह्म है निर्दोष है- माने अहंकार आदि दोष उसमें नहीं। अविद्यासे अहंकार और कर्ता भोक्ताभाव है उससे मुमुक्षु ऊपर उठे और वह सत् चित् आनन्दमें- तत्त्वमें अपनी दृष्टि रखो ।

एक आदमीसे प्यार करना होता है तो संसारमें बारबार उससे मिलना पडता है- बडे प्यारसे बोलना पडता है अपने जीवनका हिस्सा उसके लिये देना पडता है । तो यह जो तुम्हारी आत्मा है वह तो सबसे प्यारा है क्या उसके लिये कुछ भी नही करना पडेगा ? श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान कृष्ण अर्जुनको कहते है

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ।।३९।।
(गीता ४-३९)

हे अर्जुन जो श्रद्धावान है मतलब दृढ विश्वासवाला है और जिसने इन्द्रियोंका संयम किया है वह जब ज्ञानको पायेगा तो मोक्षरूपा परा शान्तिको ये पायेगा । तो यहाँ पर मुमुक्षु अपने ब्रह्म भावमें दृढ आस्था रखें और निष्कामहोके

कर्म करे अनावश्यक पुण्य की भी इच्छा नही करे– तत्परहो के ब्रह्म–तत्त्व चिन्तन करे उपेक्षा भावसे नही– । बडे उत्साहसे श्रद्धासे जब तत्त्व चिंतन करे । तो जब मुमुक्षु श्रद्धावान– तत्पर और इन्द्रियोका जिसने संयम किया हैं तो वह ज्ञानको पायगा । इस लोकमें भी देखो तुम्हे अपना कौनसा स्वरूप अच्छा लगता हैं होश-वाला कि बेहोशीमें जो पडा हैं ? वेहोशीवाला स्वरूप तो किसीकभी प्यारा नई । मुरदेसे आज तक किसीने प्यार नही किया– कि कियाहैं ? तो होशका नाम हैं ज्ञान वही सबको प्यारा हैं । जब ज्ञान ठीक हैं तो यह शरीर भी ठीक हैं । तो सोचो कौन हैं वह प्रकाश हैं ज्ञानरूपी । बडी श्रद्धासे मुमुक्षु उसके उपर अपना ध्यान केन्द्रित करे– ।

हम सोच रहे हैं– दिन रात चल रहे है– किन्तु नही धीरे धीरे हम ही खीसक रहे हैं– इसलिये समय नही जा रहा– हम ही जा रहे हैं– ।

तो सावधान होके मुमुक्षु– अपने उस सत्–चित् आनन्दरूप आत्मामें अपने मनको लगाके दो मिनेट ध्यान करे–

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. २२

ॐ अशनापिपासे मे सोम्य विजानीहीति यत्रैतत्पुरुषोऽशिशि-
षति नामाप एव तदशितं नयन्ते तद्यथा गोनायोश्वनायः
पुरुषनाय इत्येवं तदप आचक्षतेऽशनायेति तत्रैतच्छुङ्गमु-
त्पतितं सोम्य विजानीहि नेदममूलं भविष्यतीति ।।३।।

ॐ तस्य क्व मूलं स्यादन्यत्रान्नादेवमेव खलु सोम्यान्नेन शुङ्गे-
नापो मूलमन्विच्छाद्भिः सोम्य शुङ्गेन तेजोमूलयन्विच्छ
तेजसा सोम्य शुङ्गेन सन्मूलमन्विच्छ सन्मूलाः सोम्येमाः
सर्वाः प्रजाः सदायतनाः सत्प्रतिष्ठाः ।।४।।

(छान्दो. ६-८ ३।४)

तो विचार आया पहले सुषुप्ति दृष्टान्तसे श्रुति भगवतीने इस बातको स्पष्ट किया कि सुषुप्ति अवस्थामे यह जीवात्मा सतसे मिल जाता है। कहनाका अभिप्राय क्या है जिस प्रकार अपने दर्पणमें अपना मुह देखते है तो हमारे मुखका प्रतिबिंव दर्पणमें प्रतीत होता है और अगर दर्पणको हम सामनेसे हटा दे तो प्रति-बिंब बिंबमें लीन हो जाता है। इसी प्रकार सुषुप्ति दृष्टान्तसे समझाया कि यह जो तुम्हारी बुद्धि है उस निर्मल बुद्धिके अन्दर साक्षी चेतन परमात्माका आभास आया तो यह साभास बुद्धि प्राणसे मिली और इन्द्रियोंसे मिली तो मिलकर हम हम हम-हम संसारी जीवभावमें आ गई किन्तु जिसका आभास बुद्धिमें आया वह बुद्धिसे न्यारा है किन्तु बुद्धिका अधिष्ठान होनेसे आश्रय तो वह ही है। साभास बुद्धिके

सम्बन्धसे जीबभावका आरोप हुआ– मैं जीव हुँ– मै संसारी हुँ उस सुषुप्ति अवस्थामे कोई विशेष ज्ञान नही रहा– क्योंकि वह जो बडी सुन्दर बुद्धि दर्पणकी तरह स्वच्छ– वह जब हट गई तो आभास वह अपने परा देवतामें लीन हो गया । परा देवता माने वह परमसत्

महाऋषि उद्दालक अपने प्रियपुत्र श्वेतकेतुको सद्भावमें ला रहे है– महाऋषि चाहते है– हमरा वेटा सत्भावमें आ जाये । यह जो सत्– चित– आनन्दरूप जो चेतन हैं उसमें इसकी बुद्धि समाहित हो जाये । नामरूपमें घुमनेवाली बुद्धि है भेद बुद्धि– वहाँ प्रियाप्रिय भाव है– तो कही राग है तो कही द्वेष है तो धर्माधर्म उत्पन्न होता है वहाँ ।

किन्तु जो सतसंगी है, मुमुक्षु है महान पूर्वके पुण्यसे यह शरीर मिला है तो उस सत्में अपनी बुद्धिको ले आये । तो रागद्वेषसे उपर उठ जायेगा– । आभास मात्रसे रागद्वेष आयेगा– तो आयेगा भी और निकल भी जायेगा । इस ब्राह्मी बुद्धिके बारेमे भगवान कृष्ण श्रीमद् भागवतके ग्याहरवे स्कंधमें उद्धवको आत्मतत्त्वका बोध देते हुए कहते है

वैशारदी सातिविशुद्धबुद्धिर्धुनोति मायां गुणसम्प्रसूताम्
गुणांश्च संदह्य यदात्ममेतत् स्वयं च शाम्यत्यसमिद्
यथाग्नि : ।।

(भाग० ११–१०–१३)

श्रीमद् भागवतमें भगवान कृष्ण उद्धवको आत्म तत्त्वका बोध देते हुए कहते है, हे उद्धव जो विशुद्ध माने जो ब्राह्मी बुद्धि है वह मायाको निवृत्त कर देती है और यह माया जो त्रिगुणोसे प्रकट हुऐ है उसको निवृत्त करदिया तो फिर अहंता– ममताको भी दूर कर दिया– आवरण भङ्ग करे तो यहब्राह्मीवृतिका भी अब कोई कार्य शेष नही तो स्वयं भी निवृत्त हो गई । जैसे अग्निमें जबतक लकडी डालते रहो तब तक यह जलती रहेगी किन्तु जब लकडी डालना बन्द किया तो यह अग्नि अपने आप ठंडी हो जाती । इसी तरह यह जो संसारवृति है उसको ब्राह्मीवृत्तिने खतम कर दिया तो आवरण भंग होना और स्वरूपानुभूति होने तक ब्राह्मीवृत्तिका कार्य है फिर उसवृत्तिको दूर करनेकी जरूरत नही । जैसे हमारा कोई प्रिय बंधु है तो एकबार उसका नाम याद किया और समझलिया तो फिर अब रोज रोज नामको याद नही करना पडता । ऐसेही यह जो ब्राह्मीवृति है उसके द्वारा आवरण भंग हो गया तो– अयमहंब्रह्मास्मि यह एकबार स्वरूप बोध हो गया तो ऐसी

वृत्ति बारबार करनेकी जरूरत नही । अगर इसकी इच्छा है तो ऐसी वृत्ति भले करे निषेध भी नही ।

ध्यानमें बैठेगा तब मात्र बनेगी ऐसा नही वह तो उठते बैठते, चलते फिरते उसकी ब्राह्मीवृत्ति– तत्त्ववृत्ति बनी रहेगी ।

श्रीमद्भगवत्गीतामें भगवान कृष्ण कहते है –

यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरूषोत्तमम् ।
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत

(गीता. १५–१९)

भगवान कहते है जो असंमूढ है वह मेरेको जानता है पुरूषोत्तम स्वरूपसे–। तो यहाँ पर पहले तो मूढ शब्दका अर्थ समझले– मूढ वो है जो विषयके सामने आतेही उसकी ओर चित्त खींचे–

संमूढ शब्दका अर्थ है– विषय है तब भी और विषय सामने नही है तब भी मोहसे उसकी ओर खींचे वह संमूढ–

असंमूढ– माने खींचता ही नही वह असमूढ चित है. वह मेरेको पुरुषोत्तम स्वरूपसे जानता है । पुरुषोत्तमम् शब्दका अर्थ है– पुरूषोमें उत्तम । अब यह पुरूष शब्दको समझले–

क्षर और अक्षर यह दो प्रकारके पुरुष है । उसमें क्षर पुरुष– यह जो शरीरादिको क्षर पुरूष कहते है– यह पूर्णात् पुरूषके नामसे भी प्रख्यात है– क्योंकि यह सर्वज्ञ है । क्योंकि इस शरीरका जो द्रष्टा है वह जानता है । इस शरीरका अंग कितना बढना चाहिये– सब हिसाबसे चलता है– यह ज्ञान है– हिसाबसे २५ वर्ष तकही बढ गये– फिर बढना बन्द नही तो रहेने– के लिये ही बडी समस्या खडी हो जाती– तो यह विकास हिसाबसे हो रहा है यह ज्ञानसे हो रहा है– बिना ज्ञानके नही इसलिये ये सर्वज्ञ है क्षर पुरुष ।

अब इस क्षर पुरुषके पीछे अक्षर पुरुष अविद्या बैठी है अविद्याका नाश होने दिखता नही इसलिये इसको अक्षर पुरुष कहा– अविद्याका नाशमें मात्र ब्रह्मभाव ही कारण है । जब तक ब्रह्मभाव नही होगा अविद्याकी निवृत्ति नही होगी । कितनेही बडे बडे कर्मकरो– पूजा करो आरती करो– उससे बुद्धि शान्त– प्रसन्न हो सकती है किन्तु जब तक ब्रह्मविद्याका अवतार नही होगा अविद्या नही रहेगी ।

ब्रह्म विद्याका अवतार तभी होगा जब कोई बुद्धिमान आचार्य ब्रह्मजावका उपदेश करेगा– हे सोम्य यह जो तेरी आत्मा ही ब्रह्म है तभी ब्रह्मभाव आयेगा–।

क्षर अक्षर पुरुष ये पूर्ण है जल्दी निवृत्त होते नही इसलिये हे अर्जुन इन क्षराक्षर पुरुषमें जो चेतन है वही पुरुषोत्तमम्– पुरुषेशु उत्तमम है। क्योंकि वह सत्– चित आनन्दरुप– स्वाधी– स्वतंत्र होगा–। और तुम्हारा यह शरीर उस आत्माके अधीन है। सतके आश्रयसे ये चल फिर रहा है।

महाऋषि उद्दालक कहते है– हे सोम्य

ॐ अशनापिपासे मे सोम्य विजानीहीति यत्रैतत्पुरुषोऽशिशिषति नामाप एव तदशितं नयन्ते तद्यथा गोनायोऽश्वनायः पुरुषनाय इत्येवं तदप आचक्षतेऽशनायेति तत्रैतच्छुङ्गमुत्पतितं सोम्य विजानीहि नेदममूल भविष्यतीति ।।३।।

(छान्दो. ६–८–३)

यह जो तुम्हारा शरीर है उसके अन्दर यह भूख तृष्णा (खानेकी इच्छा– पीनेकी इच्छा) क्यों भला ? यह जो तुम्हारा शरीर निराश्रय नही तो उसकी शान्तमें है तो यहाँ भोजन भी चाहिये पानी भी चाहिये यह दोनोको अपने अपने शरीरमें डाला– और आगे सब काम उस केतनके प्रकाशमें अपने आप हो रहा है।

बहुतसे लोंग कहते है महाराज हम भगवानको क्यों मानें ? हम खुद कमाते है और खाते है–।

उससे पूछो तुमने कमाई क्या सूर्यके प्रकाशमे कियाकी अन्दरसे प्रकाश आया उसके प्रकाशमे किया।

बडे अफिसमें बुद्धिमान अपना कार्य कर रहा है क्या समझते हो वह सूर्य या विजलीके प्रकाशमें कार्य कर रहा है। अगर यह अन्दरकी light बन्द हो जाये तो क्या सूर्यका या विजलीका प्रकाश काम आयेगा ? अन्दरसे जो तुमको प्रकाश दे रहा है उसने कभी कहाकी हे भगत तुमने तेरेको इतना प्रकाश दिया तुम इसका बील पेमेन्ट करो।

अन्दर जो बैठा है उसीके प्रकाशमें यह सारी ईन्द्रिया काम कर रही है– शरीर घूमफिर रहा है उसने कभी हमारे प्रकाशका तुमने इतना उपयोग किया तुम इसना बिल पेमेन्ट करो– फिर कहते हो भगवान तुम्हारे लिये क्या करना

है ? क्या इतना कम है ? जो तुम्हारे लिये अन्दरसे प्रकाश दे रहा है और भगवन क्या करे । इसलिये श्रद्धाशील है बुद्धिमान है वह अपनी बुद्धिको आस्तिकभावमें ले आये ।

मुण्डकोपनिषदमें भगवती श्रुति उस महान सत् तत्त्वका व्याख्यान करतेहुए कहती है–

यस्मिन् द्यौः पृथ्वी चान्तरिक्ष–
मोतं मनः सह प्राणैश्च सर्वैः ।
तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या
वाचो विमुञ्चथामृतस्यैष सेतुः ।।५।।

(मुण्ड० २–२–५)

जिस परा देवता उस सत् परमात्मामें यह पृथ्वी– अंतरिक्ष आकाश सब ओत प्रोत है– तो श्रुतिने सारे इस जड प्रपंचको पकड लिया आगे मनके सहित सारे प्राण जिसमें ओतप्रोत है– तो माने जड प्रपंच और यहां प्राण माने इन्द्रियोकी सत्ता है– और मनकी भी सत्ता बना– वह जीवभावका आरोप हुआ तो अन्यथा-वृत्ति हो गई तो जो है उसको नही समझा और जो नही है उसको समझा । जैसे रस्सी है– उसे रस्सी नही समझा तो जरासा आवरणसे उसको सर्प समझा– तो अन्यथा समझा तो अब भयसे मुक्ति कैसे मिलेगी भला ? और भयसे मुक्त होने-के लिये क्या उपाय । तो यही उपाय है की अच्छी तरहसे देखोकी क्या है । उसके अन्दर– (अपने अन्दर) जीवभाव की आरोप हुआ– तो अब खोज करोकी मैं कौन हुँ ?

मैं देहादि संघात हुं के इससे अतिरिक्त कोई है तो वह कौन है ? वहकर्ता है कि नही ? अगर नही है तो भोक्ता है की नही ? अगर भोक्ता नही तो उसका स्वरूप क्या ?

तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या

हे बेटा बुद्धिके द्वारा– बुद्धिमान आचार्यके द्वारा इस आत्माको जानो– और दूसरीवाणीको छोडो– क्योंकि वे सब नकली खुशी जीवनमें देनेवाली है ।

जिस वाणीमें आत्माका बोध नही– जगतका बोध नही और जगतकी जो आत्मा है परमात्मा उसका भी बोध नही– उसको छोडो ।

जब जगतका बोध होगा तो यह सोचना पडेगा कि यह जगत निराधार नही तो विचार चलेगा जगतका आधार छोटा होगाकी बडा होगा ?

मानलो अपना यह शरीर पर यह जो अहमास्पद है छोटा होगा की बडा ?

शरीरमें तो ये महान है । मदत्ता हमको नही हो रही प्रतीत क्योंकि हम देहको पकडके चल रहे है– देहमें आसक्त है । किन्तु जिस समय हमने अपने ज्ञानको श्रुतिके द्वारा बुद्धिमान आचार्यके द्वारा शुद्ध किया तो ज्ञानके अन्दरमें यह देहपरिमाण आत्माका लक्ष्य हुआ था उसको हमने मिथ्या माना । यह आत्मा तो महतो महियान् यह आत्मा तो उस महान आकाशसे भी महान है। तो इस आकाशके हिसाबमें हमारा यह शरीर तो एक कण जितना है । तो कण जितना यह शरीर– तो जो आकाशकी आत्मा भी बना है तो तुम्हारे शरीरकी आत्मा बननेमें उसको क्या गडबड है ।

ऐसा वह परादेवता उसके अन्दर यह नाम रूप सृष्टि मिथ्या । किन्तु इस नाम रूप सृष्टिको महाऋषि समझाना चाहते है– कहते है तुमने जो अन्नखाया उसका परिपाक हुआ तो रसरूपमें चला गया । अब यहांपर बुद्धिवादीसे पूछो अब तुम क्या करते हो ?

परमात्माने जीवको कहा होताकी बेटा जब तक प्राण चलाओगे तुम जीओगें तो चौबीसघण्टे ये मनुष्य प्राण चलाताही रह जाता– भगवानने कहीं ऐसी duty लगादी होती तो क्या होता ? तुम्हारे पर उसने ऐसा कार्य रखा नही ये उसकी बडी कृपा है । तुम्हारे लिये ये प्राण अपने आप गति करता है । खानेके लिये भी ऐसे यन्त्र रखे– अब बताओ क्यों खाओगे ? पेट है इसलिये की भूख है इसलिये ? भूख नही हुई तो क्या खाओगे ? भूखकी क्या सकल है ? काली है की गोरी ? अब कहते है भगवन हमको दिखादो महाराज । तो हम कहते है भूखका फोटो खींचके दिखाओ– ।

एक भूखका भी तेरेपास ज्ञान नही है तो उस भगवानके बारेमे तु क्या सोचता है ?

शुष्क बुद्धिवादी होगा वह उस परमात्माके बारेमें भलेही अनास्था प्रकट करे– अनास्था कहा प्रकट करनी कोई बच्चे आकाशकी ओर थूकते है और मुह करते तो थूक लौट कर उसके उपर ही उडनेवाला– ऐसेही बुद्धिवादी है वह जोभी कल्पनाकी जाल करता है उसमें अपने ही फस जाता है ।

इसलिये जो अतिइन्द्रिय अर्थ है आचार्य कहते हैं

अतीन्द्रियास्तु ये भावा न तांस्तर्केण योजयेत् ।

निषेध किया आचार्यने कि इन्द्रिया जिसके बलसे काम करती है वह -अती न्द्रिय है उसको तर्कसे जानने मत जाओ । पहले श्रुतिको सामने रखो और फिर बुद्धिमान आचार्यकी बात सुनो फिर तूम तर्क भी करो- तर्कका निषेध नही किन्तु श्रुतिके अनुसार तर्ककरो- तो तुम्हारी बुद्धि अति सूक्ष्म हो जायेगी ।

जब पेटमें अन्न चला गया तो पाचन क्रिया चालू हो गई तो उस रीफाइन-रीमें रस रूप भाग जुदा और स्थूल भाग जुदा हो गया- तो उस स्थूल भागके लिये क्या सुन्दर पाइप लाइन फीट किया है परमात्माने ? और अपना वायुकी मद्दतसे बाहर निकल गया- । और जो उसने अपनी सत्तामें खाये हुए अन्नसे रस बनाया- फिर आगे रस रीफाइन हुआ तो मांसबना उसमेंसे चरबी फिर मज्जा और आगे रीफाइन हुआ तो शुक्रधातु बना तो स्वयं उसने पकड लिया । जैसे अपने नौका पकड लेते है तो एक किनारेसे दूसरे किनारे चले जाए है ऐसे ही शुक्रधातु रूप नौकासे वह परमात्मा पिताके शरीरसे माताके शरीरमें चला गया ।

यहांपर अन्न खानेके बादमें जो क्रियाये हुई सब और देहरूपी अंकुर उत्पन्न हुआ- तो यहांपर इसका नाम अशिशिषति नाम हो गया । देहके बननेका बीज । अब बेटा क्या यह बीजका कोईमूल नही ? ये निर्मूल है ? आंखोसे देखना चाहोगे तो नही दिखेगा किन्तु मूल मानना पडेगा । और बेटा मूल असत् नही हों सकता नही तो बीज मर जायेगा- । इसलियें सत् है तो भूख और पिपासा बनेगी ।

अब लोक दृष्टान्तसे श्रुति इस बातको समझाती है-

गौकी रक्षा करे गौको इधरसे उधर ले जाये उसको गोनाय कहते है- और अश्वको भी रखे उसको इधरसे उधर ले जावे उसको अश्वनाय कहते है । और पुरुषनाय यह राजाका नाम है । तुम्हारेको इस जीवनमें कैसे जीना है तो तुम्हारेको वैधानिक जीवनको पकडके जीना है राजा जो है साक्षी है । राजा प्रजाको व्यवस्थित रखता है- सत् मार्गपे चलनेके लिये प्रेरित करता है हम असत् मार्गको पकडेंगे तो राजा सजा देगा । लोग मानते है असत्के विना सत् भी क्या ?

ब्रह्मसूत्रमे आचार्य कहते है

अहमिदं ममेदमिति नैसर्गिको लोकव्यवहार: ।

सत् और असत्को मिलाया तो यह मैं हुं यह मेरा है यह नैसर्गिक स्वाभाविक रूपसे लोकव्यवहार है ।

सत् है तुम्हारी आत्मा– ऐसा असत् शरीर नही होगा तो ये किस प्राकारमे किसीका बेटा या बेटी बनता ? किन्तु यह शरीर जिस कारणसे आया वह भी मिथ्या उत्पति विनाश शील है । किन्तु फिर भी उसके बिना आत्मा भी कुछ नही बन शकता । लोक दृष्टिमें मायिक शरीरको पकडके यह जो चेतन आत्मा है नाना आकारोमे प्रतीत हुआ । नाना आकारोमें प्रतीत होनेके लिये मायिक शरीरको पकडा नाना जैसा तो हुआ किन्तु हुवा नही ।

आचार्य कहते है

न आत्मभावेन ना...

अपने निश्चयसे घटको ले लो– घट स्वरूपसे घट समझो तो घट रूपसे एक दिखेगा– ।

घट बगलमे पडा है तो घटके साथ भी घटको देखो तो भी घट एक दिखेगा– इसी तरह इस जगतको समझो बेटा– जगत रूपसे देखोगे तो भी एक और परमात्मरूपसे देखोगे तो भी एक ।

जगत ये इस तत्त्वसे पृथक माने जुदा भी नही और अपृथक माने तत्स्वरूप भी नही ।

जैसे अपने शरीरसे ही समझो– यह शरीरकी दृष्टिसे भी शरीर एकले भी दूसरा नही और किसी दूसरेकी दृष्टिसे भी शरीर एक ही है दूसरा नही– ।

शरीर आत्मासे पृथक है–? पृथक नही क्योंकि अगर पृथक मानोगे तो इसकी सत्ता माननी पडेगी और अपृथक माने तो आत्मरूप भी ये नही ऐसा यह प्रपंच है– मायामात्र है ।

इसमें जबतक तुम्हारी मोह दृष्टि बनी रहेगी तब तक इसको सत् कहेंगे–और चलते रहेंगे– नाना प्रकारके धर्माधर्म उत्पन्न होते रहेगे ।

जब देहमें नही हुं तो देहका नाम भी नही हूँ– उसका आकार प्रकार भी नही हुँ– देहके स्वभावसे कर्म भी मैं नही– मैं इन सबसे परे इन सबसे न्यारा असङ्ग आत्मा इनकी व्याख्या करते हुए महाऋषि कहते है । इस असङ्ग आत्माके स्वरूपमें बुद्धिमान मुमुक्षु अपने मनकी स्थिरताको लाना रहे ।

महाऋषि आगे कहके आये कि यह जो अन्नरूप अंकुरसे यह शरीर उत्पन्न हुआ ये अमूल नही ।

जैसे शरीरका कोई आश्रय है या उसके आश्रयमें यह खानादाना- पीना करेगा- वह आश्रय कौन है ? वह सत्- चित् आनन्द रूप आत्मा है उसकी ओर मुमुक्षु दृष्टि रखे ।

शरीरमें मोहासक्ति न करे- शरीरकी आयु निश्चित है यह असीम तो नही- इसलिये मुमुक्षु मूल तत्त्वके ओर अपना ध्यान केन्द्रित करे- आगे इस बातको कल समझायेंगे- अब हरि ॐ की ध्वनि करके दोमिनेट ध्यान करें-

हरि ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. २३

ॐ तस्य क्व मूलं स्यादन्यत्रान्नादेवमेव खलु सोम्यान्नेन शुङ्गेनापो मूलमन्विच्छाद्भिः सोम्य शुङ्गेन तेजोमूल-मन्विच्छ तेजसा सोम्य शुङ्गेन सन्मूलमन्विच्छ सन्मूलाः सोम्येमाः सर्वाः प्रजाः सदायतनाः सत्य-प्रतिष्ठाः ।।४।।

ॐ अथ यत्रैतत्पुरुषः पिपासति नाम तेज एव तत्पीतं नयते तद्यथा गोनायोऽश्वनायः पुरुषनाय इत्येवं तत्तेज आचष्ट उदन्येति तत्रैतदेव शुङ्गमुत्पतितं सोम्य विजानीहि नेदममूलं भविष्यतीति ।।५।।

(छान्दो० ६-८-४।५)

तो विचार चल रहा है– इस जगतमें कार्य और कारण प्रत्यक्ष है। जैसे आप लोग देखते हो तन्तुसे कपडा बना– यह जो पट है कार्य है तंतु जो है वह कारण है– यदि कपडा सफेद दिखा तो उसका कारण ततु जो है वह सफेद होगा– जैसे कार्य देखनेमें आयेगा उसके कारणको समझना पडेगा। इसी तरह घट मिट्टीसे बना तो देखले ज्ञान हो गयाकी मिट्टीके बिना घट बननेवाला नही तो इस तरह कार्यसे कारणका ज्ञान करतेहुए चले और अपने शरीर पर आये– तो यहाँ उपनिषदमें श्रुति भगवती कहती है

इदमपि शरीरं कार्यम्- यह शरीर भी कार्य है उत्पत्ति और विनाशवाला है तो जो जो कार्य होगा वह कारणके बिना नही होगा-। यदि कारणके बिना कार्य होगा तो पहले तो यह कार्य संज्ञा ही खतम हो जायेगी। मानलो इसको कार्य शब्दसे नही करेगे फिर भी ऐसा भी नही कह सकते क्योंकि कार्य तो दिख रहा है- अब मा भी नही कह सकते आप किसी बेटेको देखते हो तो अब इसीके बापको मानो हाँ सही तो काम चलेगा नही। बेटा है तो बाप है। इस तरह यह जो शरीर है इसको तो बेटा समझो पृथ्वीका और पृथ्वी जो है यह ही भूतोका अन्न है- यह पृथ्वी ही हमारा भोजन है।

अब श्वेतकेतु प्रश्न करता है हे भगवन यह शरीर जैसे एक गेहुके दानेको खेतमें ले जाके रखो तो उसमेंसे अंकुर उत्पन्न होगा तो अंकुरका कारण गेहुका दाना है शरीर इस अन्नसे अंकुर की तरह प्रकट हुआ- इस अन्नको मनुष्य खाता है- पृथ्वी ही अतिशुद्ध हुई- तब वह हमारा भोजन बना अन्न रूपमें- वह अन्न रसकी सकलमें चला गया- भोजन लेनेके बादमें आगे रससे रक्त रक्तसे मांस- मेद- मज्जा और शुक्र पुरुप शरीरमें और शुक्रकी जगह रज स्त्री शरीरमें- और उससे यह अंकुरकी तरह हमारा यह शरीर उत्पन्न हुआ-। श्वेतकेतु पूछता है यह अन्नही शरीरका कारण है किन्तु यह अन्न भी उत्पत्ति विनाशशाली है तो यह भी कार्य ही है। तो श्रुति कहती है यत जो अन्न है अंकुरकी तरह प्रकट हो रहा है उसका मूल है जल। पृथ्वी जलसे है हमारे शरीरके अन्दर रक्त ही शक्ति है- बुढ्ढापाक्या है? खुन कम हो गया तो हड्डी सुख गई खुन ठीक बना हुआ है वृद्धावस्थामें भी तुम्हारा शरीर जवान रहे शकता है जैसे महाभारत- में भीष्मपितामह ८५ वर्षके थे बडे शूरवीर थे सहसा उसका मूकाबला कोई कर नही शकता था-। बडा बल था- उस जवानेमें कहावत थी साडा तो पाडा- और आजकल तो साडा तो काठा- खान- पानमें संयम नही रहन सहनमें संयम नही इसलिये यह हालत है। शरीरमे पानी नही रहे तो निरस हो जायेगा। जैसे पृथ्वीमें जल नही रहेगा तो पृथ्वी रेगीस्तान हो जायेगी वहाँ कोई प्राणी सृष्टि भी नही रहेगी।

तो मन्त्र कहता है अन्नका मूल है जल और आगे चलते हुए छान्दोग्य श्रुति शुरुसे ही त्रिवृतकरण करती आयी पृथ्वी- जल- तेज त्रिवृतकरण तीन भूतोको परस्पर मिलाती है- जहाँ जिस तत्त्वकी प्रधानता है वहाँ उसका व्याख्यान होगा जैसे पृथ्वीकी प्रधानता है तो पृथ्वीका वर्णन करोगे जल और तेजका नही। हमारे शरीरमें पृथ्वी- जल- तेज सब है किन्तु इसको पार्थिव कहते है क्योंकि

पृथ्वी तत्त्वकी प्रधानता है । पृथ्वी कार्य है तो कारण जल है । अब जलका कारण तेज है किन्तु यह जों तेज है यह भी उत्पति और विनाशवाला है जब उत्पति विनाशवाला है तो उसका कारण भी खोजो- । तेजका कारण कौन होगा ? बिना कारणके तो हो नही शकता तो उसका मूल सत् होना चाहिये- असत् कारण नही बनेगा- इसलिये पहले ही श्रुति प्रतिज्ञा करके आई

सदेव सोम्यक्ष्मग्र आसीदेकमेवाद्वितीयन् ॥१॥ (छान्दो० ६-२-१)

जगतकी उत्पत्तिके पहले एक मात्र सत् था । जैसे देखो यह गुलाफका फुल है- यह नाम गुलाब और यह आकृति उसका कारण उत्पत्तिसे पहले जो था वह ही सत् है और कार्य उसमें कल्पित हुआ । कार्य कल्पित हुआ तो कारणभाव भी कल्पित हुआ । यूँ समझो पुत्र हुआ तो वह पिता हुआ- पुत्र जब कल्पित है तो पितृपना भी कल्पित है । जब कार्यभाव कल्पित है तो कारणभाव भी कल्पित है यद्यपि इतने अंशमें तो ठीक है किन्तु फिर भी तत्त्व जुदा है- पुत्रके सम्बन्धसे वह पिता बन गया किन्तु जब पुत्र नही था तो वह कुछ नही था ? स्वरूप तो था उसका ।

जगतके सम्बन्धसे परमात्मा उसका कारण बन गया- जगतका नियंता बन गया कर्ता बन गया । जगत कार्य है इसलिये वह कारण कहलाया- किन्तु मानलो जगतरूपी कार्य नही है तो क्या वह है नही ? है किन्तु तब कारण संज्ञा उसमें नही । संज्ञा जो है कार्यसे आयी ।

कल्पना जो भी होगी मिथ्या होगा इसलिये बुद्धिमान तत्त्वमें दृष्टि रखे । मिथ्या भावमात्र है उससे व्यवहार तो होता है । शरीर भावमात्र है की सच्चा-? पिछले अवस्थामें देखो जवानी आयीथीतो वह सच्ची थी की झूठी ? क्या कहोगे ? किन्तु झूठी होने पर भी उसका मान तो हुआ- ।

इसलिये जो भी मायाकी नगरीमें है वह प्रतीतिमात्र है । तुम्हारे सामने प्रतीतिमात्र होनेसे कार्य भी प्रतीतिमात्र कारण भी प्रतीतिमात्र किन्तु अधिष्ठान सच्चा ।

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा ।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः
साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ॥११॥
(श्वेता० ६।११)

ऐसे ही मन्त्र आया–

श्रीमद्भगवद् गीतामे भगवान कृष्ण अर्जुनको कहते है

मत्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनंजय
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव ।।७।।

(गीता० ७–७)

यहाँ भगवन् कृष्ण अर्जुनको धनंजय शब्दसे संबोधन करते है– धनंजय जिसने धनको जित लिया वह धनंजय– । अब सृष्टिमें सुकसेठी किसने धनको जित लिया है कोई ऐसा ? जो अब तक धनी हो– । इसलिये बुद्धिमान धन आदि आवे तब सद्गुण– सद्विचार और सद् ज्ञानका विस्तार करे सत् कर्म करे । सत्-कर्म नही करेगा तो सद्ज्ञानमें नही जायेगा । मैं जो ब्रह्मरूप हुं नामरूप दर्शन मात्र है इसको मिथ्या समझनेके लिये यह मनुष्य शरीर है । मिथ्याको मिथ्या समझाये भारी पुरुषार्थ है ।

मायाकी फिल्म मात्र है यह जगत पर नाना प्रकारके दृश्य यह जीव देखता है किन्तु भगवान यहाँ वस्तु मात्रका प्रतिषेध कर रहे है– नान्यत्किञ्चिदस्ति– । आत्माके अतिरिक्त यह शरीर भी क्या है ? ब्रह्माण्ड परमात्माकी छायामें सब प्यारा है । यहाँ परमात्माके अतिरिक्त कुछ भी नही भेद जो दिखता है ये प्रतीति मात्र है । जैसे सूत्रमें मणिगण दिखते है किन्तु है नही मणिगण सब सूत्र ही सूत्र है । पंजाबमें परंपरा है उनके दाने बनाते है और उसी उनमें माला बनाते है सूत्र भी उनी और दाना भी उनी– सब उनी ही और कुछ नही ।

ऐसेही सब मेरेमें ओतप्रोत हैं । मेरेसे बाहर कुछ भी नही । उपनिषदमें श्रुति भगवती इसबातको और स्पष्ट करती है

पुरुष एवेदं विश्वं कर्म तपो ब्रह्म परामृतम् ।
एतद्यो वेद निहितं गुहायां सोऽविद्याग्रन्थिं विकिरतीह सोम्य ।।१०।।

(मुण्ड. २–१–१०)

समग्र विश्व पूर्ण परमात्मासे उत्पन्न हुआ है यह पूर्ण ही है उसके (पूर्ण परमात्मासे) बाहर कुछ भी नही । जैसे सोनेसे उत्पन्न हुआ कंकणभी सोना ही है । यही बात युजुर्वेदमें भी श्रुति भगवती दोहराती है

पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्चभाव्यम्
एतवानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्याऽमृतन्दिवि ।।३२।।

कार्य कारण भाव दिखता वहाँ भी सत्ता वही है उसकी महिमामें कार्य दिख रहा है– मन्त्र कहता है नामरूपप्रपंच ये परमात्माकी महिमा है– उसकी विभूति है चमत्कार है मन्त्र उसकी महिमाका व्याख्यान करते हुए आगे कहता है– संपूर्ण भूत परमात्माकी एक पादमें है त्रिपादस्य अमृतम् दिवि– मन्त्रने यहाँ परमात्माके चार पादका वर्णन किया– तो कहनेका अभिप्राय पशु जैसे पाद नही– किन्तु माया और मायाका प्रपंच जो कुछ है परमात्माके आभासमात्र में है चिदाभासमें है उसके असली स्वरूपमें कुछ भी नही। उदाहरणसे इस बातको समझो– सो गये तो स्वप्न हमारेको दिखने लगा तो उसमें हजारो आदमी दिखे कही पहाड कहीं नदियाँ कही समुद्र– यह सब संस्कारके द्वारा चिदाभासके अन्दर यह भान है जो स्वप्न दृश्य बना हुआ है।

चिदाभासमें सारे लोक लोकान्तर पडा है संस्कार रूपमें। चिदाभासको यहाँ श्रुति एकपादसे कहती है। चिदाभासकी चमक चेहरेपे है चाहे कितना भी बिमार रोगी क्यों न हो जब यह चमक दिखती है तो डाक्टर उसको बचानेकी कोशिश करता है अगर चिदाभास मलिन हो गया तो वह भी कुछ नही कर शकता तो चिदाभासने इस शरीरको खडा करके रखा है। यह जो चिदाभास यह अविद्या सहित बुद्धिमे जमा रहा है तो जिसने लोकलोकान्तरमें जाना पडेगा तब सूक्ष्म शरीरको समेट लेगा– श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान कृष्ण उद्धवको तत्त्व बोध देते हुए कहते है

स्वप्नमें जैसा दृश्य सामने आयेगा तुम्हारे चित्तमें भी वैसा विकार बनेगा– कोई अच्छा दृश्य देखा तो हसेगा– और नही तो रोयेगा– ऐसे बच्चोमें भी- पशुमें भी देखा गया। क्योंकि पशुमें भी प्रियाप्रिय तो है। स्वप्न सृष्टिमें जैसे संस्कार सामने खडे हो जाते है भगवान कहते है अनन्तजन्मोके कर्मके संस्कार इसके मनमें पडे है तो यह जीव लोक लोकान्तर क्यों नही जायेगा– मन भी साथमें जायेगा–। साभास मनके आने जानेसे आत्मामें आने जानेका आरोप होगा।

जैसे दृष्टान्तसे समझो– आजसे– ५० वर्ष पहले जो यहाँसे ईंग्लेन्ड जाते थे तो साथमें अपना घडा उठाके ले जाते थे– मिट्टीका बना है– मिट्टीकी तो कोई

किमत नही वह यहा भी है वहाँ भी है– किन्तु जब घट यहाँसे वहाँ गया तो आकाश उसके अन्दर जो था वह भी जाता हुआ दिखता है– घटकी उपाधिसे आकाशमें ये विकार दिखा– ऐसे आत्मामें समझो।

लोक लोकान्तरमें जाता है साभास मन किन्तु आरोप होता है आत्मामें। तो साभास मन अगर– उसके सामने स्वर्गके संस्कार सामने आ गये तो ये स्वर्ग जायेगा। और नर्कके संस्कार सामने आगये तो ये नर्क जायेगा। यह जो तुम्हारी आत्मा है सत् है सत् है यह जगतका मूल है उसकी सत्तामें यह जड चेतन प्रपंच जो भी है अधिष्ठित है– आश्चर्यमें है।

सारी प्रजा सत्में ही ठहरी हुई है

लोक जीवनमें भी जीतने कर्म है सत् की प्रतिष्ठानमें ही चल रहे है–

झूठ बोलता हुआ भी व्यापारी जब कहता है हम सच कहे रहे है तब सत्को सामने खडा किया तब अगला आदमी विश्वास करता है। व्यवहार भी सत्के आश्रयसे ही चलरहा है।

कल इस बातको आगे स्पष्ट करेंगे–

हरि: ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. २४

ॐ तस्य क्व मूलं स्यादन्यत्राऽद्भयोऽद्भिः सोम्य शुङ्गेन
तेजो मूलमन्विच्छ तेजसा सोम्य शुङ्गेन सन्मूलमन्विच्छ
सन्मूलाः सोम्येमाः सर्वाः प्रजाः सदायतनाः सत्प्रतिष्ठा
यथा नु खलु सोम्येमास्तिस्रो देवताः पुरुषं प्राप्य
त्रिवृत् त्रिवृदेकैका भवति तदुक्तं पुरस्तादेव भवत्यस्य
सोम्य पुरुषस्य प्रयतो वाङ्मनसि सम्पद्यते मनः प्राणे
प्राणस्तेजसि तेजः परस्यां देवतायाम् ।।६।।

ॐ स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदंसर्वं तत्सत्यं स आत्मा
तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एव मा भगवान् विज्ञा-
पयत्विति तथा सोम्येति होवाच ।।७।।

(छान्दो ६–८–६ । ७)

तो यहांपर महाऋषि उद्दालक सत्यकी मीमांसा कर रहे है की सत्यके बिना यह जगत ठहर नही सकता । इसके मूलमें सत्य है । इसके लिये शरीरका दृष्टान्त देते है । यह हमारा शरीर भी सत्के बिना प्रतिष्ठित नही होगा जो भी

कार्य होगा उत्पन्न होनेवाला पदार्थ होगा उसका कोई कारण अवश्य कोई होगा– तो इस शरीरके पीछे जो कारण है वह अन्न है। किन्तु अन्नको भी उत्पन्न होते देखा तो यह भी कार्य है तो इसका कारण भी होगा तो उसका कारण जल है और इसी तरह जलका मूल है तेज और तेजको यूँ देख रहा है वह भी स्वतंत्र नही। वह भी सकारण है। उसका कारण है बेटा उस तेजके कारणमें तेज बना हुआ है।

शरीरके अन्दर कितनी गरमी चाहिये तुम्हारेको १८.४ सी तो इतनी गरमी रहेगी तो अच्छी तरह जी सकोगे– अगर थोडी बढ गई या घट गई तो जीवन खतरेमें आ गया– तो ये सोचो वेटा के इतनी ही गरमी चाहिये यह मनुष्य शरीरके लिये यह मिटर किसने Fit किया ?

मनुष्य शरीरको इतनी गरमी चाहिये– दूसरे प्राणी सिंह आदिको उससे ज्यादा क्योंकि ये क्रूर और शूरवीर प्राणी है– तो यह बेलेन्स किसने बनाया– माप किसने बनाया ? तो तुम्हारे शरीरकी गरमीका आश्रय वह जो सत् है उस सत्के आश्रयमें यह सब चल रहा है।

सत्की व्याख्या अपने पहले भी करके आये है सत् वह है जो एकरस है, उसके स्वरूपमे कोई परिवर्तन नही, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जिसमे आश्रय पा रहा है। हमारा मन तो छोटे छोटे नामरूपमे अटका हुआ है मनमें रागद्वेष चल रहा है मनको अन्दर समता नही तो मन आत्मगामी नही होगा– भोगासक्त होनेसे नाना प्रकारकी चिंताओका शिकार हो जायेगा– इसलिये इस सत्में अपना मन ले आओ तो वह नाम रूपसे उपर उठ जायेगा। लोक जीवनमें भी सतके बिना चलता नही।

मनोवाणीकर्मणामेकरूपता सत्यम्।

एक तो है परम सत्यम् जो साध्यरूप है और एक है साधनरूप सत्य। तो लोक जीवनमें साधनरूपकी– मनमें जो संकल्प आया– वाणी वही उच्चारण करे– और हाथ वही कर्म करे वह सत्य।

जिसका संकल्प जुदा वाणीसे व्यवहार जुदा और कर्म जुदा वह जुदा प्राणी है।

साधनरूप जो सत्य है वह सापेक्ष है।

परम सत्य जो सत्ता है वह निरपेक्ष है। जैसे अग्निको जलानेके लिये अग्निकी जरूरत नही। किन्तु लकडीको जलानेके लिये अग्निकी जरूरत पडती है। ऐसे यह आत्मा निरपेक्ष है किन्तु शरीरको आत्मा जैसे बननेके लिये आत्मा चाहिये यह सापेक्ष है हमारा यह शरीर।

आगे समझाके आये कि परमात्माने तीन देवता– पृथ्वी, तेज, जलको खडा किया यह नाम– रूपकी सृष्टि करनेके लिये। श्रुति भगवती यहाँ तीन भूतोंकाही नाम लेती है क्योंकि ये तीनो इन्द्रिय ग्राह्य है– देखनेमें ज्ञात है रूपवत्– रसवत् द्रव्यवत् है और आकाश और वायुका नाम नहि लेती क्योंकि ये दोनो देखनेमें नही आते ये स्पर्शग्राह्य और शब्दवत् है। पंचभूतोसे बना यह जगत हैं विराट परमात्माका शरीर है। परमात्माके कोनेमें बैठे है– मनुष्य शरीर इसलिये अच्छा है इसमें परमात्मकितत्वका विचार ये कर सकता है–।

मेहमान कबतक रहेगा कोई घरमें– गृहपति कहे तब तककी बिषमें ही चलना– यह जो पंचभूत है उनको तो इस विराट परमात्माके घरके गृहपति समझो– मेहमान यह शरीर–। मेहमान अच्छा वह जो दूसरे– तीसरे दीन अपना वेडींग बिस्तरा लपेटना शुरू करे। तब तो घरवाले पूछेंगे क्या बात है क्यों चले– एक दो हप्ता जानेकी बातही नही करना– मनाके रखेगा गृहपति– किन्तु यह तो माया भागवतीका मन्दिर है ऐसा नही हो कि मेहमानको गृहपति जबरजस्ती स्टेशनपे बिठालाये– इसलिये अपने तैयारी रखनी चाहिये। तैयारी रहना चाहिये– मुमुक्षुको कल करेगे नही– कल किसने देखा है ? जिसने भी देखा है आजही देखा है। कल करेंगे करते करते मृत्यु देवताकी नोटिस आ गई तो घबराये– ऐसा न हो–।

इसलिये भगवान कृष्ण भी गीतामें अर्जुनको उपदेश करते हुए कहते है

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥

(गीता० ८–६–)

नाम स्मरण– मन्त्रजाप था ब्रह्माकारवृत्तिको बनाते है जीवनमें– इसलिये दूसरे देवीदेवताका मन्त्रजाप करना भी ठीक है बूरा नही किन्तु सर्वसे प्रिय यह है जो महावाक्यसे ब्रह्माकारवृत्तिको जाग्रत करना अगर यह ब्रह्माकारवृत्ति दृढ

हो गई– मृत्युकालमे आ गई स्मृतिमे तो मोक्ष हो जायेगा जीव निर्भय हो जायेगा ।

दूसरे देवी देवता ऐश्वर्य दे सकते है किन्तु निर्भय नही कर सकते ज्ञानीका संग करोगे तो वह मृत्युके भयसे निर्भय है तो वे तुमको भी निर्भय कर देगा ।

मृत्युकालमें कोई अच्छी योनि सामने आयी तो प्रसन्नता होगी और हसते हसते देहमे जुदा हो जायेगा– किन्तु अगर कोई भयंकर योनिका जीव सामने आया तो यह जीव मूर्छित– हो जाता है– बेहोश हो जाता है– कोई क्रिया नही फिर भी वह अन्दर तो पडा है ।

एक बडे अच्छे संत रहे । रोज सत्संगके जिये सबलोग जाते थे– जब कोई कहता गुरुमहाराज उपदेश करो तो वे ज्यादा प्रवचन तो करते नही इतना ही कहते थे मनुष्य बनो– । तो जो पुराना सत्सगी रोज ये सुने– अब तो पुराना भगत है कभी वोही भगवान बन जाता है तो भगवान कोभी भक्तबनना पडता है– क्योंकि

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।

(गीता ४।११)

तो उसने एकदिन गुरुमहाराजको कहाँ– आप तो रोज ही हमे यही उपदेश देते हो– मनुष्य बनो– मनुष्य बनो– तो संत कहने लगे– तुम जरा अन्दर जाओ और मेरा योगपट ले आओ । तो जवान था शिष्य– जवानमें जोश ज्यादा होश कम– एकदम अन्दर गया और योगपट उठाके ले आया तो महात्माने कहा जरा बैठके ओदके देखो तो . क्या है ? उसने वह योगपट ओदके देखा तो– क्या देखता है दूसरे जीतने भी बैठे थे उसमें मनुष्य तो एक दो ही थे– बाकी सब विविध प्राणीकी सकलमें दिखे तो उसने योगपट हटाया तो फिर सब बडे सुन्दर मनुष्य सकलमें दिखे– उसने कहा महाराज ये क्या– तो गुरुमहाराजने बताया देखो जिसके जैसे कर्म है उसके अनुरूप योनि पीछे चल पडती है– और मृत्युके समयमें जब वह योनि सामने आती है तो अगर अच्छी है तो प्रसन्न होता है अगर बूरी योनि है तो बेहोश हो जाता है– पीछे हट जाता है । यह मनुष्यकी खोपडी बडी दुर्गम स्थान है शरीरमें अविवेकी जीव इसमे फस जाता है– विवेकी निकल जायेगा ।

इसलिये हिन्दु शास्त्रोमें अग्नि संस्कारका विधान किया क्योंकि कही ये फस गया तो ये सडता रहेगा इस शरीरमें ये भूनामका नर्क ।

इस नर्क को स्वर्ग बनाता है सत्कर्म, सद्‌गुण, सद्विचार। इसलिये महात्मा कहते रहे बेटा मनुष्य बनो मनुष्य बनो। अब यह भगत महात्मासे बिनति करता है महाराज ये योगपट एक दिनके लिये हमको घर ल जाने दिजीये– देखु तो घरमे कौन कौन आया हुआ है–। उन्होने कहा जा लेजा– तो भगत बडा प्रसन्न होके घरमें आया और योगपट ओढके अपने पत्नीको देखने लगा तो अब वो आगनमें झाडू लगा रही थीं– नयी चालसे देखोतो ये बिगडेगी नही ? तो कहने लगी क्या बात है क्यों ऐसे दुकुर दुकुर ताक रहे हो– तो बोला अरे तेरी असली सकल देख रहा हुँ– गुरुमहाराजसे ये योगपट ले आया हुँ– तो उसको तो घरवाली कुतियाकी सकलमे दिखी और बच्चे– कोई बिल्ली तो कोई ओर प्राणी– उसने अपनी पत्नी को मनाया और बोला जरा इधर आ तो ले ये ओढले और मेरेको जरा देखतो... उसने ओढा तो क्या देखती है– अरे ये गधेसे मेरी शादी हुई है– उसने योगपट फेंक दिया– तो वह बोला अरे ज्यादा मत बोल तेरी भी सकल कोई अच्छी नही अब जीवनमे सावधान हो जाओ–

जो बिती ताहे बिसारी नयी बातको याद करो। तो अंत समयमे जैसा स्मरण होगा वैसीही योनि मिलेगी।

पुराणोमें भी एक कथा आयी भरतराजाकी कथा–। भरतराजा एक बडे राजा थे उन्होने अपने वानप्रस्थ कालमें– सब कुछ त्याग करके वनमें चले गये– वहाँ भगवानका नाम स्मरण जप ध्यान आदि करने लगे एकबार कोई हिरणीका बच्चा उनके पासने आया मा तो जन्म देके मर चूकी थी– तो वे बडे प्यारसे उनको पालने लगे– अब धीरे धीरे बच्चा बडा होनेलगा तो उनका राग हो गया– एकबार बच्चा जंगलमे दूर चला गया तो लौट कर ही नही आया– उनके लिये वे भगवानसे प्रार्थना करने लगे– तो मृत्यु देवताने तो कोई चिट्ठी नही भेजनी– वे तो आ गये उसटाइम ध्यानमे हिरनीको बच्चा था– तो उनका आगेका जन्म हिरनरूपमें हुआ– तो वहा ज्ञानने उनको स्मृति दिया तो वे पशुयोनिमें भी साव-धान हो गये– उनका तीसराजन्म हुआ– बडे अच्छे ब्राह्मणके यहाँ किन्तु जन्मसेही

ज्ञान जाग्रत था तो बच्चा रोया ही नही– रोनेमें भी मन देंगे तो फसेंगे– उसने किसी चीजमें भी मन दिया नही तो अब ये ज्ञानी है– जड बन गया बैठाया तो बैठ गया– खीलाया तो खाया– उसका नाम पड गया जड भरत– । ऐसे

तो मन ब्रह्मभावमे फेंकोगे तो ब्रह्म बनेगा । ब्राह्मीवृत्ति– महावाक्यसे उत्पन्न जो ब्रह्माकारवृति है वह केवल चिन्मात्र स्वरूपको विषय करेगी– तो मोक्षमें ले जायेगी । इसवातको और आगे स्पष्ट कल करेंगे...

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. २५

ॐ अथ यत्रैतत्पुरुषः पिपासति नाम तेज एव तत्पीतं नयते तद्यथा गोनायोऽश्वनायः पुरुषनाय इत्येवं तत्तेज आचष्ट उदन्येति तत्रैतदेव शुङ्गमुत्पतितं सोम्य विजानीहि नेदममूलं भविष्यतीति ।।५।।

ॐ तस्य क्व मूलं स्यादन्यत्राद्भ्योऽद्भिः सोम्य शुङ्गेन तेजो मूलमन्विच्छ तेजसा सोम्य शुङ्गेन सन्मूलमन्विच्छ सन्मूलाः सोम्येमाः सर्वाः प्रजाः सदायतनाः सत्प्रतिष्ठा यदा नु खलु सोम्येमास्तिस्रो देवताः पुरुषं प्राप्य त्रिवृत् त्रिवृदेकैका भवति तदुक्तं पुरस्तादेव भवत्यस्य सोम्य पुरुषस्य प्रयतो वाङ्मनसि सम्पद्यते मनः प्राणे प्राणस्तेजसि तेजः परस्यां देवतायाम् ।।६।।

ॐ स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदंसर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एव मा भगवान् विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच ।।७।।

(छान्दो. ६-८-५।७)

तो बात आयी महाॠषि उद्दालक अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतुको इस रहस्यको स्पष्ट करते है की है बेटा इस जगतमें जो हम रहते है– इस जगतके मूलमे जो तत्त्व है वह असत् हो नही सकता– जडभी हो नही सकता और किसी आकारमें बन्धा हुआ भी नही हो सकता ऐसा वह जो तत्त्व है वह सत् है । उस सत्की व्याख्या करते हुए आ रहे है किन्तु सूक्ष्म बुद्धिमें तत्त्वका अवतार जल्दी नही होना इसलिये महाॠषि ने शरीरको पकडा– । हे सोम्य यह जो तेरा शरीर है ये बिना कारणके हुआ नही इस शरीरका कोई तो कारण है और यह जो मनुष्य शरीर है यह बडी महिमावाला शरीर है । सारी योनियोमें शरीरको देखो कोई मनुष्य शरीरका मुकावला कर नही सकता क्योकि इस मनुष्य शरीरसे जीव जो चाहेगा वह मिलेगा– । जैसे बडी बडी सिद्धि होती है उसमें एक प्राकाम्य नामकी होती है उसमें जैसे इच्छा होती है वैसा हो जायेगा जेसे उसकी इच्छा हुई मैं पृथ्वीमें प्रवेश करूँ तो पृथ्वी जगह दे देगी– अब चाहेगा मैं अग्निमे प्रवेश कर जाऊँ वो अग्निमे प्रवेश कर जायेगा अग्निमे कोई बाधा नही होगी ऐसेही जलमे भी और आकाशमें भी वह उड सकता है । आजकल तो लोग सिद्धियोंका बडा प्रदर्शन करते है किन्तु प्राचीन कालमे महाॠषि पतंजलिकी परस्परासे प्राप्त जो योगशास्त्र है उसके अन्दर जैसी सिद्धिका व्याख्यान है– वह केवल व्याख्यान ही नही किन्तु एक सत्यकी चर्चा है ।

यह जो तुम्हारा शरीर है ये सबकुछ देनेवाला है तो इसको तो सिद्ध मुनी समझो । जो इच्छा करोगे वह उत्पन्न कर दे देगा– इसलिये इस मनुष्य शरीरमे जीव बडे भाग्यसे आता है । मनुष्य शरीरमे सावधान करनेके लिये गुरु है शास्त्र है । यहाँ मनुष्य सावधान रहे कोई गलती नही हो क्योंकि यहांपर इसको जो शक्तियां मिली है परमात्माकी ओरसे– यह तीन शक्तियां है विचार शक्ति– संकल्प शक्ति और क्रियाशक्ति और कोई दूसरे शरीरमे नही ।

इस तीनको सुरक्षित रखनेके लिये– सरकार की ओरसे व्यवस्था है । अच्छे बुद्धिमान स्वतन्त्र रूपसे विचारकर के संकल्प कर सके और कर्म कर सके इसलिये उसकी स्वतंत्रताकी रक्षा सरकार करती है । और जो बूरे विचारवान है– उसको दबानेके लिये सरकार है । यूंतो जंगलमें कांटे होते है किन्तु कांटेही कांटे हो जायेतो जंगलमे कोई घूस ही नही सकता इसी तरह यह मनुष्यका एक जंगल ही है इसमें अगर बुरेही बुरे विचारवाले होते रहेना मुश्कील हो जाये– । अच्छे विचारवान भोगासक्त और मोहासक्त न रहें– जिन विषयोमें हम बडी प्रीति बान्धके बैठते है वे विषय एकदिन हमारेको छोडदेगे– हम उनको नही छोडेगे तब

भी वे हमको छोडके चले जायेंगे– । जैसे इस शरीरमें हम आये तो बचपन आया तो उसने छोड दिया फिर कुमारावस्था आयी तो उसने छोडा तो देखो कुमारावस्थाके जितने भोगथे उन्होने छोडाकी नही ? युवावस्था भी ऐसेही आयी– और वह भी हमको छोडके चली गई– ।

एक बडे राजाऋषि हो गये भर्तृहरि उन्होने बडा सुन्दर लिखा– है–

देखो ये जितने भी प्रिय विषय है एकदिन तो जरूर जायेंगे– चाहे चिरकाल तक रहेंगे तुम्हारे पासमें विषय नाम है इनका– जो तुम्हारे ज्ञानको खींचके अपने आकारमें खडा करदे वह विषय ।

जहाँ मनसे देखा– जैसे मानलो यह गुलाबका फुल है जैसे ही मनसे देखा तो हमारेमनको खींचके उसने अपने आकारमें खडा कर दिया और मनके अन्दर जो चिदाभास है वह इस आकारमें बन्ध गया ।

विषय जो बलात् खींचलेता है इसलिये कहते है की आसक्तिको कम करो– धीरे धीरे विवेकी अपनी आसक्तिको मोहको कम करे ।

मोह जब कम होगा तो मन निर्मल हो जायेगा । इसलिये कहते है इन विषयोने तो तेरेको एकदिन छोड देना है यह मनुष्य अपने आप छोडता नही इसलिये अशान्ति हो जाती है । और अगर ये अपने आप इन विषयोको छोड देतो शान्ति मिलेगी । मनुष्यको सुखको पानेके लिये मनको शान्ति करना आवश्यक है इसलिये भर्तृहरि कहते हैं विवेकी अपने मनको विषयोसे बचाके रखता है ।

विषय तुम्हारेको तब छोडेंगे जब तुम्हारेमें कोई रस नही रहेगा जैसे अपने आम चूसते है की नही । जब पूरा रस चूस लेते है और जब गूडली छिलका रह जाता है तब छोड देते हैं की नही ? इसी तरहा इन विषयोको समझो– इस शरीरमें से विषय हमसे रस ले रहे है ।

बुद्धिमान इस मनुष्य जीवनका मूल्य समझे इतना बडा संसार है अगर हमारा एक अंग कहीं टूट जाये तो हजारो रुपिये खर्च करना पडता है और डाक्टरको मगवाना पडता है किन्तु फिर भी वह अंग पहेलेके जैसा काम नही करता– इसलिये इस बहुमूल्य शरीरकी किमत समझे । यह विषय स्वतंत्ररूपसे तुम्हारेको छोड देंगे तो मनके अन्दर अतूल ताप भी होगा– इसलिये संसारसे संबन्ध भी रखो और वैराग्य भी रखो । परमात्माने तुम्हारे अन्दर राग भी रखा है तो विराग भी रखा है तो विरागका भी उपयोग करो जीवनमें अमुक अवस्थामें जाके रागकी प्रधानता होती है अमुक अवस्थामें विरागकी प्रधानता होती है ।

जैसे मानलो इस शरीरकी जवानीने हमको छोड दिया तो हमने तो नही न इसको छोड दिया तो शरीरमें आसक्ति थी उसको अब कम करो- और विरागको बढाओ। धीरे धीरे तो विषय छोड देंगे तो दुःख नही होगा। स्वयं जब विषयो को छोडता है जीव तो उसको अनन्त सुख प्राप्त होता है मनमें शान्ति आयेगी।

यह जो हमारा शरीर है जो आज हम देख रहे है उसका कोई कारण होगा- तो बेटा सोचो इसका कारण क्या? तो मन्त्र कहता है अन्न इस शरीरका कारण और उसका भी कारण है जल-

मन्त्र कहता है

अथ यत्रैतत्पुरुषः पिपासति नाम तेज एव यत्पीतं नयते
(छान्दो० ६-८-५)

इस शरीरमें जल पिनेकी इच्छा करता है- अगर यह सुन्दर जल पिया और इस जलका शोषण नही हो तो पानी बढ जायेगा की नही ? एक वह जलोदर नामक रोग होता है ना ? उसमे पेट फुल जाता है अगर अन्न खाते है और पानी पिते उसका ठीक ठीक पाचन होता तो रोग क्यों बढता ? यदि बुद्धिमान डाक्टर उसका चेकअप इस समय नकरे तो उस शरीरका क्या हाल होगा- शरीर तो हरि ॐ तत्सत् कर जायेगा। जहाँ भूमिमें पानी अधिक पड गया तो वहाँ चलना मुश्किल हो जायेगा ऐसेही इस शरीरमे पानीका शोषण नही होगा तो पानी पानी बढ जायेगा- तो शरीरका मांस सडने लग जायेगा- पानी चूने लग जायेगा अब कौन जीवन देगा तुम्हारेको।

इसलिये परमात्माने शरीरके पीछे पानीको रखा और पानीके पीछे तेजको रखा। तेजका काम क्या है ? पानीकी जरूरत है उतना रखके बाकी शोषण कर लेना। सूखा देना। पानी सूख जायेगा तो शरीर स्वस्थ रहेगा। पानीको सुखानेके लिये कहीं परमात्माके यन्त्र है अन्दर लगाये हुए। उस पीये हुए जलको व्यवस्थित ले जानेवाला कौन है दिखता है तेरेको ? हमने तो सिर्फ पानी पिया बस इतना पुरुषार्थ किया- किन्तु इस पानीसे क्या क्या होनेवाला है हमे पता है ? तेजको पीछे रखा पसीनेके द्वारा- मूत्रके द्वारा ये ज्यादा पानीको बाहर नीकाल देगा- और जितनी जरूरत है अपना रखेगा।

वह तेज क्या है ? इसका कारण कौन है ?

श्रुति अनुमान खडा करती है दूसरे देखा धूम तो वहाँ अग्नि है ये अनुमान किया- वैसे ही तुम देखते हो गौ चली जा रही है या अश्व चले जा रहे है सुव्यवस्थित घरकी ओर तो भले ही तुम उनका चलानेवालेको न देखा हो- किन्तु पशु

जब पंक्तिबद्ध जा रहे है सुव्यवस्थित तो को उसका नियता है– यह अनुभव करना पडेगा । क्योंकि पशु कभी सुव्यवस्थित अपने आप चलता नही । मन्त्र में उदन्वेति शब्द आया– इसका मतलब है जो पानीको इधरसे उधर ले जाये– पानी जब refine हुआ तो स्थूल भाग वो है वह मूत्र बना मध्यमभाग है वह रक्त बन गया और जो सूक्ष्म भाग है वह प्राण बना– पहेले ही इस बातको कहके आये तो अब बताओ ये तीन विभाग जो हो रहे है क्यों हुए ? किसने किये ? तो कहना पडेगा तेजने किया– तेज ही सारी क्रिया कर रहा है । पानी जब पच गया तो टंकी में पानी खतम हुआ तो पिपासा लगी– और–हमने फिर पानी पीना– ।

पानी पीते है तो खाया हुआ अन्न भी पचेगा– अपने लोग आलु उबालते है हंडीमे तो एक हंडी में आलु डालदो नीचे अग्नि जलादो किन्तु पानी हंडमें नही डालो तो जबतक उस आलुके अन्दर पानी है तब तक ठीक रहा किन्तु जब पानी नही रहा तो आलु जायेगा की नही ? इसी तरह तुम्हारे अन्दर तेज क्रियाशील है और उपरसे पानी नही दोगे तो शरीरका ही शोषण हो जायेगा । इसलिये पानी भी देते रहना पडता है । हे बेटा तो यह तेज तेरे सामने खडा हो गया तो सोचा यह भी कार्य है तो इसका कारण कौन है ?

सर्वं त्रिवृतम्–त्रिवृतम्– यह जो भी जगत हमारे सामने है वह तीनो भूतोसे मिश्रित है खडा हुआ है । जहाँ भी कोई मेटर वस्तु सामने आता है तो वहा वह तीनो ही है किन्तु जहाँ जिसकी विशेषता होगी ऐसा कहेंगे जैसे यह शरीर अन्नमय है । तो शरीरका कारण अन्न– अन्नका कारण जल जलका तेज– हे सोम्य यह जो तेज है ये भी कार्य है अब इसका कारण है वो सत्– अब उस सत्की खोज करो वह सत् देखनेमें नही आयेगा आंखोसे– हाथकी पकडमें नही आयेगा कहीं जानेसे पैरोसे वहाँ पहुंच नही सकते केवल उस एकमात्र सत्की खोज़ के लिये मनुष्यके पास कौन साधन है तो केवल सूक्ष्म बुद्धि है ।

इस दृष्टिसे अपनी बुद्धिको सूक्ष्म करे । अपने यहाँ वैदिक परम्परामें यज्ञो पवित्त आदि संस्कार क्यों करते है इसलिये की छोटे बच्चोकी बुद्धिका पोषण बचपनसेही शुरु कर देते है । यज्ञो पवित्त हुआ गायत्रीमन्त्र का उपदेश किया तो बच्चा उस गायत्रीमन्त्रका जाप करता है ध्यान करता है उससे उसको मिलता क्या है भला ? बुद्धिका शोधन होता है । बुद्धिकी शुद्धि क्या– बुद्धिमें सहज चंचलता है वह कम होना ही शोधन है– मनकी एकाग्रता बुद्धि इच्छाओंका बगीचा है उन इच्छाओंको काटनेके लिये मन्त्रजाप आदिका विधान किया तो बुद्धिमें स्थिरता आयेगी इसलिये मन्त्र में क्या कहा–

तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि...

उस परमात्माका जो महान तेज है उस तेजका हम ध्यान करे– । यहाँ तेज है वह कैसा तेज क्या सूर्यके तेज जैसा कि अग्निके तेज जैसा था विजलीके तेज जैसा ? कैसे तेजका ध्यान करोगे भला ? तो कहना पडेगा उस परमात्माका ज्ञानरूप तेजका ध्यान करो– ।

परमात्माका दर्शन भी क्या– ज्ञानके परम दिव्य स्वरूपमे पहुँच जाना उसका दर्शन करना है ।

वह हाथसे पकडमें आनेवाला परमात्मा नही– एक कथा आती है– एक बडा भोला राजा रहा कोई देशमें– तो भोला होना– राजा होना दोनोही पुण्यका फल है– अब राजा बडा भोला था तो संत रहे उनके बडे प्रेमी तो उसे कहने लगाकी हे गुरुमहाराज मेरेको तो ऐसा देवता दो जिससे बडा कोई नही– ऐसा देवता हमे दे दो–

तो महात्माने अपनी झोली में से ऐक शिवजीकी पींडी निकलके दे दी ले ये सबसे बडा देवता है इसकी तु पूजा किया कर– अब राजा तो बडा श्रद्धाशील है– उसने पूजा शुरु कर दी– जो दिख नही रहा है वह भी जीवन है हमारा उससे प्यार भी स्वभाविक होता है । वह प्रकाश जिसके प्रकाशमे आँख देखती है वाकी बोलती है वह ज्ञानरूपी प्रकाश है वह परमात्माका प्रकाश है इसलिये वैदिक सिद्धान्त है–

विज्ञामनन्द ब्रह्म– प्रज्ञानं ब्रह्म । उसका अनुभव होना वहाँ जानेके लिये मनकी एकाग्र स्थिति होनी चाहिये । उस एकाग्र स्थितिके लिये उपासनाका विधान है अब वह राजा तो पूजा करने लगे गया– एकदिन मूर्ख चूहा कहीसे उधर से नीकला और शिवजीके उपर चड गया और जो चावल चढाये थे वह लेके खाने लगा तो राजा ने देखा तो सोचता है अरे गुरु महाराज गलतीमें बडा देवता तो ये चुहा ही मालुम पडता है– तो राजाने जैसे तैसे चुहेको पकडा खाना दाना देने लगा तो चुहा पालतु हो गया अब उसकी पूजा होने लगी– चुहा भी पूजाके टाईममें चूपचाप बैठ जाये– एकदिन बिल्लीने देखा यह तो क्या मजे का रसगुल्ला बना हमारा भोजन है तो राजा जब पूजा करके ध्यान करने बैठा तो चुहा मस्त बैठा था तो उधरसे बिल्ली आयी और चुहेको उठा लिया– राजाने सोचा अरे ये बिल्ली ही सबसे बडा देवता– अब उसकी पूजा होने लगी एकबार क्या हुआ की

राजाने जो कुत्तेको पाल रखा था– उसमे बिल्लीको देखा तो– उसको मारा तो राजाने सोचा अरे यह कुत्ता ही बडा देवता है अब कुत्तेकी पूजा होने लगी अब यह कुत्ता तो मस्ती में सब जगह घूमने लगा– तो एकदिन रसोइघरमें ही पहुंच गया तो महारानी बिगडी– उसने सोचा अरे ये तामसी जीव यहाँ कैसे पहुंच गया उसने उठाके कुत्तेको फटकारा तो वहभाग गया यह राजाने देखा तो सोचा अरे यह हमारी महारानी ही सबसे बडी देवता है– अब राजा तो महारानी की पूजा करने लग गया-एक दिन क्या हुआ की किसीबिषयमें महाराजाको बडा गुस्सा आया तो उसने महारानी को मार दिया– तो फिर सोचने लगा– अरे यहांपर तो मैं ही सबसे बडा देवता हुँ– झट– उस भोले राजाने इतना राउण्ड लगाया तब अपने घर पहुँचा– ऐसे जो भेदप्रज्ञ है उसकी ऐसी हालत है। तत्त्वविचारमें आकर अन्तमें उसको मालुम पडाकी यह आत्मा ही बडा भगवान है। तो महाऋषि कहते है हे बेटा यह जो आत्मा है वह तेरा निजरूप है इस आत्माके करंटसे यह जुदा हुआ तो लोग उसे मुरदा कहेंगे–। तो मन्त्र कहता है सारी प्रजाका मूल सत् है–। बेटा ये बताओ यह सत् कहा रहता है ? किस देशमें किसकालमें कौन से रूप में है ? यह जो सत् है वह न तो कालकी न तो देशकी और न तो बस्तुकी पकडमें है। यह तो त्रिविध परिच्छेद है। उनसे भी परे असली तत्त्व है।

परमात्माका यह सारा जगत है– उसको परमात्मा देश– काल और बस्तु इन तीनोंके द्वारा प्रपंचको लय करता है।

जैसे देखो यह हमारा शरीर है– उसको तो कालने खींच खोचके इतना लम्बा कर दिया– देश कहते है यहाँ बैठ जाओ– तो वहाँ बैठ गया और अब तुम इस आकार मे fit हो जाओ तो वैसा हो गया– तीनोने बांधा जीवको– अब बैठे बैठे आयुरूप जो कडा प्रसाद था उसको तो काल खा गया– बाकी कटोरा– खाली तो इस शरीरको तो कटोरा समझो– तो जब खाली हो गया तो कटोरेको उठाके ले गये जलनेकी जगहपे– आयंघाटपे रखा– और फिर चिल्लाये मर गयारे मर गया–।

इसलिये महाऋषि कहते है । हे सोम्य यह सत् तुम्हारी आत्मा कालकी पकडमें नही है यह कालका भी साक्षी कालसे परे है ये देशका भी साक्षी देशसे परे है और ये सब पदार्थोका भी साक्षी सबसे परे है ।

जैसे मानलो यह फुल है हमारे हाथमे हम देख रहे है तो दिखता है तो फुल हुआ दृश्य और हम द्रष्टा तो दृश्य जो भी होगा अनात्मा होगा– जड होगा और वह चेतन नही होगा– उत्पत्ति और विनाश होगा ऐसे ही तुम्हारा यह शरीर भी दृश्य है इसको हम देखते है तब दिखता है जैसे निद्रामें हम इसको छोड देते है तो नही दिखता– हमारे देखने पर हमारेको दिखता है तो वह शरीर हम नही – ।

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. २६

ॐ तस्य क्व मूलं स्यादन्यत्राद्भ्योऽद्भिः सोम्य शुङ्गेन तेजो मूलमन्विच्छ तेजसा सोम्य शुङ्गेन सन्मूलमन्विच्छ सन्मूलाः सोम्येमाः सर्वाः प्रजाः सदायतनाः सत्प्रतिष्ठा यथा नु खलु सोम्येमास्तिस्रो देवताः पुरुषं प्राप्य त्रिवृत् त्रिवृदेकैका भवति तदुक्तं पुरस्तादेव भवत्यस्य सोम्य पुरुषस्य प्रयतो वाङ्मनसि सम्पद्यते मनः प्राणे प्राणस्तेजसि तेजः परस्यां देवतायाम् ॥६॥

ॐ स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एव मा भगवान् विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच ॥७॥

(छान्दो० ६–८–६।७)

तो जीवनका बडा महत्त्वपूर्ण विचार आता है महाऋषि उद्दालक इस बातको समझाते आयेकीं सत् के बिना असत् की प्रतिष्ठा नही। इसलिये हे सोम्य इस जंगतमे जो कुछ भी दिखता है वह सत्के आश्रयमें जीवित है ऐसा जो सत् है उस सतमें मनको ले आओ सतमें मन आयेगा तो असत्से छूटी पा जायेगा असत् मृत्यु रूप है और सत् अमृतरूप है।

यजुर्वेदमें मन्त्र आया

ॐ असतो मा सद्गमय
ॐ तमसो मा ज्योतिर्गमय
ॐ त्योर्माऽमृतं गमय

(बृह० १-३-२८)

इस मन्त्रमें ऋषि देखो क्या प्रार्थना करते है– कि हे भगवान हम असत्में फस गये– असत्में हमारी मोह शक्ति हो गई मेरे को उससे छूडाके सत्में ले आओ– ।

कहोगे की हे भगवान की यदी वह असत् है तो उसमें हम कैसे फस गये ? तो पहले ऐसा समझो कभी कभी रस्सीके स्वरूपका ज्ञान नही होनेसे उसमें सर्प भ्रम हो गया । यद्यपि है भला क्या वहाँ– रस्सी ही है किन्तु अज्ञानकी महिमाका विस्तार हुआ तो वहाँ सर्प खडा होगया और सर्प सर्प चिल्लाने भी लगे, डरके मारे भागता भी है ।

अब सोचो यह जो सर्प है उसको सत् कहोगे की असत् कहोगे ? अब असत् को सत् मान लेगा तो भ्रम– अज्ञान वलात् रस्सी ही सर्प रूपसे भास रही है– इसी प्रकार यह हमारे देह इन्द्रिया आदि शरीर है यह आत्मा जैसे प्यारा दिखता है ।

जिस समय सर्प दर्शन रस्सीमे हुआ उस समय वह सच्चा मालुम पडा कि झूठा ? सच्चा दिखा तब ना डरता है । देह इन्द्रियमें अपने स्वरूपको समझ रहे है– की यही सबकुछ है यह असत्में फस गया ।

जब शरीरका विवेक हो जायेगाकी यह शरीर सत् नही– किन्तु यह विवेक कब होगा ? असलीका बोध होगा । जब तक असलीका बोध होगा नही तब तक नकली नसकी को ही असली मान लेगा ।

हम लोग पुराने जमानेके बहुत गाने गाते है– उस जमानेमें दूधकी नदिया बहती थी आदि । किन्तु महाभारतमें आया अश्वत्थामाको दूध नही मिलता था पीनेको .. वह बडा– शूरवीर था– और द्रोणाचार्य जैसे पिताका पुत्र था– । उसको माता आंटा घोलकर पानीमें दूधका तरह बेटेको पीला देती थी और बेटा खाता था छोटा बच्चा था– । उसने समझा यही दूध है । वह प्यारसे पीता रहा– । एकबार अपने मामाके घर चला गया तो उन्होने असली दूध पीलाया तो उसने

सोचा बापरे बाप मेरी मा तो मेरेको ठगती रही। तो वहांसे जब घरमें आया तो दूधके लिये फिर मा ने वही आटा घोलके दे दिया तो उसने कहा– मा– ये तो दूध नही है मैं नही पीऊगा इसको देखो अब उसको झूठा दूध कहे है किन्तु असत्का ज्ञान कब हुआ जब सत्का बोध हो गया।

जब तक सत्का बोध नही होगा असत्से छूट्टी नही पायेगा। इसी तरह यह जो देह– इन्द्रियां है अज्ञान कालमें जीव इसको ही सत् मानलेता है की यही सत् है– इसलिये ऋषि परमात्मासे प्रार्थना करता है– कि– असतो मा दगगमय। हे भगवान मेरेको असत् से सत्में ले जाओ–।

यह शरीर इन्द्रियां असत् है देखते देखते बदल जाते हैं वह असत् है कि नही देखो वह बच्चा दौड रहा है हम भी ऐसेहीथे और अब जरा शीशेमें अपना मुह देखो तो? यह मुख अपना है कि कहीं से आ गया है– इसको कहते है गले पड गया अब आ गया है तो अपना ही कहना पडेगा– इसलिये ऋषि कहते है असत्में मेरा मिथ्या अभिनिवेश हो गया है– कि यह मैं हुँ– मैं ही देहादि हुँ– मिथ्या अहंकार हो गया है–। मैं अमुकका बेटा हुँ अमुक जगह मैं रहता हुँ– किन्तु आत्माकी छायामें रहो तो कही भी रहो और जहां उसकी छायासे बाहर हुआ– की कोई कहीं रहने देगा?

यहांसे जब जानेका समय आया– तो यहां जाना शब्दका मतलब है जाता है ऐसा जायेगा की फिर इस घरमें लौटके नही आयेगा– और अगर मानलो कभी आयेगा तो इस सकलमें नही आयेगा–।

कभी पिताका प्राण छूट गया पुत्रके मोहमें तो वह पुत्रके पूत की सकलमें आजायेगा– जैसी जैसी भावना में शरीर छोडता है ऐसी सकल मिलती है इसलिये पुत्र–परिवारमें ज्यादा मोह बढ गया तो अगर मृत्यु समयमे उनकी स्मृति बनी रही तो एक और बार मनुष्यकी सकल किन्तु बादमे फिर वही हाल। प्यार तो जरूर करे पुत्रादिसे क्योंकि हम नही करेगे तो कौन करेगा? क्योंकि हमारा बेटा है प्यार तो करना चहिये किन्तु ज्ञानको जाग्रत करे कि बेटा कौन? क्या शरीरमात्र बेटा है या और कोई? उस चेतन आत्माकी महिमामे ये चल रहा है– उस चेतन आत्माके सब भगत है जब ऐसा जानोगे तो तुम्हारा मन शुद्ध हो जायेगा।

अन्तर आत्मा सारी इन्द्रियोको लेके तब चलता है–

जैसे अपने किरायेके मकानमें रह रहे है– कहां रेडियो रखा है तो कहीं टेप रेकर्डर रखा है– तो जब चलेगे तो सब लपेटोगेकी नहीं? यूँ तो छोडके जानेवाले

है नही। मालिकको मकान खाली करके देना है। इसी तरह समझो यह जो तुम्हारा बंगला है यह किरायेका मकान है। इसका किराया दिया हुआ है किन्तु जब मकान मालिक कहे खाली करोतो अपने जल्दीसे हा करने वाले नही किन्तु कोई सुननेवाला नही– इसलिये यह जो जीवात्मा है अपनी सारी इन्द्रियोंको समेट लेता है।

सारी इन्द्रिया मनमें– यहा पर मन्त्रमे वाग् इद्रिन्योंको ही कहा क्योंकि दुनियामें घूम रही है जरासी गडबड होते विश्वयुद्ध हो जाये बडे बडे लोग है उनको अपनी वाणीको संयममें रखना पडता है चाहे वह कोई भी हो। एक घरमें आदमी अगर उलटा पुल्टा बोलता है तो घरकी दिवारे लड पडती है– अगर जो राष्ट्रका कोई बडा आदमी गलत बोल जाये तो राष्ट्रका दूसरे राष्ट्रसे झगडा हो जाये इसलिये बुद्धिमान इन्सानको वाणीका व्यवहार बडी सावधानी से करना चाहिये।

सारी इन्द्रिया मनमें– मन प्राणमे और प्राण तैजसि माने उदाम नामक प्राणमें लीन होता है– सब मिलके उदान उस परादेवता आत्माके पास जाके कहता है हे भगवत अब चलो यहासे– तो सब यह शरीरको छोडके जाता है–।

हम इस शरीरमें अहंकार करते रहे किन्तु यहा निकला कुछ हमारी ? अब जरा अहंकार करके बताओ–।

यह तो किरायेदार था अब तुम रोडपे बैंठे बैंठे कहो बंगला तो हमारा है– तो कौन सुनेगा ?

इसलिये ऋषि प्रार्थना करता है– असतो मा सद्गमय हे भगवन मैं इस असत्मे फस गया हुं– इस देहाहंकारमें बन्द गया हुं जैसे पशु खुंटेमें बन्ध जाता है– ऐसे हम भी जब देखो तब शरीरको पकडके बैठा हूँ शरीरके अतिरिक्त कुछ हम नही सोचपाते–। इसलिये हे भगवन मेरेको इस असत्से उपर उठावो– मेरेको ज्ञानचक्षु दान करो– क्योंकि प्रज्ञानेत्रो लोकः– ज्ञानही इसका नेत्र है। जिसके पास ज्ञाननेत्र नही वह चर्म चक्षुसे देखता है जैसे पशु देखके चलता है।

एक बुद्धिमान अपने ज्ञाननेत्रोसे यहाँ बैंठे बैठे जान लेता है दुनियामें क्या हो रहा है। सारी दुनियाका सुख भी इसको मिलेगा तो दुःख भी इसको मिलेगा– क्योंकि जानके ठीक चिन्ता करेगा तो सुख मिलेगा और अगर अन्यथा चिन्ता करेगा तो दुःख भी मिल सकता है।

इतना होते भी बाहरका बाहर घूम रहा है । क्योंकि यह कभी नही सोचाकी अन्दर कौन है ? और उसके बारेमें बिलकुल अज्ञात बना है यह अज्ञान है ।

उसके कहो आंखे बन्द करके अन्दर देखो तो अन्धकार दिखता है– हम–हम बोल रहा है– किन्तु पूछोतो यह कोन है तो कहते नही जानते यही अज्ञान अन्धकार है– इसलिये आगे ऋषि प्रार्थना करते है– हे भगवन मैं असत्से सत्में तब जाऊंगा जब मेरेको आप इस तमसे ज्योतिमे ले आओ– ॐ तमसो मा ज्योतिर्गमय । यहां ज्योति क्या ? सूर्यका प्रकाश बिजलीका प्रकाश या अग्निका प्रकाश– ऐसा प्रकाश नही किन्तु आत्माज्ञानका प्रकाश दो तो इस आत्माज्ञानको मैं पा जाऊगा तो मैं इस तमको पा जऊगा तो मैं सतमे आ जाऊगा ।

तमसे मैं ज्योति आ जाऊ ।

आगे तीसरा मन्त्र है ॐ मृत्योर्माऽमृतं गमय ।

जब मे ज्योतिमें आ जाऊगा तो अमृत्त्वमें आ जाऊगा ।

अमृतत्वं मोक्षः । आत्माके मोक्षमें आ जाऊगा तो मृत्युके भयसे तर जाऊँगा– क्योकि यह जशरीर है इसको पकडसे बैठना है– यह तो मृत्युका प्रवेश है, मृत्यु यहां आता है ।

जंगली शेर होते हैना– उसका शिकार करनेवाले लोग पहेले जान लेते है कि शेरके यानी पीनेकी जघह जंगलने कौनसी है ? अब जब मालुम पडाकी जंगलमें यह एकही जगह है तो वे समझ जायेंगे की शेर वहां जरूर पानी पीने आयेगा ।

अब वह जो शिकारी है एक मंचन बांधके बैठ जायेगा इतना उचाकी शेर कुदे उसके उपर तो भी उसको कोई नुकसान न हो ।२० fit की उंचाई कमसेकम अब वहां शेर पानी पीने आया तो वहीसे उसने शूट कर दिया तो यह मृत्युका घाट है की नही ? अगर शेर वहांपर आताही नही तो कौन मारता– । यह शरीर इन्द्रिया– है यहां पर शिकारी आता है यहां पर हम दस प्रकारके विविध रसोका स्वाद रहे है शेर आया तो शिकारीने शिकार किया तो मर गयारे मर गया शरीरमें मोह ज्यादा करोगें तो मृत्युतो अपने आपसे है ही सहज मृत्यु है । जिस गुफामें शेर रहेता है उसी गुफाकी ओर अगर कोई पशु चलते चलते चला गया तो शेर क्या कहेगा– आजतो तेरेको भगवानने ही भेजा मेरे लिये । ऐसा ही समझलो यहांपर शेर बैठा है मृत्यु ।

यहाँ जब देखो तब घास भूसा चरे अपने लोग... विवेकीके लिये यह आवश्यक है– वह देह मन तो होगा ही इसको छोडतो सकोगे नही और छोडनेसे लाभ भी नही अहंमा भावको छोडो यह मैं हुँ ऐसा मत कहो ।

कर्ममा साकार रूप है यह शरीर- यह कर्मका रूप है कर्म. इसमे फल रहा है । फिर भी यह देखनेमात्रका है– यह सच्चा नही । जब इसको मिथ्या मानोगे तब ना आसक्ति जायेगी ।

तो असत्से उपर उठ जाओगे– । ऐसी वह जो तुम्हारी सत् आत्मा उसमें मनकी स्थिति होगी तो असत्से छूट्टी पा जाओगे । इसलिये महाऋषि उद्दालक अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतुसे कहते है इस सत्में तुम लौटके आओ ।

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एव मा भगवान् विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच ।।७।।

(छान्दो० ६–८–७)

अब महाऋषि उद्दालक अपने प्रिय पुत्रको महावाक्यका उपदेश करते हुए कहते है– स य एषोऽणिमा– कहते है हे सोम्य यह आत्मा बडा सूक्ष्म है । अणिमा कहनेका अभिप्राय छोटा नही किन्तु अति सूक्ष्म हे– इसलिये इन्द्रियोका विषय नही । इन्द्रियोकी स्थूल पदार्थोमें प्रवृति है– सूक्ष्ममें नही । जैसे यहाँपर छोटे छोटे रजकण उठ रहे है– जब किसी छोटेसे छोटेसे सूर्यकी किरणे अन्दर आवी तो उसमें ये लाखो करोडो कण उडते दिखाई देते है यु देखो तो कुछ भी नही । कितना भी साफ वायु हो किन्तु वहाँ पर भ यह छोटे कण है वही हमारे नाकमी अन्दर भी जा रहे है इसी तरहा यह ऐसा अणु माने छोटा नही– । सूक्ष्म है । यह तो महतो महीयान् साथमे कहे रहे है अतिसूक्ष्म होता हुआ भी यह महान से भी महान है ।

अणोरणीयान्महतो महीया–
नात्मास्य जन्तोर्निहितो गुहायाम् ।
तमक्रतुः पश्यति वीतशोको
धातुप्रसादान्महिमानमात्मन : ।।२०।।

(कठोप० १-२-२०)

कुछ दूसरेदार्शनिक कहते है आत्मा तो अणु है इसको अणु मानना चाहिये भेदवादी ऐसा कहते है ।

उसने किसीसे कहा पहले हमारे चितको निशंक बनाओ तव तुम्मारी वात मानेंगे– तो बताओ यह आत्मा अणु होगा तो यह शरीरके किस हिस्सेमें रहेगा ? हृदयमें रहेगाकी खोपडीमें रहेगाकी हाथ पैरमें रहेगा ?

आत्माके बिना जो शरीरका अङ्ग होगा वह तो सूखे लकडेकी तरह हो आयेगा– यह सारा शरीर सजीव क्यों दिखता है ? उन्होने उत्तर दियाकी आत्मा अणु है उसका ज्ञान व्यापक है इसलिये । जैसे करोडो माइल सूर्य दूर है– एकरोड माइल– दूसरे भी पृथ्वीमें प्रकाश देते है की नही ? तो ऐसे आत्माका ज्ञानरूपी प्रकाश सारे शरीरमें फैला हुआ है । इसलिये शरीर चल रहा है ।

फिर प्रश्न आया अगर कहते हो कि आत्माका ज्ञान व्यापक है तो बताओ– आत्माका ज्ञान है वह आत्मासे छोटा है की बडा ? यदि छोटा कहोगे तो प्रकाश कैसे करेगा और यदि बडा कहोगे तो उसका आश्रय कौन होगा ?

दार्शनिक लोग प्रश्न करेंगे तो उत्तर तो देना पडेगा । और दूसरा प्रश्न आया की आत्मा अगर ज्ञानसे बाहर है तो आत्मा का क्या स्वरूप होगा ? वह जड होगाकी चेतन होगा ?

चेतन तो वही है जो ज्ञान स्वरूप है । यह ज्ञान स्वरूप तो ठहरा नही तो आत्मा तुम्हारा चेतन नही होगा– तो उसका आश्रय ज्ञान क्यों पकडेगा ? इस-लिये आत्माको अणु नही कहना चाहिये तो कहते है– हे भगवान श्रुति तो अणु कहती है ।

तो कहते है तुं तो एक शब्दको पकडके बैठ गया– श्रुति यह भी तो कहती है महतो महीयान्–

तुम उस अंशको भी मानो– तो यहाँ अणु शब्दका अर्थ छोटा नही किन्तु सूक्ष्म लेना पडेगा– अतिसूक्ष्म होनेसे ये आत्मा इन्द्रियोका विषय नही ।

अति सूक्ष्म जो बुद्धि है वह इस आत्मदेवका अनुगम करती है किन्तु जैसे आंखोसे कोई कहे इसको दिखा दो तो तुम्हारी इन्द्रिया तो उस तत्त्वको देखेगी जिसमे कोई रूप होगा कोई स्पर्श होगा कोई रस होगा– किन्तु रूपवत् रसवत् स्पर्शवत् जोद्रव्य होगा वह अनित्य होगा । जैसे यह गुलाबका फुल तो इसकी आयु

बहुत थोडी है। इसलिये यह आत्मा महतो महीयान्– ज्ञान स्वरूप आत्मा है। वैदिक श्रुति कहती है.

विज्ञानमानन्दं ब्रह्म । प्रज्ञानं ब्रह्म ।

बारबार जन्म मरणको पकडते रहा है उसको जंतु कहते है किसने शरीरको अमर किया आजतक–? इसलिये अन्तर आत्मामें आओ। जो इस अन्तर आत्माकी खोज करेगा वह जन्तु भावसे मुक्त हो जायेगा।

हमारा आत्मा ही हम है इसके बिना कुछ नही। ऐसी आत्मा बुद्धि रूपी गुहामें है। जैसे पहाडमें कोई लम्बी गुहा होती है– उसका प्रवेश द्वार भी होता है– लंम्बा चौडा–।

शरीर है अन्नमयकोश यह लंम्बा चौडा प्रवेश द्वार ही समझो– उसके अन्दर दृष्टि दो तो प्राणमय कोश उसके अन्दर मनोमय कोश उसके अन्दर विज्ञानमय कोश–। यह जो विज्ञानमय कोश है यह बुद्धि है। चिदचित् तादात्म्य– चेतन और जडका तादात्म्य यही जीव है। तुम्हारा कर्तव्य यही है जीव भावको जुदा करना चिद भावमे मनको स्थिर करना। श्रुति इसको गुहा शब्दसे कहती है क्योंकि जैसे गुहामें अन्धकार है स्पष्ट कुछ नही ऐसे अपनी बुद्धिके अन्दर स्पष्ट कुछ नही दिखता।

गुहा– अर्थ– गुहयते धर्माधर्मौ– यह माया भगवती जीवका कितना धर्म है कितना अधर्म है यह देखनेको नही देती अगर ये जीव देखले के मेरेमें तो इतना धर्म है तो ये प्रमादी हो जायेगा– और देखले की बहुत अधर्म है तो बिलकुल ही निरस– निराश हो जायेगा।

जैसे चतुर घरवाली जो होही है अपने पुरुषको जानने नही देती घरमें क्या है क्या नही। खानेको समयमें तो गरम गरम परोठे खीलायेगी– किन्तु कहगी और कुछ नही पूछो। ऐसेही यह माया भगवती तुमको पता नही लगने देती। जब कर्म भोग सामने आया– तब जीवको पता चलता है।

इसलिए मुमुक्षु सावधान रहे मिथ्या मोह नही करे–

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. २७

ॐ स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदंसर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एव मा भगवान् विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच ।।७।।

(छान्दो. ६-८-७)

तो विचार चलता है महाऋषि उद्दलक अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतुको पहले समझाके आये की हे बेटा जब यह नामरूप सृष्टि यही थी उसके पहले भी वह सत ही था । श्वेतकेतु नौजवान पढलिखा विद्वान है– विद्वानको शंका भी होती है और है भी ठीक अगर विद्वानको शंका नही होगी तो फिर होगी किसको ?

जब तक मन निशका नही हो जाये तब तक तत्त्वमें निष्ठा बनती नहीं । यह ठीक है की वो ठीक है इसप्रकार नाना प्रकारकी शंकाओसे ये धीर है तो नाना प्रकारकी युक्तिके द्वारा यहां तक समझाते हुये आये । पहले त्रिवृतकरण किया और इस शरीरको पकडके– तेजके कारणकी स्पष्ट किया और तेज भी कार्य हे यह जिसके कार्य है वो सत् है । इसलिये अब महावाक्य का उपदेश करते है । यह जो बह्मविद्या है यह उपनिषदकी सारभूत विद्या है इसमें आवान्तर वाक्य और महावाक्यसे उपदेश किया जाता हैं ।

आवान्तर वाक्यको अपने पहले समझे– तो यह जो आवान्तर वाक्य है वह केवल अपना काम है उतना करेगा उससे ज्यादा कुछ नही करेगा । जैसे उदाहरणके लिये समझो घरमें हम भी काम करते है नौकर भी काम करता है किन्तु नौकर कितना काम करता है ? जितना हम कहते उतना ही अगर उससे ज्यादा करे

तब भी खतरा– और कहे वैसा न करे तब भी बुरी बात है। तो इसका अर्थ यह निकलाकी जितना कहो उतना करे तो ठीक। किन्तु मालिक जो है वह तो आगे पीछे अपनी बुद्धिको दोडायेगा और सबकाम कर लेगा। अवान्तर वाक्य सापेक्ष है पहुँच है उनताही काम करेगा। महावाक्य निरपेक्ष होनेसे परिपूर्ण तक स्पष्ट करेगा।

प्रश्न आया यह जीव क्या है ? उपनिषदोमें बडे स्पष्ट विचार है राजाऋषि जनक– महाऋषि याज्ञवल्क्यसे प्रश्न करते है।

हे भगवन्– कतमआत्मेति प्राणेषु– योऽयं विज्ञानमयः

यहाँ सब इन्द्रियोंके लिये प्राण शब्दसे कह रहे है– क्योंकि प्राणशक्ति से ही सब इन्द्रिया कार्यरत है जरासी पेरेलीसीस हो जाती है तो हाथ– पैरका क्या हाल होता है देखो तो। अब जब प्राण ठीक रहेतो सब ठीक इसलिये श्रुति यहाँ सब इन्द्रियोंको प्राण शब्दसे कहती है।

यह सब अपनी शक्तिमे बलवान है किन्तु सबमे हे भगवान विज्ञानमय बडा बलवान है– उसमे हमको चेतनभाव दिखा तो हे भगवान इस सब प्राणोको आत्मा मानेकी विज्ञानमय कोशको आत्मा माने ? ऐसा प्रश्न किया जब जनकने तो समाधानमे महाऋषि कहते है–

हृद्यन्तर्ज्योतिः पुरुषः

(बृह० ४–३–७)

हे जनक हृदयके अन्दर जो ज्योति पुरुषः है वही आत्मा है वह ही जीव है। इस वाक्यने केवल जीवके स्वरूपको स्पष्ट किया। हृदयका अर्थ केवल मांसका पिंड नही किन्तु हृदनस्थ जो बुद्धि बुद्धिके अन्दर प्रतीत होनेवाला जो चेतन है वह जीवात्मा है। बुद्धिमे जो चिद्भाव जो प्रतीत होता है– कहेनेका अभिप्राय बुद्धिके अन्दर चेतनका प्रकाश आभास जो आया– तो ये हम– हम– हम बुद्धि सहित चेतनभाव जिसको हम विश्वात्मा कहते है– वह बुद्धिके सम्बन्धसे चिद्भाव है। जैसे कोई कहे हमको राहुका दर्शन करादो– तो सूर्यके सम्बन्धसे या चन्द्रके सम्बन्धसे ग्रहणके समय राहुका दर्शन हो शकता है बिना सूर्य– चन्द्रके राहुका दर्शन हो ही नही सकता।

इसी तरह बिना तुम्हारी बुद्धिके आत्माका चिद्भाव रुप दर्शन हो ही नही सकता।

अस्ति अस्ति दिखेगा सब जगह प्रतीत हो रहा है आनन्द भी सब जगह प्रतीत हो रहा है किन्तु चिद्भाव तो बुद्धिके सम्बन्धसे ही प्रतीत हो रहा है इसलिये बुद्धिमानका यह कर्तव्य हो जाता है की अपनी बुद्धिको वह शुद्ध रखे । बुद्धिको शुद्ध रखेगातो चेतनका प्रकाश ग्रहण करेगा बुद्धिको शुद्ध रखो हम लोग कह देते है क्या बुद्धिको शुद्ध रखे भला ? तो बुद्धिसे कर्ममे प्रवृति करो शुद्ध रूपसे विचार में प्रवृति करो तो शुद्ध रूपसे— । लोकहित हो वैसे कर्म करो केवल परिवार की नही— जातिकी— राष्ट्रकी धर्मकी भी रक्षा हमको करनी चाहिये । जगतको भी जीवन दो तब तुम्हारे अन्दर विलक्षण शान्ति आयेगी यह विलक्षण शान्ति है वह शुद्धिका लक्षण है । अगर बुद्धिके अन्दर नाना प्रकारको दुःख नाना प्रकारके शोक है तो वह शुद्ध कहां ? जैसे की बच्चा रो रहा है उसके मुहमे रसगुला भी रख दो तो भी वह थुक देगा— क्यों ? क्योंकि बच्चा प्रसन्न नही तो अच्छी चीज भी दो नही लेगा । इसी तरह, तुम्हारी बुद्धि अगर प्रसन्न नही तो अमृताद् अपि अमृतम्— दो भले ये ग्रहण नही करेगी । और फिर कहेंगे महाराज यह बात तो हमारी समझमें नही आती कैसे आये ? इसलिये कहते है सुकर्ममें सुविचारमे प्रवृति रखो और मिथ्या लोभादिसे बचो थोडा पीछे हटो । तो तुम्हारी बुद्धि प्रसन्न होगी तो बुद्धिमे जो चेतनता भास रही है उसको शुद्ध रूपसे जाननेकी इच्छा— यह है शुद्ध बुद्धिका लक्षण ।

इस चेतनता का शुद्ध रूप है— इस रूपमें जीव भाव नही । जिस रूपमें मृत्युका भय नही— जिस रूपमें संसारका शोक नही उस रूपमें उसको जाननेकी इच्छा करेगा ।

इस जीवके स्वरूपको समझाने वाला यह अवान्तर वाक्य है । हे जनक यह तेरी आत्मा हृदयमें ज्योतिरूप पुरुष है वह ज्योति जिसके प्रकाशमें सब इन्द्रिया कार्य कर रही है यह पुरुष है माने पूर्ण है यह आत्मा है— ऐसे इस वाक्यने आत्माको सामने खडा कर दिया ।

दूसरा अवान्तर वाक्य है ईश्वरके स्वरूपको स्पष्ट करनेवाली जो यह स्पष्ट है की इस जगतके पीछे एक कर्ता खडा है । अनेक कर्ता नही है— अगर अनेक कर्ता की भिन्न भिन्न इच्छा होगी तो चेतनकी भिन्न भिन्न प्रवृति देखनेमे आयेगी— तो एक कहेगा की हम सृष्टि करते है दूसरा कहता हम सृष्टि नही करेंगे— तो तो बडा झगडा हो जायेगा । इसलिये इस जगतके पीछे शक्ति है उस शक्तिमे भेद नही ।

इसके अतिरिक्त एक और बात समझनी है कोई पूछेकी हम कितने बडे है तो यह शरीर जितना बडा— कोई पांच कोई छ फुट यही तो कहेंगे— । अब उपाधि प्रधान स्वरूपका विचार करोगे तो उपाधिको लेके ही माप करोगे— ।

यह सोचो जिसको हम ईश्वर कह रहे है वह भी उपाधि प्रधान निर्देश है– उपाधि है माया । माया शरीर है ऐसा वह भगवान है । यहाँ जो भी देश है काल है वस्तु है मायासे परिपूर्ण है तो मायाकी आत्मा सेभी तो परिपूर्ण है । भेद नही मान सकते– श्रुति भगवती कहती है

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते
येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद्विजिज्ञासस्व

(तैत्ति ३–१–१)

महाऋषि वारुणी कहते हे बेटा भृगु ऐसा समझो जिस तत्वसे इन भूतोकी सृष्टि हो रही है– बेटा वह ब्रह्म है उसीमें ये जी रहे है उसके लिये दृष्टान्त है एक भाव तुम्हारा अपना यह शरीर– । पहले यह सोचो इसका जन्म किससे होता है– क्या कैसा समझते हो– माताके पेटसे तुम्हारा जन्म हुआ– अगर तुम न होते और यह शरीर वनता ? अगर तुम न होते और माताके पेटमें कुछ होने लगे तबतो बहुत कुछ हो जाये– । किन्तु आत्माके बिना कुछ होनेवाला नही । इसके बिना तो यह मांसका टुकडा है बढेगा नही गीर जायेगा । इसलिये तुम्हारे वहाँ रहनेसे माता– पितासे प्राप्त जो द्रव्य है रज, और वीर्य उसका विकास होने लगता है । दूधको गरम करो तो गाढा हो जाता है और ज्यादा गरम करोतो खोआ बन जाता है ऐसे समझो जब वह अन्दर बैठा है– खोपडी बनने लगेगी उसको मालुम है कि कैसी खोपडी बनानी उसमे कहाँ आँखके लिये कहाँ कानके लिये कहाँ नाकके और कहाँ मुखके लिये जगह बनानी– सब अन्दर चल रहा है तुम्हारे रहनेसे शरीरका सृष्टि– और तुम रहोगे तो ये खायेगा– जैसे मंदिरमें पूजारी भोग लगाता है तो इस मन्दिरमें यह कब तक लगायेगा भला ? जब तक देवता रहेगा– अब देवताकी कोई चोरी कर गया– तो अब भोग नही लगेगा– तो अब पूजारी भी भूखा ही रहेगा– । इसी तरहा शरीरको तो पूजारी ही समझो– वह अन्दर बैठा है देवता तो ये भोग लगायेगा और प्रसाद लेगा ।

सत्य से सृष्टि हो रही है उसीसे जीवन मील रहा है उसकी महिमामें अन्तमें उसीमें लीन हो जाते है सब जीव वही ब्रह्म है– हे सोम्य इस महान ब्रह्मकी तुम महान ब्रह्मवेता से जिज्ञासाकरो ।

हृदयमें जिज्ञासाको बनाके रखो नहीतो मन– बुद्धि निरस होगे– ।

अब अवान्तर वाक्य ने जीवकी व्याख्या किया किसी दूसरेने ईश्वरकी व्याख्या किया अब दोनोको भिन्न भिन्न खडा कर दिया तो भेदकी प्रतीति होने लगी– । किन्तु भेद सच्चा कैसे होगा ? जिसको हम ईश्वर कहते है वह ईश्वर हमारे से दूर है नही वह तो परिपूर्ण है व्यापक हैं । उसमें जीवभावका दर्शन तो बुद्धिके सम्बन्धसे हुआ– ।

अब इस भेद की भ्रान्तिको दूर करना है इसलिये महावाक्यका उपदेश अन्त में आया– ।

श्रुति भगवती कहती है– वह अन्य है मैं अन्य हुं ऐसा भेद जो बुद्धिमान करके बैठा है वह पशु है बिना पूछका– ।

इसलिये सत्यकी खोज करनी चाहिये बुद्धिसे–। जब परमात्माको व्यापक मानोगे तो जीव भाव उसमें कहां रहेगा ? महाऋषि कहते है तत्सत्यम् स आत्मा महावाक्यका उपदेश करते है तत्त्वमसि श्वेतकेतो । उसके लिये थोडासा देखो भाष्यकार कैसे व्याख्या करते है ।

स यः सदाख्य : जिसको सत् शब्दसे कहा वह तो एषोऽणिमा अणुभावो जगतो मूलम्

(छान्दो. ६–८–७)

जिसको अति सूक्ष्म जगतका मूल कहके आये एतदात्म्यमिदं सर्वं यह जो कुछ भी नामरूप है तदात्मा हं है तत्सरस्वरूप ही है । तदात्म शब्दकी व्याख्या करते है महाऋषि कहते है एतत् आंत्मा यस्य सर्वस्य– यह जो सपूण जगतकी आत्मा है ये तत् संपूर्ण नाम रूपकी आत्माही है । अपने इस शरीरमें समझो यह शरीर जगती ही है– जगत किसको कहते– गच्छति– इति जगत यह शरीर निरन्तर गतिशील है– किन्तु यह अपनी सीमामें है । कानजुदा, आंखजुदा, नाकजुदा महजुदा हाथ– पैर जुदा अब यह सब अङ्ग जुदे जुदे– तो अब क्या अङ्ग-के भेदसे आत्मामें भेद मानोगे ? की एक मानोगे । इसी तरहा यह जगतमें जो भेद प्रतीति हो रही है इसको लेके क्या आत्माको एक ही मानना पडेगा– जैसे शरीरमें अङ्गभेद होने पर भी चेतनमे भेदकी कल्पना जो हैं बडा पाप हो जायेगा– । जीवन ही खतम हो जायेगा । एसे ही इस जगत आत्मामें भेदकी कल्पना करके बैठोगे तो कुछ भी नही मिलेगा उस आत्माको समझे बिना कुछ होगा ।

इसलिये कहते है यह तदात्मरूप ही है सारा जगत भेदभाव कुछ नही । जैसे सोनेसे बना जो गहना है वह सोना ही है की कुछ और ? देखनेमें कंकण आया वह तो कल्पना मात्र है ।

जो देखनेमे आवे और होवे कुछ भी नही उसको कहते मिथ्या । ऐसे ही नाम- रूप प्रपंच जिस परमात्मासे उत्पन्न हुआ यह परमात्मा ही है- जैसे सोनेसे उत्पन्न गहना सोनाही है । नामरूप देखनेमें जुदा यह मिथ्या है । अब ज्ञानीकी दृष्टि सत्‌को देखती है होता है । भेदभ्रान्तिको दूर करनेके लिये महाऋषि कहते तत्त्वमसि श्वेतकेतो- हे बेटा वह आत्मा सी तुम- तुम वह आत्मा हो ।

किन्तु तत्त्वमसि की व्याख्या दूसरे दार्शनिक जुदा जुदे ढंगस भी करते है- मुंडे मुंडे मतिर्भिन्ना ।

क्योंकि कुछ व्याख्या होती है जिसाज्ञु जैसा होवे उसके आधार पर और कुछ व्याख्या अपने हृदयमें जैसी गांठ पडी है तो हम जब बोलेंगे तो वैसा ही बोलेंगे ।

इसलिये व्याख्यामें भेद होगा किन्तु जो वेद सिद्धान्तको बुद्धिमें रखके बोलेगा उसकी व्याख्यामें भेद नही होगा ? एक सत्यको प्रकाश करेगा उसका अपना कोई नीजी संप्रदाय नही होगा ।

जैसे जगद्‌गुरु शंकराचार्य जो है- उनहा कोई संप्रदाय नही क्योंकि उन्होंने ठीक वेदोकी व्याख्या किया- । जिनको अच्छा नही लगा वे सांप्रदायिक दृष्टिवाले तत्त्वमसिका अर्थ क्या करेंगे- आगे उसको समझाते है ।

एक आचार्य कहते है तत्त्वमसि- तत् माने परमात्मका बेटा तुम उस परमात्माके दास हो- माने परमात्माको नोकरोकी कमी पड गईथी तुम उस नोकरोकी श्रेणीमे आये अथवा तस्यै तुमसी- तुम उस परमात्माके लिये हो- परमात्मा तुम्हारे लिये नही- अरे भाई सोचो ईश्वरमे कौनसी कमी हुई जिसको हम जाके पूरा करेंगे? क्या इसका कुछ काम रह गया है की हम जाके वह करेंगे ? इसलिये उसके अन्दर उस दास भावको जाग्रत करते उसको भक्तिवादी सिद्धान्त भक्तिवादी सिद्धान्त भी कहते- भक्ति करो भगवान की-

वस्तु तत्त्व भक्ति क्या है ? उस भगवानको तुमने अपने से दूर कर दिया तो तुम उसकी भक्ति क्या करोगे ? यह बताओ प्यारको नजदीक करना अच्छी भक्ति है की दूर करना अच्छी भक्ति है ।

पारिवारिक जीवनसे भी पति पत्नी अगर एक इधर और दूसरा उधर तो ये क्या एक दूसरेकी भक्ति क्या ? लोकजीवनमे भी ऐसा व्यवहार होगा तो वह अप्रिय होगा । ये बताओ परमार्थ जीवनमे भी चलके तुम ऐसा व्यवहार करोगे तो तुम पक्का पाओगे ? यह विचार कोई ज्यादा महत्त्वपूर्ण नही । हाँ जिनकी बुद्धि अतिमन्द है या जो बुद्धि डरती है की हाय एक मानेंगे तो हमारा अस्तित्व ही नही रहेगा- ।

आचार्य गोडपादाचार्य कहते है

अस्पर्शयोगो वै नाम दुर्दर्शः सर्वयोगिभिः
योगिनो बिभ्यति ह्यस्मादभये भयदर्शिनः ।।

(मा० का० ३-३९)

यह अस्पर्शयोग होगा- स्पर्श- माया सम्बन्ध मायाके सम्बन्धसे परे हो गया ऐसी वह निर्विकल्प चितकी ब्राह्मीवृत्ति जो आवरण भंग करके आगे चली गई तो निर्विकल्प स्वरूपको विषय करके अविद्या आवरणको हटा देती है बादमें यह भी स्वयं निवृत्त हो जायेगी । अब यहाँ जब साधक आता है तो जीवभाव रखो गया ।

इसलिये जो भेंदवादी है उनको बडा डर है अरे मेरा तो कोई अस्तित्व नही रहेगा । अविद्याका देखो तो क्या चमत्कार है- अभये भयदर्शिन-

अभयमें कोई भय नही होना चाहिये वहाँ पर भयको देख रहे है और जहाँ पर भय है उसको दिखता नही । शिर पर साँप लटक रहा है उससे डरता नही और बगलमें अपने प्रिय भाईसे डर रहा है ऐसी हालत है । कितनी बडी मूर्खता है ।

इस तरह और समझो दूसरा कोई है तो भय किन्तु अधेरेमें कोई भय नही-

जैसे जाग्रतमें हम डरते है- स्वप्नमें हम डरते है सुषुप्तिमें कोई डरा है आजतक ?

अगर वहाँ डर होता तो कुछ न कुछ साथमें लेके जाते- जैसे जाग्रतमें कुछ साथमें होता कुछ जेबमें भी होता है और स्वप्नमें भी- जब सुषुप्तिमें गया तो वहाँ तो यह शरीर भी नही सूक्ष्म शरीर भी नीचे रह गया- केवल कारण शरीरकी महिमा है वहाँ । स्थूल और सूक्ष्म शरीरको स्वयं माया निवृत्त करके रख देती है- तुम स्थूल शरीरभी नही हो तुम सूक्ष्म शरीर भी नही हो- सबको दूर कर दिया किन्तु अपनेको दूर नही किया-

ॐ

प्रवचन स. २८

ॐ यथा सोम्य मधु मधुकृतो निस्तिष्ठन्ति नानात्ययानां वृक्षाणां रसान्समवहारमेकतां रसं गमयन्ति ॥१॥

ॐ ते तथा तत्र न विवेकं लभन्तेऽमुष्याहं वृक्षस्य रसोऽस्म्यमुष्याहं वृक्षस्य रसोऽस्मीत्येवमेव खलु सोम्येमाः सर्वाः प्रजाः सति सम्पद्य न विदुः सति सम्पद्यामह इति ।२।

ॐ त इह व्याघ्रो वा सिंहो वा वृको वा वराहो वा कीटो वा पतङ्गो वा दंशो वा मशको वा यद्यद्भवन्ति तदाभवन्ति ।३।

ॐ स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एव मा भगवान्विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच ॥४॥

ॐ इमाः सोम्य नद्यः पुरस्तात्प्राच्यः स्यन्दन्ते पश्चात् प्रतीच्यस्ताःसमुद्रात्समुद्रमेवापियन्ति स समुद्र एव भवति ता तथा तत्र न विदुरियमहमस्मीयमहमस्मीति ।२।

(छान्दो. ६–९ १।४) (छान्दो० ६–१०–१)

तो विचार चल रहा हैं महाऋषि उद्दालक अपने प्रियपुत्र श्वेतकेतु को आत्माका बोध देते है कि हे बेटा जबतक इस आत्माका बोध होगा नही मनुष्य प्राणी इसजीवनमें कृतार्थ होगा नही अकृतार्थ जीवनमें असली अर्थको नही समझे केवल इन्द्रियोकें सेवासे सफेद हो गये और थोडासा मनके अर्थको सिध्द करते हुए लोग चले गये यह नोवेलसकल्पित कमाये मनके अन्दर थोडा रंजन उत्पन्न करते हैं इस तरह नाना प्रकारके खेल करके इस मनको भ्रमाते हैं बाकी असली जो सत्य हैं वहतो अज्ञान ही हैं उसकों तो जाननेकी चेष्टा कि ही नही फिर कृतार्थं कैसे ।

इसलिये ये कृतार्थ नही-कृत अर्थोंमअकृतार्थ-तो किसी अर्थकी सिद्धि नही यंही चला गया

इसलिये महाऋषि कहते है हे बेटा इस आत्माको जानो इसके लिये महाऋषि महावाक्यका उपदेश करते है

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदं सर्बं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एब मा भगवान्विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच ।

(छान्दो० ६-८-७)

श्वेतकेतु कहता है हे भगवान यह गूढ अर्थका मेरी बुद्धिमे ठीक अवधारणो नही हुआ- आप फिर मेरेकी किसी दूसरे दृष्टांतसे समझाओ- । हे भगवान यह जीब इस सत्‌को क्यु नही समझते यह इतना विशाल जो सत् हैं उसके विना कोई जी नही सकता । इसमे हेतु क्या हैं ? हे भगवान इस हेतुको स्पष्ट करनेके लिये आप मेरेको फिर समझाओ-। महाऋषि कहते हैं ।

ॐ यथा सोम्य मधु मधुकृतो निस्तिष्ठन्ति नानात्ययानां वृक्षाणां रसान्समवहारमेकतां रसं गमयन्ति ॥१॥

(छान्दो० ६-९-१)

जंगलमें कहते है नाना प्रकारके फूल खीलते है- वहुतसे बढियासे बढिया अमृतमय फूलोका विकास भी होता है वहुतसे विषैले पुष्पोकाभी विकास होता है- । ऐसे विषैले पुष्प हिमालयमें खीलते है- इसलिये वहाँ सरकारकी आज्ञा है वहाँ बैठना नही- चलते ही रहो यात्राके समय- नही तों विषके अन्दर पौधे है तो उसकी बडी मधुर गन्ध आयी और जीव तो विषयोके अन्दर पगला तो है ही- सुंघते सुंघते ही वही बेहोश हो जायेगा वहाँ बैठा और लेट गया अब दूसरे साल

भी आप जाओ तो लेटा हुआ मिलेगा– क्योंकि वह इतना ठंडा प्रदेश है मांस भी सडेगा नही सूख जायेगा– । तो सोचो अब यह भारी जहर है इसके अन्दर किन्तु वह जो मधुमखी है उससे भी सार ग्रहण करती है और जहाँ उसने अपना बंगला बनाके रखा है उसके एक कोनेमें मधुरसको एकट्ठा करती है । मधुमखीका छाता होता है– उसमें रहनेके लिये कमरे जुदे होते है और खानेपानेकी जगह जुदा– जहा वे मधु एकट्टा करते है ।

मधु भी होता है बडा सुन्दर– नाना प्रकारके सुन्दररस इकाट्ठा कर दिया– अब यह मधुररस है आ गया यहा तो उसको कोई ज्ञान नही मैं इस पुष्पका रस हूँ जैसे मैं चमेली का था आमकी मंजरीका या मोगरेका रस हूँ- सबको मिलके एक हो जाता है उसको कुछ भी पता नही वहाँ कैसे आ गया–? कहाँसे आ गया । वह नाना प्रकारका मधु इकट्ठा हुआ है उसमें कोई विवेक नही है कोई विवेचन शक्ति नही है की मैं अमुकवृक्षके पुष्पका रस हूँ– ऐसे ही यह सारी प्रजायें रोज सुषुप्ति कालमे उस सत्में जाती है– हे बेटा जिस सत्की हम तेरे लिये व्याख्या कर रहे है– उस सत्के पास सब प्रजा रोज जाती है–

इमा: सर्वा: प्रजा एतं ब्रह्मलोकं अहरहर्गच्छन्त्य न विन्दन्त्यनृतेन हिप्रत्यूढा: ।।

(छान्दो ८–३–२)

महाऋषि कहते है उस सुषुप्ति काल में सारी प्रजा रोज ब्रह्मलोकमें जाती है महान ब्रह्मको मिल जाती किन्तु मिलने पर भी वे नही जानती हम आगये सत्से–

क्योंकि अविद्या परिवेष्टित होनेसे बेहोश करके सुषुप्तिमे ले गये कैदीकी तरह और वहाँपर जाके वह विलक्षण आनन्द तो आया किन्तु समझ कुछ नही ।

एक अभिप्राय यहाँ ये भी समझो– यह जो तुम्हारा जीवात्मा हम– हम– हम यह क्या है भला ?

जैसे दर्पणमें अपने मुखका आभास स्पष्ट दिखता है तो दर्पण उपाधिसे इस मुखके प्रतिबिंब अनेक हो सकते है जैसे अनेक घटमे जल भरा है तो अनेक. सूर्यके

प्रतिबिंब दिखते है यद्यपि सूर्य एक है । यह जो कुछ भी भान है अनेक रूपसे वे उपाधिसे है वेदान्त भाषामें उसको कहते सोपाधिक । अब जो उपाधिसे दिखता है वह होता नही । अपने काले चश्मे पहन लेते है धूपमे तो कोई गोरा इन्सान भी काला ही दिखता है तो माने चश्मे उपाधिसे हमारे नेत्र देख रहे है उसकी कालिमा सामने नही भास रही मतलब कालिमा चश्मे में न दिखके सामने दिख रही है तो सामने जो दर्शन हो रहा है वह चश्मेकी उपाधि से है । चश्मे उतार दिये तो वहाँ काला कुछ भी नही । हमारे मुखके या सूर्यके अनन्त प्रतिबिंब उपाधिसे दिखे उपाधि हटा दी तो वहाँ कुछ भी नही किन्तु यह कब मालुम पडेगा ? जब असली सत्–चित्– आनन्दरूप जो सत्– आत्मा तत्त्व है उसमे दृष्टि देगा तब । इसलिये जो सत्संगी मुमुक्षु है वह सत्– चित् आनन्दरूप तत्त्वमे अपनी दृष्टि ले आवे– उसके लिये ब्रह्मं वाहमस्मि महावाक्य इसके द्वारा ब्राह्मीवृत्तिको पुष्ट करते जाओ– और विवेक वैराग्य– शमदमादिषट्संपत्ति जाग्रत रखे– दुनियाके सब भोग अपने लिये थोडे है । थोडासा अपना लेके बाकी को छोड दो– ।

जैसे जंगलमे कोई बडा सिंह होता है शिकार करेगा थोडा खाया फिर छोडके चल देगा– तो दूसरे जीव भी उसका प्रसाद मानके सब खायेंगे– इसी तरह मुमुक्षु उस सिंहकी तरह निर्द्वन्द्व होवे निर्भय होवे– जितना सार लेना उतना ले बाकी वही छोड दे– । यह दुनिया यही की यहीं रह जायेगी । बडे बडे शूरबीर हुए बडें बडे भोगी हुए कोई लेके नही गया तो हम कैसे कुछ लेके जायेंगे? इस तरह मिथ्या मोहको छोडे ।

अविद्या सहित बुद्धिके अन्दर आभास आ रहा है चेतनका तो यह साभास बुद्धि ये जीवात्मा वहा जीवभावका आरोप हो रहा है चेतनमें तो हम– हम– हम अहंकार सामान्य हुआ– अरे फीर आगे मैं जीव हूँ– मैं संसारी हूँ मैं कर्ता हूँ, भोक्ता हूँ, नाना प्रकारके अन्दर अहंकार खडे हो गये इसी तरह ये जन्मता और मरता चला जा रहा है । अब जब अविद्या सहित साभास बुद्धि हट गई जब सुषुप्ति में तो आभास कहा गया ? अपने साक्षी स्वरूपमें आ गया तो यह ब्रह्मलोकमें उस सत्में जाके मिल गया किन्तु इस बातको फिर भी समझा नही– क्योंकि अविद्या भगवती वही बैठी है ।

एक छोकरा होता है वह अपनी मम्मीकी चुगली करता है अपने पिता से अब मानलो मम्मी वहाँ खडी है अब मम्मीने पहले ही एक दो लाफा जमाया है तो अब वह उसका मुह देखता है की वो लुकि नही बोलु । क्योंकि अगर बोलुगा तो फिर लाफा पडेगा– डर है– ।

कोई पितासे प्यार करनेवाला है तो कोई मम्मी अविद्यासे ज्यादा प्यार करनेवाला– है । तो सुषुप्तिमें यह अविद्या भगवती वहाँ बैठी है तो जाग्रतमें कहेगा– हम कुछ नही समझे– किन्तु हम कुछ नही समझे– वह तो समझे ।

हम नही समझते है उसके लिये भी ज्ञानकी जरूरत है । इसी तरह देखो यह सारी प्रजा ये अज्ञानसे बन्धी बन्धी वहाँ गई– कहते वहाँ कुछ नही समझे ।

अब यह प्रश्न आया की जिस सत्‌मे जाकरके मिले और लौटके फँसे आओगे ? तो कहते है जिस संस्कारको लेकरके जायेगा उसी संस्कारको लेकरके वहाँ से फिर आयेगा– । अपने अनुभवके लिये समझो– ।

सुषुप्तिमें कोई बडी मस्तीसे सोया तो जागेगा तो बडी मस्तीसे– और कोई झगडा करके सोया– क्रोधको लेके निद्रामे गया है तो लौटके भी उसको ही पकडेगा । जैसे संस्कारको लेकरके जाओगे सुषुप्तिमें उसी संस्कारसे खीचके आ जाओगे ।

इसलिये महाप्रलयमें जीव जिस जिस संस्कारसे मिले मायापति भगवानसे– वे संस्कार वहाँ सूक्ष्म रीतसे क्रियाशील रहेगा । जैसे बीजको रखना पडता है सुरक्षित घरमें वैसे ही । और उसको बोया पानीमें तो वहाँ भूमिमें सूक्ष्म क्रिया उसमें चालू हो गई तो अंकुर भाव बना– तो मानलो चना है वो वह दो भागमें फट जायेगा– सूर्यकी तरह अंकुर नीकला– तो क्या तत्त्व है उस अंकुरके अन्दर अगर चनेका बीज है तो चनेका तत्त्व और गेहुका बीज है तो गेहु का तत्त्व, और आगे जाके वह अंकुर उसी तत्त्वको ही प्रकट करेगा– ।

ऐसे ही महाप्रलय कालमें सब जीव– सूक्ष्म संस्कार सहित सत् परमात्मामें चले गये तो वही पडे रहे और वह संस्कार है धर्माधर्मके ।

कोई सात्त्विक संस्कार वाला है– तो वह अपना भला भी करेगा– दूसरेका भी भला करेगा–

कोई रजोगुणी संस्कार वाला है तो वह अपनाभी कुछ भला करेगा दूसरोका भी कुछ भला करेगा– वह लोभ को नही छोडेगा किन्तु दूसरोके लाभकी हानी भी नही करेगा– । उसको भी देगा–

कोई तमोगुणी संस्कार वाला है– वह अपना भी और दूसरेका भी बूरा ही करेगा–

अब यह तीन प्रकारके प्राणी है महाप्रलय में जा रहे है– जब फिर सृष्टि होगी तो कोई तो देव कोटिमे गये– महाऋषि हुए– सृष्टिके आरम्भमें वे उन सात्त्विक संस्कार से स्वभाव से ही ज्ञानवान जन्मे। और उसी समय वडे असुर लोग भी जन्मे अपने तमोगुणी संस्कारको लेकर।

वेदादि शास्त्रोकी मर्यादाके अन्तरगत अपनेको रखे– अपने भोगको लेवे वे सात्त्विक मनुष्य कहलाते है। सृष्टि– सर्ग चालु हुआ तो कोई शुरु से ही देवता बन गया कोई ऋषि– महाऋषि तो कोई भोगी कोई शुरुसे ही व्याघ्ररूपमें प्रकट हुआ कोई कीट– पतंग आदि रूपमें प्रकट हुआ– तो जिससे यह सब उत्पन्न हो रहा है वह सत्यम्।

हे बेटा वो सत्य है– वह तदात्मा रूप ही है प्रकट तो हुए किन्तु उसकी सत्तामें कोई कमी नही पडी– वहाँ वे मिले तो अपने अधिकारको लेके फिर खडे हो गये।

अन्तः करण क्षय होनेपर मोक्ष होगा। जब तक अंतःकरण क्षय नही होगा तो सूक्ष्म शरीरकी स्थिति बनी रहेगी और कारण शरीरकी स्थिति बनी रहेगी।

अंतःकरणको क्षय करेगें वे तो मोक्षमें चले जायेगें– भले ही सृष्टि प्रलय कालमें चले जाए।

और जो अंतः करणको क्षीण नही करेगे– वहाँ अहंता– ममता सुषुप्त हो के मिलेगी–। जैसे किसी मरीजको डाक्टर ओपरेशन करता है तो आधा बेहोश तो उसके बिस्तरमें ही कर देता है जब वह नीदमे जायेगा तो उसका ओपरेशन करना है टेबलपे तो उसको कुछ पता नही– ऐसेही महाप्रलय में गया है यह जीव उसको माया भगवती पहलेही बेहोश कर देती है उसको कुछ भी पता नही– तो फिर लौटके आ गया– इसलिये महाऋषि कहते है।

स य एषोऽणिमा– यह आत्मा सूक्ष्म है ये इन्द्रियोंकी पकडमें नही– हे बेटा भाष्यकार कहते है

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदंसर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो– (छान्दो० ६–८–४)

नान्योतोस्स्ति द्रष्टा नान्योतोस्ति श्रोता नान्योऽतोऽस्तिमन्ता नान्योतोस्स्ति विज्ञातैष त आत्माऽन्तर्याम्यमृतः

(बृ० ३–७–२३)

यह जो मनुष्य प्राणी है वे क्रिया, कर्ता, करण इस भेदमें फसा किसीको क्रिया- किसीको कर्ता और किसीको करण समझता है भेद करता है किन्तु यह सब औपाधिक है। जैसे कोई बच्चा पढता है तो वह विद्यार्थी है और रसोई बनाने लगा तो भंडारी हो गया- पूजा करने लगा तो पुजारी और विद्वान होके स्कूलमें पढाने लग गया तो प्रोफेसर हो गया- तो अब इसके कौनसे स्वरूपको सच्चा मानोगे ? कौन रूप सच्चा यह सभी औपाधिक है किन्तु हे बेटा जो असली रूप है वह किसीको नही दिखता -

वह स्वरूप इस इन्द्रियोंको भी नही दिखता यह जो सारी दुनिया है नकली स्वरूपमें जी रही है- नकली स्वरूपका स्वाद ले रही है। यह जो लाल मुहवाला बन्दर है ना- उसने खट से एक टोकरीमें सपेट मारी और एक दो आम थे उठाये और भागा- तो पेडपे बैठा ले आम एक तो बगलमें दबाया दूसरा छीलका उतारके छीलका ही खाया तो बाकी का आम फिसलके गीर गया नीचे नदीमें बहे गया- ऐसे रहे गया बिना आम खाये ही- उसने अंदाज तो लगायथा पूरा आम खायेगा किन्तु ऐसे ही रह गया- ऐसे ही मनुष्यका शरीर यह तो छीलका समझो- यह छीलके छीलके मे घूमके रह जाता है अन्दर पहुँच ही नही पाता उतनेमें मृत्यु आ गई- तो कहने लगे मर गयारे- मर गया- ।

इसलिये बेटा समझो- तत्त्वमसि श्वेतकेतो- अब श्वेतकेतु कहता है हे भगवान आपने बडा कष्ट लिया समझानेमें किन्तु मैं अभि इस तत्त्वको अभी स्पष्ट रूपसे समझता नही मेरेको फिरसे समझाओ- तो महाऋषि कहते है- तेरेको क्या आलस्य है ले तेरेको और दूसरे दृष्टान्तसे समझायेंगे- सुनो-

ॐ इमाः सोम्य नद्यः पुरस्तात्प्राच्य स्यन्दन्ते पश्चात् प्रतीच्यस्ताः समुद्रात्समुद्रमेवापियन्ति स समुद्र एव भवति ता यथा तत्र न विदु-रियमहमस्मीयमहमस्मीति ॥१॥

(छा० ६-१०-१)

देखो बेटा अथाह समुद्र जलका पडा हुआ है उसमे से महान् सूर्य ने जल राशिको खींचा और बादलके रूपमे रीफाइन कर दिया महान आकाशमे अब जलका संग्रह हो गया- अगर कहीं ये मुशलधार होके बरसे तो पृथ्वी ही डूब जाय- और परमात्माने सोचा की अगर ये जल बर्फकी तरह जम जायेतो बडी-बडी शीलाके रूपमें उपरसे गिरने लग जाये तो सब नीचे विनष्ट हो जाये इसलिये उसमे विद्युतको रखा- जिससे वह जमे नही और देखो वायुकी गतिसे जल चल भी

रहा है और जिस जिस देशमे उसकी प्रधानता है वहां खडा हो जायेगा– बरसेगा– तो यमुना प्रधान देश है तो वहां यमुना हो जायेगा- गंगाप्रधान देश है तो वहां बरसा तो वहां गंगा हो जायेगा– इस तरह इसके भिन्न भिन्न रूप बन गये– आजतक वह गंगा– और यमना बडी मस्तीसे बहती चली जा रही है प्रयाग तक आयी और दोनो मिलके समुद्रमे पहुँच गई तो उनको अब पताही नही की मैं गंगा हुँ की यमुना हुँ– वहां पहुँचके समुद्र रूपही हो गई– ऐसे सिंधु– महान हिमालयमे जो राक्षसताल है ना मानोसरोवरके पास वहीं से नीकलके पश्चिममें चली गई– समुद्रमे चली गई– । तो इन नदियोंको कोई विवेक नही– समुद्रमें चली गई– ।

एवमेव खलु सोम्येमा: सर्वा: प्रजा: सत आगम्य नविदु: सत आगच्छामह इति त इह व्याघ्रो वा सिंहो वा वृको वा वराहो वा कीटो वा पतङ्गोवा दंशो वा मशको वा यद्यद्भवन्ति तदाभंवन्ति ।।२।।

(छान्दो० ६–१०–२)

सारी प्रजा है पुन: सृष्टि काल आया तो पुन: प्रकट तो उसीसे होगे ना ? जैसे पानी बादलोके रूपमे उपर गया फिर बरसा तो नदी बना– फिर समुद्रमें मिल गया तो कहांसे आये कहां गये अन्तमें ये कुछ नदीको पता नही– ये कुछ नही जानते– । ऐसे बेटा महाप्रलय कालमें ये सब सत्मे चले गये थे किन्तु जिस जिस समय लौटके आये तो इनको पता ही नही लगा की लोग उस सत्से आया है ।

जब इस सत्से आये है तो उस सत्को समझो जैसे अपने जीवनमे सीधा-सोचो हम लोग शहरमें रहते है अच्छे घरमें रहते है तो कभी बाहर भी जाते है-देशमे विदेशमें भी जाते है तो जब तक घरकी स्मृति रहता है तो लौटके आयेंगे– और ईंग्लैण्ड पहुचे और घरकी विस्मृति हो गइ तो अब लौटके कहां आयेगा भला ?

नही लौट सकेगा । फिर तो कोई स्मृतिदेनेवाला आयातो मिल जाय– स्मृति कोई धिरे धिरे देगा तो स्मृतिमें आजायेगा तो घर लौटेगा इसी तरह समझो यह मायाका ईंग्लेण्ड है यहां पर आकर जीव कहीं रूप नगरमें कहीं गंध नगरमें कहीं स्पर्श नगरमें कही रस नगरमें कही शब्द नगरमें ऐसे कहीं तरह तरहके नगरमें घुमता है– और उसमें एकदिन कोई दयालु मिलगया स्मृति देनेवाला तो उसकी ओर अश्चर्यसे देखता है–

उसने कहा बेटा तत्त्वमसि हेतुफलात्मक: ,

तुम हेतु माने कर्म और फल माने शरीररूप नही हो ऐ सोम्य तुम आत्मा ही हो और तुम आत्मा हो सो फिर ब्रह्मसे जूदा नही- तो बेटा तुम तो ब्रह्म ही हो एक जगह भगवान शंकराचार्य ने कहा है

श्लोकार्धेन प्रवक्ष्यामियदुक्तं ग्रन्थकोटिभि: ।
जगन्मिथ्या ब्रह्म सत्यं जीवो ब्रह्मैवनापर: ।।

जगत जो है मिथ्या है जीव तो ब्रह्म ही है ।

मुमुक्षु इस तरह अपने स्वरूपमें विश्वास करे तो धीरे धीरे आगेबढ जायेगा महाऋषि कहते हैं- हे बेटा देख ये जो नाना प्रकारके जीव हैं कोई सिंह है कोई वृक माने भेडिया-दश हैं माने एक प्रकारकी मखी जो गौ भैसको काटती है इन सभी जातिओमें जीव जारहा है इसको पता नही कौनसा वह हमारा भूलहै- जिस भूलसे हम प्रकट हो रहे है ।

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो
(छान्दो० ६-१०-३)

फिर महाऋषि महावाक्य को सामने ले आते हैं इसका अभिप्राय क्या है ? जिस सत्यको वे प्रकट करना चाहतेहै वे उसके लिये जो निश्चित सत्यहै उसको वे छोडते नही । जिस सत्यको प्रकट करना चाहता है उसके लिये वही शब्द फिर कहेगा अगर श्रोताको शंका हुई और वक्ता ने उस शब्दको छोडके दूसरे शब्दको पकडेगा तबतो वक्ता अपनेही निश्चित नही है तो फिर उसी ढंगसे बोध होनेवालाहै दूसरे शब्दसे होगा ही नही । इसलिये बारबार उस सत्यको प्रकट करनेके लिये जो शब्द निश्चित है उसको ही लाना पडेगा- तो श्रोताके अन्दर दृढता आ जाती है की बात यही सत्य है क्योंकि शब्दको नही बदला । जब शब्दको नही बदला तो वह वक्ता निश्चित है सुदृढ है ।

वक्ताके अन्दर अगर ऐसी भाव है यही भी हो सकता है वह भी हो सकता है तो वह खुद निश्चित नही

किन्तु अगर वह निश्चित है तो एकदम कहेगा बस यही हो सकता है दूसरा कुछ नही ।

साबितिके लिये तर्क देना पडेगा– बुद्धिमान के अन्दर जो तर्क है उसको दूसरे तर्कसे काटना पडेगा– तर्क जो है कैंची है।

मनु कहते हैं– यस्तर्केणानुसंधत्ते स धर्मो वेद नेतरः ।।

जो तर्क को समझता है वो ही धर्मको समझता है। केवल श्रद्धासे पकडेगा-वचनको तो ये अंधश्रद्धा है, श्रद्धा तो अच्छी चीज है किन्तु अंधश्रद्धा खतरनाक है।

हरिः ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. २६

ॐ अस्य सोम्य महतो वृक्षस्य यो मूलेऽभ्याहन्याज्जीवन्-
स्रवेद्यो मध्येऽभ्याहन्याज्जीवन्स्रवेद्योऽग्रेऽभ्याहन्या-
ज्जीवन्स्रवेत्स एष जीवेनात्मनानुप्रभूतः पेपीयमानो
मोदमानस्तिष्ठति ।।१।।

ॐ अस्य यदेकां शाखां जीवो जहात्यथ सा शुष्यति
द्वितीयां जहात्यथ सा शुष्यति तृतीयां जहात्यथ सा
शुष्यति सर्वं जहाति सर्वः शुष्यति ।।२।।

ॐ एवमेव खलु सोम्य विद्धीति होवाच जीवापेतं वाव कि-
लेदं म्रियते न जीवो म्रियत इति स य एषोऽणिमैत
दात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो
इति भूय एव मा भगवान्विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति
होवाच ।।३।।

(छान्दो० ६-११-१।३)

तो विचार आया श्रुति भगवती कहती है इस बुद्धिमान मनुष्यको इस अपनी आत्माकी रक्षा करनी चाहिये । कहोगे की आत्माकी हमे क्या रक्षा करनी यह आत्मा हमारी रक्षा कर रहा है । किन्तु इसको समझना यही उसकी रक्षा है और नही समझना यही अधोगति है ।

जैसे कोई उत्तम कोटिका हीरा हो उसको हम नही समझते तो वह हमको छोडके चला जाता है– इसी तरह इस शरीरमे जो महान आत्मा है उसको जब हम समझेंगे तो जीवनको उन्नत करेंगे और इसके साथ जगतका तत्त्वबोध भी प्राप्त करेगे नही तो जीव इन्द्रिय भोगमें आसक्त होता है और मोहकी बुद्धि होती है तो तामसीभावमें आ गया तो ये आत्माको अधोगतिमें ले जायेगा– तो वह वृक्षादि योनिमें भी आ जायेगा । यह वृक्ष भी एक योनि है जीवोके कर्म भोगकी– जो जीव अति तामसी होगा वह वृक्षादि योनिमें चला जायेगा उसके लिये कहते है

ॐ अस्य सोम्य महतो वृक्षस्य यो मूलेऽभ्याहन्याज्जीवन्स्रवेद्यो मध्येऽभ्याहन्याज्जीवनस्रवेद्योऽग्रेऽभ्याहन्याज्जीवन्स्रवेत्स एष जीवेनात्मनानुप्रभूतः पेपीयमानो मोदमानस्तिष्ठति ।।१।।

(छान्दो. ६–११–१)

महाऋषि बेटा यह जो महान वृक्ष है– तो इस वृक्षमें महानता क्या है तो कहते है उसकी अनेक शाखाये उपशाखाये है जैसे कोई पारिवारिक जीवनमे महा-गृहस्थ– जिनके आठ दस तो पुत्र हो उसकी वहु और फिर उनके बच्चे सब मिलके २५–५० को परिवार हो तो उनको महागृहस्थ कहते है । ऐसे ही यह जो महान वृक्ष है उसके मूलमें जो कोई प्रहार– करेगा तो जीवन्स्रवेत्– क्यों ?

वाङ्मन्प्राणकर्मग्रामप्रतिष्ठो हि जीवः

वाक् माने यहां केवल वाणी नही अपितु वाक् इन्द्रियोसे सारी इन्द्रियोंको पकडा क्योंकि वाक् इन्द्रिय ये सारी इन्द्रियोकी नेता है नेताको पकडा तो सब पकड गये– । आज वाणीके नीचे सारी दुनिया चल रही है । इस तरह ये वाङ्- मन और प्राण इसके अन्दर आभास रूपसे प्रतिष्ठित जो चेतन है वह जीव । साक्षात् प्रवेश नही साक्षात् तो वह परिपूर्ण व्यापकता है किसमें वह प्रवेश करेगा– । किन्तु इस मनके अन्दर जो आभास रूपसे प्रवेश है वही जीव है ।

बृहदारण्यक उपनिषद् में एक बडी सुन्दर बात श्रुति भगवती कहती है याद रखना चाहिये–

यो मनसि तिष्ठन् मनसोऽन्तरो यं मनो नवेद यस्य मनः शरीरम्।
यो मनोऽन्तरो यमयत्येषत आत्मान्तर्यम्यमृत :।।

(बृह. ३-७-२०)

यह जो चेतन आत्माका मनमे प्रवेश है वह आभास रूपसे है क्योंकि यह मन बडा स्वच्छ अति निर्मल है, मन सूक्ष्म पंचभूतोके सात्त्विक अंशसे बना है। तो इसमें आभास रूपसे चेतनका प्रतिबिंब पडा जैसे अपने मुखका प्रतिबिंब हम दर्पणमे देखते है। यह मनमे प्रवेश करके भी यह आभास मनसे न्यारा-। आभास युक्तमन हम- हम- हम करते लगातो यह सामान्य अहंका यह जीव है। अब इसको साक्षीसे मिलानेके लिये ब्राह्मीवृत्ति जब होगी तो मन पीछे हट जायेगा तो इसको मनोनाश कहते है। मनसे जब आभास पीछे हट गया तो मन अपने आप ठंडा हो जायेगा- जैसे अपने इस शरीरसे आभास पीछे हट गया तो इसको मूरदा कहते है तो मनसे जब आभास पीछे हट गया तो मन निवृत्त हो जायेगा- फिर यह मन बंधनका हेतु नही होगा-

श्रुति आगे फिर कहती है मन इस चेतन आत्माको नही समझता मन इसका शरीर है- किन्तु मनका अन्दरसे यह आत्मा नियंता है ऐसी वह तेरी आत्मा है हे बेटा यह अंतर्यामी अमृत- यहाँ मृत्यु कुछ नही यह आत्मा अमृत है।

आत्माके स्वरूपका ध्यान करो इसके लिये मनको शान्त बनाओ मनके अन्दर अच्छे विचारोंको रखो- और अच्छे कर्मोंसे शान्त बनाओ। अशान्त मन तुम्हारे ध्यानमें आयेगा नही- ऐसा मन तमोगुणमें आयेगा तो वृक्षादि योनिमे आ जायेगा- तो वृक्ष ही उसका शरीर बन जायेगा। इसलिये उस वृक्षके अन्दर भी वह आत्मा है। उस आत्माका बोध कैसे करे।

तो कहते है उस वृक्षको जब काटा तो रस निकला यह रस क्यों नीकला ? क्योंकि इसके अन्दर प्राण सम्बन्ध है- जहा प्राण है वहाँ गति होगी-। जैसे वायु चल रही है तो सब प्राणी चल रहे है- यह वायु है यह विराट परमात्माका प्राण है इसका प्राण बन्ध हो जाये तो अपना प्राण भी बन्ध हो जायेगा। समष्टी व्यष्टि से मिलेगा तो जीवन मिलेगा।

बडे बुद्धिमान लोग जो है ये चाहते है की यह समष्टि प्राणको दूषित न किया जाय नही तो ब्रह्मवध हो जायेगा।

महाऋषि उद्दालक अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतुको समझाते है देखो बेटा वृक्षादि योनिमें जीव ही है- यह अपना रस जडोसे खींच रहा है और अपने

शरीरको बढिया बनाता है । भूमिके रससे पत्र, पुष्प, फल बन रहे है वे सब वृक्ष परोपकारके लिये दे रहा है– देखो यह वृक्ष कितना लोकोपकार करता है । यह वृक्षमें जब जीवात्मा अपने कर्म भोग लेनेको गया है तो जबतक कर्म भोग है तबतक शाखा– उपशाखा ये बनाता रहेगा जहां कर्म भोग कटेगा तो जीवने उस शाखाको छोड दिया तो वह शाखा सुख जायेगी– कभी कभी ऐसा भी होता है संपूर्ण वृक्षको जीवने छोड दिया तो पूरा ही सूख जायेगा– । जैसे अपने शरीरको ही देखो कभी अपने किसी अङ्गको जीवने छोड दिया तो उसको कटवाना पडता है– तो क्या समझे– अब इसका कर्म भोग खतम हुआ– वह अङ्ग कट गया ।

कभी पूरे शरीरको जीवात्माने छोड दिया– कभी मानलो अभी लोगोकी दृष्टिमें हमारी अवस्था ठीक है कोई इतनी वृद्धावस्था नही– किन्तु जब कर्म भोग खतम होगा तो जीव छोड देगा तो यह शरीर मूरदा हो जायेगा । जैसे वह आकाशमें पतंग उडाते है तो वह कब तक उडेगी आकाशमें– तो जब तक वह धागेसे बन्धी है– धागा ठीक हो उडती रहेगी– जब धागा कट गया तो फिर नही? उडेगी तो यहां– पतंग तो है यह शरीर– और धागाको प्रारब्ध कर्म समझो– । तो हे बेटा जब प्रारब्ध कर्म पूरा हुआ तो जीव इस शरीरको छोड देगा । अब आगे महाऋषि समझाते हुए कहते है–

ॐ एवमेव खलु सोम्य विद्धीति होवाच जीवापेतं वावकिलेदं म्रियते न जीवो म्रियत इति स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एव मा भगवान्विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच ।।३।।

(छा० ६।११।३)

महाऋषि कहते है बेटा देख यह जीव जो है चेतन है उस अंशमें अमृत है और उसका विवेशषण है साभास मन यह मृत्युके अधीन है– । तो विशेष्य अंशमे– चेतन अमृत है साधारण विशेषण अंशमें अमृत नही । अब अधिष्ठान अंशमें जो चेतन है उसमें अमृतत्व है इस अंशमें अमृत होनेसे यह जल्दी देखनेमे आया नही– तो इसलिये इसको बारबार समझा रहे है– महाऋषि– हे बेटा यह अतिसूक्ष्म है सूक्ष्म होन पर भी अति सत्य है– हे बेटा इसकी सीमा कोई नही वे असीम है तो उसको कौन रोक सकता है ? यह सर्वात्मा हो गया– । रोकनेवाला तो नामरूप है । यह आत्मा नामरूपकी पकडमें आता नही । नामरूपमे विशेषण पकडमे आयेगा– ये अल्प है परिमित है– इसमें मृत्यु आदि नाना आकार प्रकार और

विकार प्रतीत होगे– विशेष्यमें कोई विकार नही– तो मृत्यु भी नही यही सत्य है वही आत्मा है हे श्वेतकेतु– तत्त्वमसि वह आत्मा तुम हो तुम देहादिसंघात आत्मा नही हो ।

जैसे कोई सुन्दर सरोवर हो और उसके चारोओरसे अनेक प्रकारके जीव पानी पीते है ऐसे ही तुम्हारी यह आत्माको अमृत सरोवर समझो उसमें चारो-ओरसे नामरूपादि प्रपंच जीवन ले रहा है जहाँ उससे जीवन लेना बन्ध किया तो वह मूरदा हो जायेगा– मूरदा दिखेगा तो कोई फिर उसको नही चाहेगा ।

हे बेटा तुम वह अमृत आत्मा हो ।

तो मुमुक्षुको बडी सावधानीसे इस अमृतत्त्वका निश्चय करके मनकी स्थिति को बनाना है– । धीरे धीरे– जल्दी नही क्योंकि यु भी सीधा समझो एक दिनमें अगर ऐसी स्थिति बन जायेगी तो तुम्हारा मन इतना ऊँचा उठ जायेगा की यह नीचे आयेगा ही नही । यद्यपि इसका आवरण भंग हो गया । अविद्या निवृत्त हो गई और ये अपनी पूर्ण स्थितिमे आ गया । देहमें अहं बुद्धि नही तो देहके द्वारा तुम कुछ नही कर सकोगे । यद्यपि ऐसा होना महान पूर्वजन्मके पुण्योका फल है– ।

तुम्हारा काम हो गया– । तुमको अब जीव बनानेवाला कोई नही किन्तु इससे जगतका भला नही होगा ।

धीरे धीरे ज्ञानका उत्कर्ष करते चलोगे तो तुम अपनी वाणीसे दूसरे प्राणीका भी भला करोगे ।

यहाँ सीधा समझो– अभी बच्चा जन्मा और दूसरे दिन ही छ फीटका हो गया तो मम्मी उससे प्यार नही करेगी– प्यार तो तब करती है जब लाफा खाते खाते लडका जवान हो ।

ज्ञान भी धीरे धीरे विवेकादि गुण संपन्न करके आचार्यसे सत्संग श्रवण करते करते धीरे धीरे उपर उठे तो इसमें कुछ तुम अपना भी भला करोगे कुछ लोगका भी भला करोगे तो ज्ञानका स्वाद भी आयेगा । तो धीरे धीरे ज्ञानकी स्थितिकी इच्छा करे एकदम उपर उठना वह भी वेहोश होनेकी बात है ।

हे बेटा जीव मरा नही तो जिसका कर्म शेष है गुण शेष है ज्ञानकी ऊँची भूमिमें पहुँचा नही तो फिर जन्म लेगा क्योंकि कर्मक्षय हुआ नही ।

कही लोक कहते है पूर्ण जन्म तो है ही नही– उनके लिये सीधा समझो–

जैसे किसी गौका बच्चा जन्मते ही जहाँ उसकी माने धाप दिया तो अपनी माको मुह मारता है– दूधकी हंडी उसके अन्दर है यह पता है तो जैसे वह क्या नजर आता है ? श्वेतकेतु कहता है रे भगवान मेरेको अब कुछ भी नजर नही आ रहा– ।तब महाऋषि कहते है दूसरे फल दिखता था– फलके अन्दर दाने दिखे किन्तु जब इसको तोड दिया तो अब कुछ नही है ऐसा मानेगा की कुछ है ऐसा मानेगा ?

कहते कुछ नही है ऐसा मानेगा तो उस बीजसे इतना महान वृक्ष कैसे बन गया ? इसलिये कुछ नही है ऐसा तो कहे नही सकते– तो कुछ है ऐसा कहना पडेगा– ।

इस बुद्धिमान मनुष्यको परमात्माने बुद्धि जैसा सुन्दर टी. वी. सेट समझो दिया– तो जरासी आंख बन्द करोतो अन्दर देखोतो अनेक प्रकारके सीन दिखते है की नही ? और शब्द भी सुनाई पडते है की नही तो आंख और कानके विषय बडे प्रवल है यह मनुष्यको बार बार आकर्षित करते है ।

हमारे चार प्रकार की वाणी मानी गई–

वैखरी मध्यमा– पश्यंति परा वाणी

वैखरीवाणी– तो सामान्यवाणी जो जिह्वासे हम उच्चारण करते है कंठ से उच्चारण करते है उसको कहते है । मनुष्यप्राणी इस वैखरीवाणीके अन्दर ही नही घूमता रहे उसमें तो पशु पक्षी भी घूमते है कोई कोई पक्षी तो बडी सुन्दर वाणी बोलता है– किन्तु बुद्धिमान मनुष्य उससे उपर उठे– । मध्यमा नाद यह मन प्रधान है । अपने अनुभवके लिये समझो आफिसमें काम करता हुआ इन्सान कभी गलती भी करता है कभी अच्छा भी करता है । अच्छा करेतो उसका पुरस्कार तो भाग्यसे मिलता है किन्तु बुरा करेतो उसका पुरस्कार बिना बुलाये आता है ।

हम किसको अच्छा मानते है मनसे प्यार करे उसे या वाणीसे प्यार करे उसको ? तो मनसे प्यार करे उसेही अच्छा मानेंगा । तो इसी तरह मनसे जो बुरा– गाली देने लगे तो वह खतरानाक है– मुहसे अगर दो शब्द बोले भी तो उसको बुरा मत समझो– । मनके अन्दर विकार चला गया तो बुरा है इसलिये वैदिक परंपरामें भी और श्रीमद्‌भगवद्‌गीतामें भी भगवान कृष्ण कहते है

यज्ञानां जपयज्ञोस्मि– यज्ञमें जपयज्ञ मैं हुँ–

अब जप यज्ञकी व्याख्या करते हुए कहते है

विधियज्ञाज्जपयज्ञो विशिष्टो दशगुणैः

यज्ञहोत्रादि यज्ञ है उससे जपयज्ञ दशगुणा श्रेष्ठ है यज्ञहोत्रादिके लिये सब सामग्री बाजारमें मिलती है पैसे भी मिलते है– क्योंकि जपयज्ञमें मनको लगाना है अंधा खोजता है वैसे उस अंधेकी तरह मुह मार रहा है यह नही– ये नही– माँ मना करती है– गौ फिर पूंछ फट कारती है तो कहती है इधर आव मूर्ख– । तो धीरे धीरे जब हुंडी पकडमें आ गई तो टूटी खोजता है और आगई तो दूध पीने लगता है की नही ? यह स्मृति है पूर्वजन्मकी– यह पहलेका दूधका शोकिन रहा पहलेभी दूध पीके आया है । पहले अनुभव किया है यह सिद्ध हुआ । इसी तरह मनुष्यमें भी समझो जन्मसे ही मृत्युसे डरता है–अगर मान लो कही छोटासा बच्चा है जरा उसका हाथ पकडलो तो जितना बल होगा उतना लगाके हाथ छूडा-नेकी कोशिश करेगा– चिल्लायेगा– रोयेगा ।

तो इस तरहा पूर्वजन्म स्मृति–से अनुभवसे सिद्ध है । इसलिये बुद्धि भ्रान्त नही चाहिये । इसलिये सात्त्विक बुद्धिसे अपने कर्मोंको सुरक्षित करता हुआ आगे बढता रहे । तो हे सोम्य तुम अमृत आत्मा ही हो– श्वेतकेतु कहता है हे भग-वन आपने तो खूब स्पष्ट करके समझाया किन्तु अभी पूरा मेरी समझमें आया नही– आप मुझे कृपा करके फिर इस बातको समझाइये– ।

महाऋषि अब जब समझाने बैठे है तो कोई आलस्य नही– जैसे कोई बडी तृप्त होके बैठे है तो जितनी रोटी मागो एकदम दे देगी– और उसके हाथोमें बरकत है तो तीन की जगहमें चारको लिये भी भोजन दे देगी– अगर इससे उल्टा अगर खुद तृप्त नही तो उसके हाथमे बरकत नही होगी ।

इस तरह ज्ञानदानकी बुद्धि बडी होनी चाहिये । जिज्ञासु प्रश्न करता है तो उसको क्रोधमें नही जाना चाहिये । उत्तरोत्तर समझाता जाये उसकी जिज्ञासाको मूर्छित न होने दे ।

तो महाऋषि फिरसे श्वेतकेतुको समझाते हुए कहते है

ॐ न्यग्रोधफलमत्र आहरेतीदं भगव इति भिन्द्धीति भिन्नं भगव इति किमत्र पश्यसीत्यण्व्य इवेमा धाना भगव इत्यासामङ्गैकां भिन्द्धीति भिन्ना भगव इति किमत्र पश्यसीति न किञ्चन भगव इति ।।१।।

(छान्दोग्य. ६-१२-१)

एक न्यग्रोधवृक्ष होता है एक ग्रौर पीपलके वीचका वृक्ष जिसको ग्रपने पाखर कहते है उसके छोटे छोटे फल उसमें ग्रतिसूक्ष्म वीज होते है– तो महाऋषिश्वेत-केतुको कहते है बेठा एक वह फल ले ग्राग्रो– जब श्वेतकेतु ले ग्राया तो कहते है बेटा उसको तोडो– तो ग्रब उसमें तेरेको क्या दिखता है– तो श्वेतकेतु कहता है हो भगवन् इसमें छोटे छोटे बोज नजर ग्राते है । महाऋषि कहते है ग्रब उन छोटे बीजमें से एकको तोडो– पीसो– बतलाग्रो ग्रब तेरेको उपांसुजप जपज्ञसे सौ गुणा श्रेष्ठ है– क्योंकि इसमें प्राण कार्यरत है– । ग्रंशुनाम है प्राणका यदि कोई रोग नही तो प्राण चलता हुग्रा सुनाई नही पडता ऐसेही होठ तो हिले किन्तु शब्द सुनाई नही पडते उसको उपांशु जप कहते है ।

चुपचाप बैठा गया मनको पकडके तो यह ज्यादा महत्त्वशाली है

सो यह जप यज्ञ मध्यमावाणी के ग्रन्तंगत है ।

ग्रब पश्यन्तिनाद– नाभि प्रदेशमें रहती है वहतो बडी उंची भूमिमें जब साधक समाधि प्रज्ञामें पहुँच जावे तब उसका ग्रनुभव होता है

मध्यमा नादसे जप करेगेतो मनका जल्दी निरोध होगा मन जल्दी शान्त वैसे मनकी स्थिति उंची बनती जायेगी– मन है मनन करेतब, बुद्धि है निश्चयकरे तब ग्रौर प्रकाश करे तब वह चित्त कहलाता है ग्रौर ग्रहंकार करे तब ग्रहं कहला-ता है यहमन के ही सब कार्यसे भेद दिखते है । महाऋषि कहते है हे बेटा मनसे श्रद्धास्व यह जो ग्रात्मा है ये ग्रति सूक्ष्म है ये तेरी इन्द्रियोका विषय नही किन्तु जो श्रद्धावाला है उसको दिखाई देगा ।

ग्रब तेरेको वहाँ कुछ भी नही दिखता किन्तु वहाँ पर कुछ है । यह श्रद्धाका विषय है ग्रौर जो श्रद्धा है मनसे करनी पडेगी इसी तरह देख हे सोम्य वह जो सत्य है उसको तूं ग्रपनी इन्द्रियोसे नही पकड सकता किन्तु यह सारी इन्द्रिया उस सत्यसे तो जी रही है– उस सत्यको तूं सात्त्विक श्रद्धासे समझ सकेगा क्योंकि यह सत्य ग्रति सूक्ष्म तत्त्व है ।

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा

वह श्रद्धाका विषय है अगर नास्तिक भावमे जायेगा तो यह जो इन्द्रियोसे नही दिखता इसलिये नही है यह तो पशु दृष्टि हुई– क्योंकि पशु भी जब घासको देखता है तो मुह मारता है– जहां नही देखता आंखसे वहां नही मारता– तो अगर ऐसी पशु दृष्टि रही तो वह तत्त्व समझमें नही आ सकता– बुद्धिमान मनुष्य ऐसी वृत्तिको धारण नहो करे ।

तत्त्वमसि श्वेतकेतो

हे सोम्य तुम वो अमृत आत्मा हो– उसको जाननेकी इच्छा करो– । मनकी स्थिति जब हो जायेगी तो मन अपने आप शान्त हो जायेगा– । अगर मनकी स्थिति आत्माके अमृतत्वमें हुई नही तो मन चंचल होगा उसके लिये सुन्दर दृष्टान्त है अर्जुनका–

जबतक अर्जुनकी स्थिति उस आत्माके अमृतत्त्वमें बनी नहीं तो रोता रहा– किन्तु श्रीकृष्ण भगवानके उपदेशसे जब आत्माके अमृतत्त्वका निश्चय किया तब अंतमें कहता है

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत ।
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव ।।२३।।

(गीता० १८।७३)

हे भगवान आपके प्रसाद से अब मोह नष्ट हुआ है स्मृति माने वह ब्राह्मी-वृत्ति– तत्त्वस्मृति हुई तो अब आप जैसे कहेंगे वैसा करेंगे–

हरि : ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. ३०

ॐ स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा
तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एव मा भगवान्विज्ञापय-
त्विति तथा सोम्येति होवाच ।।३।।

(छान्दो० ६–१२–३)

ॐ लवणमेतदुदकेऽवधायाथ मा प्रातरुपसीदथा इति स ह
तथा चकार तं होवाच यद्दोषा लवणमुदकेऽवाधा अङ्ग
तदाहरेति तद्धावमृश्य न विवेद ।।१।।

ॐ यथा विलीनमेवाङ्गस्यान्तादाचामेति कथमिति लव-
णमिति मध्यादाचामेति कथनिति लवणमित्यन्तादाचा-
मेति कथमिति लवणमित्यभिप्रास्यैतदथ मोपसीदथा
इति तद्ध तथा चकार तच्छश्वत्संवर्तते तं होवाचात्र
वाव किल सत्सोम्य न निभालयसेऽत्रैव किलेति ।।२।।

ॐ स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिद सर्वं तत्सत्यं स आत्मा
तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एव मा भगवान्विज्ञापय-
त्विति तथा सोम्येति होवाच ।।३।।

(छान्दो० ६–१३–१।३)

महाऋषि उद्दालक छान्दोग्य उपनिषदके छठवे अध्यायमें अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतुको महावाक्यका उपदेश देते हुए कहते हैं हे सोम्य यह जो कुछ भी नाम-रूप प्रपंच है अपने स्वरूपमें यह दर्शन मात्र है। जैसे यह गुलाबके फुलको देखो अपने स्वरूपमें यह दर्शनमात्र है उसकी स्वतंत्र सत्ता कोई नही। थोड देरके लिये मानलो इस फुलकी हम एक एक पंखुडी जुदा करदे तो यह गुलाबका फूल रहेगा ? तो अब तुम इसको गुलाबका फूल कहोगे या डंडी मात्र ? यह सब पंखुडीयां मिलके गुलाबका फुल है एक एक पंखुडीसे कुछ भी नही फिर भी प्रत्येक गुलाबकी पंखुडीमें वोही रसरूप सत्ता विराजमान है। तो उस सत्ताको तो असत् कह नही सकते जिससे इतनी सुन्दर चीज बनी वह तत्त्व ज्ञान नही हो सकता ? वह तत्त्व अखंड होगा जहां खंड न हो। खंड कहां होता है ? कहना पडेगा भेद जहां होता है- भेंद जहां होगा वहां क्रिया होगी-। क्रिया होगी वहां गुण होगा। और जहां गुण होगा वहां जाति होगी। और जाति होगी वहां धर्म होगा-। वहां संबन्ध होगा।

आकारमें बन्धा हुआ पदार्थ होगा वह साकार कहेलायेगा। वह देखनेके लिये होगा। नामरूप प्रपंच मिथ्या है किन्तु उसका आधार सत्य है।

जैसे हमारा यह शरीर है- यह साकार है- यह उपाधिसे साकार हुआ-।

एक ड्रामामें लडकेको लडकीका ड्रेस पहना दिया तो उस लडकीके ड्रेसमें भी दिख कौन रहां है ?

व्यवहार लडकीका हो रहा है इस तरह साकार दिख रहा है किन्तु वह मिथ्या है और विना ड्रेस मे निराकार तत्त्व है

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ।। (गीता ७-१९)
यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमम्।
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत ।।
(गीता १५-१९)

तो यहां पर भगवान कहते है जो निराकार तत्त्व है उसको बहु जन्मोंके अन्तमें ज्ञानवान जो असंमूढ है वह जानता है।

पुरुष तो ये क्षर- अक्षर प्रकृतिको कहते है

पुरुषोत्तम- रूपमें मैं तो आत्मा हुं- अगर यह पुरुषोत्तम नही होगा यह शरीर सुख जायेगा।

एवं क्षर अक्षर विलक्षण सर्वभूता त्या मैं हुं।

और यह जगत कैसा है ?

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते
नान्तो न चादिर्नच संप्रतिष्ठा।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल-
मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा ॥३॥

(गीता १५-३)

तो यह जगत जैसा दिखता है वैसा नही अपना यह शरीर प्रतिक्षण बदलता जाता है- पहले बचपनका रूप दिखा- फिर उसके आगे कुमारावस्थाका फिर जवानीका रूप दिखा बादमें बुढापेका रूप दिखा यह सब रूप दिखे वे सच दिखे की झूठ- ?

तो कहना पडेगा यह तो केवल देखनेमात्रका ही था-। यह शरीर प्रकृतिके नियमसे बदलता रहता है वही प्यारा लगता है अगर जैसेका तैसा रहता तो कोई इसे प्यार नही करता- तो परिवर्तित आकार है वह प्यारा है। अपरिवर्तित आकार है वह किसीको भी प्यारा नही। जैसे कोई बच्चा है- वह बडा ही न हो रूप बदले ही नही तो कौन माता उसे प्यार करेगी ?

इसी तरह सोचो आत्मा अगर बदलनेवाली हुई तो प्यारी है ? आत्मा भी अगर बदलने लग जाये तो कौन बच्चा- कौन माता- कौन पिता ? क्या हाल होगा ? रहा कौन ? इसलिये वह एक आत्मा अमर है उसमें एकत्व है अमृतत्व है। उसको अगर पकडोगे तो परिवर्तनशीला जो प्रकृति है उसको पकडना नही पडेगा। सत्‌में भेद नही है भेदहोगा वहाँ जहाँ जाति, क्रिया, सम्बन्ध होगा- वह जहाँ होगा वह आकारमे ही होगा- भेद जहाँ है- वहाँ जाति- क्रिया सम्बन्ध तो वहाँ जन्म है- इसमें क्रिया है।

वह फुल है अभी कलीके रूपमे इसमें क्रिया हुई तो सुन्दर फुल बन गया- किन्तु क्रिया अभी शान्त नही हुई चल रही है- तो साकार पदार्थ जोभी होगा वह विनाशी होगा अब जब विनाशी है तो इसको मिथ्या बोलनेमें संकोच क्या बेटा ?

सत्यवक्ता है वह घबडाये नही । सत्यको झूठ कहोगे तो अधर्म होगा । वह जो सत्य है वह तुम्हारी आत्मा है वहाँ भेद कहाँ आयेगा क्योंकि यह तो निराकार है वह तुम हो । तो श्वेतकेतु कहता है हे भगवन आपने तो अच्छी तरह समझाया किन्तु अभी भी मेरेको स्पष्ट रूपसे समझमे नही आया आप दूसरे दृष्टान्तसे समझाइये– ।

महाऋषि कहते है अच्छा अब तेरेको एक और दूसरे दृष्टान्तसे समझाते है– जाओ वह लवणका टुकडा उठाके पानी भरे हुए घडमे डालदो– तो श्वेतकेतुने वैसा हीं किया– फिर रात हो गई तो खाना खाया– सो गया– सवेरे स्नानादि करके संध्या वन्दन करके पिताके पासमें बडी नम्रतासे अभिवादन करके पहुँचा तों महाऋषि उद्दालक कहते है वेटा– पुत्रादि– शिष्यको अङ्ग शब्दसे कहते है तुम उस लवणको ले आओ । अब उसने घडेमें हाथ डाला तो लवण तो नही है– तो जब कोई बात अटका जाती है उसके अन्दर तो मूढ हो जाता है। कानके बगल में खुजलाता है...। तो महाऋषि समझगये कहते है बेटा क्या बात है ? वहाँ रखा तो था– लवण किन्तु अब नहीं मिल रहा– हे भगवन अब मैं क्या करूँ ?

महाऋषि ने समझा अब पकडमें आया है । वहाँ रखा है ना तो वहीं है वेटा तूं समझनेमें कमी करता है । अब हाथ पकडके ले जाते है कहते है बेटा आचमन करो– उपरसे जल लेकर फिर पूछते है क्या है बेटा– ? तो कहता है लवणम् इति। अब मध्यसे अंजली भरो– और आचमन करो फिर बताओ कथम् इति तो वेटा कहता है लवणम् इति । नीचेसे अंजली लेके आचमन किया तो वह भी लवण था– तो महाऋषि समझाते है वह जो लवण था आँखसे दिखता था पकडमे आता था– तो माने स्थूल वस्तुका स्वभाव है वह पकडमें आती है । जब वही वस्तु सूक्ष्म हो जायेगी तो उसमें रूप और स्पर्श नही रहेगा– किन्तु रसनेन्द्रिय वहाँ है तो वह कार्य करता है अब वह लवण पानीका सकसमें चला गया इसलिये रसने-इन्द्रियसे उसका ग्रहण तो हो रहा है । तो तद्वस्तु–उस वस्तुको फिर उपायान्तरसे समझाया । पहले चक्षु–त्वक् इन्द्रियसे ग्रहण बादमें उपायान्तरसे समझाया– की यह वस्तु शवत है । वह शक्ति उसके अंदर है उसमे कोई गरबड़ नही । आगे श्रुति भगवती उसकी महिमाको समझाते हुए– कहती है–

यस्मिन् द्यौः पृथिवी चान्तरिक्ष–
मोतं मनः सह प्राणैश्च सर्वैः ।

तमेवैकं जानथ आत्मानमन्या
वाचो विमुञ्चथामृतस्यैष सेतुः ॥५॥

(मुण्ड० २-२-५)

श्रुति परमात्माकी महिमाका वर्णन करते हुए प्रमादरहित और विरक्त होकर उसे जाननेके लिये कहती है- जिन परब्रह्म परमात्मामें स्वर्ग, पृथ्वी तथा उनके बीचका सम्पूर्ण आकाश एवं समस्त प्राण और इन्द्रियोंके सहित मन बुद्धिरूप अन्तःकरण सबके सब ओत प्रोत है- जैसे एक फुलकी सब पखुडीयोमें रसात्मा एकरूपसे विराजमान है- । तो जो ब्रह्माण्डकी आत्मा बना वह तुम्हारे मनकी आत्मा है की नही ।

तो यह एकमेवाऽद्वितीयम्- यह अखंड है उसमें जो मनका सम्बन्ध है वह मिथ्या है- मनके अन्तर शरीर रुपी कवर है- किन्तु यहाँ तो हम इस चोले-की सुन्दरता को ही जव देखे तव देखते रहते है । किन्तु बुढापेमे सव पोलीश झड गई- अब बतलाओ भला ? तो वह जो तुम्हारी अन्तर आत्मा- वहतो मनसे न्यारा- मनका साक्षी है वही ब्रह्म है- । हम मनुष्य- हम स्त्री, हम पुरुष यह जीवभाव तो बलात् आ गया है । तो उस सत्य साक्षी आत्मामे मनको रखके तव शरीरमें प्यार करो । वह आत्मा एक ही है वहाँ कोई सजातीय, विजातीय या स्वगत भेद नही- सद्‌रूप है अखंड है इसलिये वहाँ गुण, जाति, सम्बन्ध- नही तो जन्म भी नही- यह जन्म मरण तो बोलनेकी भाषा मात्र है

श्रीमद् भगवद्‌गीतामें भगवान कृष्ण कहते है

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥

(गीता० २-१६)

जो असत् है उसका जन्म नही और जो सत् है उसका मरण नही- । जन्म मरण एक भाषा है ।

इसलिये उन्ही एक सर्वात्मा परमेश्वरको तुम जानो, दूसरी सव बातोंको ग्राम्यचर्चाको सर्वथा छोड दो वे सब तुम्हारे साधनमें विघ्न है, अतः उससे सवथा विरक्त होकर साधनमें तत्पर हो जाओ । यही अमृतका सेतु है ।

महाऋषि कहते हैं हे बेटा तत्त्वमसि तुम वह आत्मा हो न तुम हेतुफला-त्मकः ।

इस दुनियामे न मेरा न तेरा– यह देखने मात्रका होता है यह माया भगवतीकी धर्मशाला है– मेरा तेरा करते जाओ और कुछ पकडमे आयेगा नही– इसलिये सब छोड आत्माका ध्यान करो ।

हरि ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. ३१

ॐ यथा सोम्य पुरूषं गन्धारेभ्योऽभिनद्धाक्षमानीय तं ततो-
ऽतिजने विसृजेत्स यथा तत्र प्राङ्वोदङ्वाऽधराङ्वा
प्रत्यङ्वा प्रध्मायीताभिनद्धाक्ष आनीतोऽभिनद्धाक्षो
विसृष्टः ।।१।।

तस्य यथाभिनहनं प्रमुच्य प्रब्रूयादेतां दिशं गन्धारा
एतां दिशं व्रजेति स ग्रामाद्ग्रामं पृच्छन्पण्डितो मेधावी
गन्धारानेवोपसम्पद्येतैवमेवेहाचार्यवान्पुरुषो वेद तस्य
तावदेव चिरं यावन्न विमोक्ष्येऽथ सम्पत्स्य इति ।।२।।

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदंसर्वं तत्सत्यं स आत्मा
तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एव मा भगवान विज्ञाप-
यत्विति तथा सोम्येति होवाच ।।३।।

(छान्दो० ६-१४-१।३)

तो विचार चला महाऋषि उद्दालक अपने प्रिय पुत्र श्वेतकेतुको समझाके आये की पहले सत् ही था– और वह सत् है उसके बारेमे कहा की यह अतिसूक्ष्म है वही तेरी आत्मा है तो श्वेतकेतु बडी विनम्रतासे कहता है हे भगवन् आप

मुझे फिरसे इस बातको समझाइये क्योंकि इस सत्का अभी मेरी बुद्धिमे अवतरण नही हुआ- । तो महाऋषि दूसरा दृष्टान्त देके कहते है पुराने जमानेमें गन्धारदेशके नामसे बडा विशाल देश था वह हिन्दु जातिकी परम्परा थी क्योंकि उपनिषद कालमे श्रुति गन्धार देशकी चर्चा करती है । बादमे छूआछूत आदिकी वजहसे- संकीर्णताके कारण वह देश अब हिन्दु जातिके हाथमें नही रहा । गांधर देशमें बड धनी मानी शेठ रहते थे- एकबार बडे भयंकर चोर आये और शेठको उन्होने पकड लिया गुहपे और आंखोपे पट्टी बांधके ले गये घनघोर जंगलमें एक वृक्षसे उसको लाके बांध दिया- और चोर चले गये । अब वह जोरसे चिल्लाता है- हे भगवन् मेरी आंखे तो बंधी हुई है वनमें भयंकर चोरोने मेरेको बांध दिया है- मेरेको छूडाओ- । तो मानलो की कोई गया आदमी और उसके कानमे उसकी आवाज सुनाई पडी तो मनुष्यका शब्द है- तो वह इन्सान उस ओर चलां तो देखता है एक आदमी पेडपे बन्धा पडा है आंखे बन्ध है चिल्ला रहा है मेरेको कोई छुडाओ । अब यह जो दयालु आया उसने बडे प्यारसे उसके बंधन खोल दिये और मुह पे से पट्टी हटा दी पूछा क्यों भाई कहांके रहनेवाले हों ? उसने कहा हे भगवन् यह गंधारदेश किस ओर है ? वह इस जंगलके बारेमें कुछ भी नही जानता था मतलब गंधार देश काफी दूर था ।इसलिये उस दयलु से पूछता है उसने कहा उत्तर दिशामे गंधार देश है । अब पूर्व पश्चिमका ज्ञान तो है ही वह अब उत्तरकी ओर चल पडा- । किन्तु जैसे वह आगे गया रास्ता पूछता जाता है- वह बुद्धिमान मेधावी है अब एक ग्रामसे दूसरे ग्राममें इस तरह पूछता हुआ जब चला- तो धीरे धीरे गंधार देशमें पहुँच जाता है ।

हम चोरोकी पकडमें नही है ऐसा मत कहो- हमलोग भी उस सेठ की तरह चोरोकी पकडमें है । कहोगे की महाराज चोर तो दिखता नही है । तो वह नही दिखनेवाला चोर है कर्म- । यह पुण्य और पाप रूपी कर्म चोर है ये जीवको पकड लेता है और बडे जंगलमें लाके छोड देता है यह जंगल है देहारण्य ।

जैसे काठमाण्डु शहरमें जाओ और सबके सब आदमी एक रास्तेसे चलने लगे तो देखो तो हाल क्या होता है ।

मनुष्योका जंगल भी बडा भयंकर है आदमी घूम गया तो फसेगा । किन्तु यहांपर तो केवल एक योनिकी बात श्रुति नही करतीं यहां तो मनुष्य, देव, गंधर्व, किन्नर- पशु, पक्षी किट पतंग आदि योनियां रूपी ये जंगल है और उसमें इस कर्मरूपी डाकू है इस जीवको पकडे पकडे घूमाता है ।

कभी एक पेडसे बांध दिया तो कभी दूसरेसे तो कभी तीसरेसे मनुष्य शरीर से जब हटा तो पशु शरीरमें बांध दिया– पक्षी शरीरमें बांध दिया– यह सब माया भगवतीका जंगल है यह देहारण्य है इस अरण्यमें बन्धा हुआ है– कहता है महाराज बन्धन तो दिखता नही– हमलोगतो घूमते फिरते है– किन्तु आँख बन्द करके जरा अपनेसे पूछो कौन हो ? कहाँसे आये हो ? कहां जाओगे ? तो कहोगे नही जानते– तो क्या यह बन्धन नही ?

आगे पीछे दोनो तरफ बन्धन है केवल इस जीवनमें थोडासा देखते हो उसमें मैं– मैं करते हो । पीछेकी दृष्टि बन्द, कर्म रूपी चोरने काले कपडेसे बांधके रखा है ।

पूर्व जन्मके किसी बडे पुण्यसे बडे भाग्यसे किसी मनुष्य शरीरमें जीव आया और मनुष्य शरीरमें भी बहोश से, शरीर तो केवल भोग–देह है । मोक्ष नही मिलेगा जो केवल अपने भोगमें दृष्टि रखते है । ऐसा कोई मनुष्य जन्म होता है जिसमें आत्मापरमात्माका ज्ञान हो जाता है । इस मनुष्य शरीरमें हम इस अमृत विद्याको समझें वह कौन है हमारी आत्मा ।

यह जो हमारा लम्बा चौडा शरीर है जैसे बारेमें हम लोग अन्न भरते है तो वह फुलता जाता है वैसे इस शरीरमें हम लोग अन्नपानी भरते जाते है वह फूलता जाता है इसीमें यह पुराना हो रहा किन्तु इसके अन्दर कौन वह तत्व है जिसकी वजहसे यह शरीर जी रहा है ? कौन वह सत्य है । अगर ऐसी जाननेकी इच्छा हुई तो समझो पूर्वजन्मका ये योग कर्म है ।

भोगकर्म चाहे तुम जिस योनिमें जायेगा भोग ही देगा– तुमको फुरसद ही नही मिलेगी ।

ऐसा मत सोचोकी बडा धनी होगा तो खूब सत्संग करेगा वह खूब परमात्माका जप ध्यान करेगा अरे बडा धनी होगा वह प्रमादी भी खूब होगा डान्स–डीनर क्लब को ही लाइफ (जीवन) मानेगा सोसल लाइफ मानेगा । समझो तो सही बात क्या है ? अन्दर जब वह है तब सोस्यल लाइफ है कि जब वह नही तब ? मूरदा कहीं क्लबमें जाता है ? और कहीं घूसने लग जाये तो क्लबमें कोई घूसने देगा ? बडी समस्या है इतने भोगोसे छूट्टी पानेकी इच्छा करता है– इसलिये– भगवान कृष्ण– श्रीमद्‌भगवतगीतामें कहते है

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये ।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ।।३।।

(गीता० ७–३)

और कठोपनिषदमें श्रुति भगवती कहती है

श्रवणायापि बहुभिर्यो न लभ्यः
श्रृण्वन्तोऽपि बहवो यं न विद्युः ।

आश्चर्यो वक्ता कुशलोऽस्य
लब्धाऽऽश्चर्यो ज्ञाता कुशलानुशिष्टः ।।७।।

(कठोप. १–२–७)

बडे मंद अभागी लोग है– जिसको सुननेकी इच्छा ही नही होती– सत्संग कैसे करेगें– मरनेकी फुरसद नही महाराज– । वह मृत्यु देवता तो जब आयेगा वहाँसे लेकर चल देगा उसके लिये कोई एपलीकेशन नही काम देती ।

किन्तु हाँ ज्ञानसे थोडी फुरसद भी लो तो समझदारीमे आगे बढजाओगे । मनुष्य थोडा परिश्रम ले तो सुननेको मिलेगा– नही तो बहुतसे लोगको तो सुननेकी भी नही मिलता । मन्त्र आगे कहता है बहुतसे सुनते है किन्तु समझते नही– वहाँ उसका पाखंड चलता रहेगा हैं । दृष्टान्त से समझो– एक रहे मोहन सिंह उसने बनाया मकान तो उसके बगलवाले पडोशी रहे उसका नाम था सोहन सिंह छतका पानी थोडा दिया एक दिन तो सोहन सिंह के मकान पर पडा तो उसने कहा मोहन सिंह तुमने मकान बनाया तो अच्छा किया किन्तु पानीका निकास करनेवाला नाला मेरी छतपे डाल दिया यह ठीक नही हुआ– । उसने कहा यह तो ऐसे ही रहेगा– सोहन सिंहने सोचा उससे लडेंगे तों बात ठीक नहीं चलो अपने पंचायत बुलाओ– । आजकल तो पंचायतका राज है । पंचोने पूछा अरे मोहन सिंहके मकानसे उचा है ना ? तो कहा हाँ– तो दूसरेका मकान क्या तूने तोडना है ? जब परसका पानी उधर छोडता है तो ।

तो मोहन सिंह सोचके कहता है

पंचोकी राय शिर उते

और परनाला इयेका इये ।

इसी तरह बहुतसे सुनते तो है इस आत्माके विना जीना मुश्कील है किन्तु यह मन जो है-- परनाला समझो इसको यह मन सारी इन्द्रियोंको बाहर फैंक रहा है। इन इन्द्रियके द्वारा ताकत तो तुम्हारी बाहर जा रही है। तो मनमें ताकत आयी तो मनको जरा भी कोशिश नही किया की हम अपने मनको कंट्रोल करे--। भोग किस जन्ममे नही भोगे ? मेरेको समझाओ-- स्वर्गमें नही भोगे ? की नरक में नही भोगें ? मनुष्य जन्ममें नही भोगें ?

कीडी मकोडी भी हम हुए तो तब भी भोग मिला ही है। किन्तु जीव भोगमें अहंकार करता है अपनेको धन्य बनाता है।

एकवार देवराज इन्द्र अपने गुरु बृहस्पतिके साथमें घूमने गया तो उसके मनमें आया मैं देवताओंका राजा बनके इतने बडे एश्वर्यको भोग रहा हूँ-- बस मनमें गर्व आया मेरे जैसा कोई नही तो उसके साथ रहे ये बृहस्पति तो उन्होने देखाकी इसके अन्दर तो अहंकार उत्पन्न हो रहा है-- चलते चलते वे यूं रास्ता देखने लगे बहुतसे चींटीयोंकी कतारको देखने लगें।

तो पीछे रहे गये तो देवराज इन्द्रने सोचा की गुरुजी साथमें थे-- तो पीछे रहे गये तो पीछे आके पूछने लगा गुरुजी क्या देख रहे हो। बृहस्पतिजी कहने लगे मैं इन चींटियोंको देख रहा हुँ और इसमें कौन ऐसी अभागी चिंटी है जो इन्द्र नही बन चूकी तो मेरेको बहुतसी चिंटीयां इन्द्र बन चूकी ऐसा मालुम पडता है। अहंकार तो बडा पतनका कारण होता है। अहंकार जो नही बडेगा तो नम्रता जो है आयेगी नही तो वह जीव अहंकारमें बडा हो जायेगा। नम्रता जब होती है तो श्रद्धा होती हे तो चित्त कोमल होता है उसमें कोई चीज रखो तो उपर आ जाती है। जैसे पत्थरके अन्दर पानी नही घूसता-- मिट्टीमें घूस जाता है। तो मिट्टी अच्छी के पत्थर ? अगर कुछ बोना हो तो कोमल मिट्टी ही अच्छी।

जो बुद्धिमें पत्थरकी तरह हो गई है श्रद्धासे रहित हो गई है जिस बुद्धिमें श्रद्धा नामका सोमरस नही वह बुद्धि तो कणकी तरह हो गई है। उस रेगीस्तानमें कुछ नही होता।

इसलियें श्रद्धाये बुद्धिका सोम रस है उसको बनाके रखे बुद्धिमान।श्रद्धा बनी रहेगी तो सूक्ष्म अंशमें जायेगी--।

तर्कका होना कोई बूरी बात नही। जैसे श्वेतकेतु तर्क करता है हे भगवन् मेरेको पुन: समझाओ-- बडी श्रद्धासे आदरसे कहता है।

ऐसी सूक्ष्म बुद्धि है उसमें सूक्ष्मतत्त्वका विकास होता है किन्तु जो समताहीन बुद्धि है उसमें कुछ नही होता–।

आगे मन्त्र कहता है जिस तत्त्वकी व्याख्या कहते आए वह महान ज्ञानी कहता है वह ब्रह्म है अवाङ्मनसगोचरम् वहाँ मन भी नही जाता इन्द्रियाँ भी नही जाती उसका व्याख्यान कितना कठिन होगा। व्याख्यान उसका सटल होता है जिसका कोई रूप हो आकार हो जैसे इस शरीरका एक आकार है लम्बा चौडा बडा सुन्दर है– किन्तु आत्माका क्या व्याख्यान करोगे– ? फिर भी सोचो इस आत्माके बिना भी इस शरीरकी सुन्दरताका क्या व्याख्यान करोगे ?

मूरदेकी सुन्दरताका किसीने व्याख्यान किया कभी ? जब तक चेतन आत्मा है तब तककी सुन्दरताका व्याख्यान है तो सोचो व्याख्यान उसका– (शरीरका) है या आत्माका ? तो व्याख्यान तो उस आत्माका करते जा रहे हो फिर उसको नही समझ रहे हो यह माया है ?

व्याख्यान उसीका कर रहे है मन्त्र कहता है वक्ता बडा आश्चर्यपूर्ण है क्योंकि जो वाणीकी पकडमें नही आता मनकी पकडमें नही आता फिर भी वह जिज्ञासुको समझा देता है। जिज्ञासु भी उस तत्त्वको पकड लेता है और पकडके अपने मनको उसमे डूबोता है। इसलिये ज्ञान भी बडा आश्चर्य पूर्ण है वडा कुशल बुद्धिमान है समझ पाया। ऐसे वृहस्पतिजीने राजा इन्द्रके अहंकारको नष्ट कर दिया- क्योंकि अगर अहंकार आया तो बुद्धिमें कोमलता नही और जिस बुद्धिमे कोमलता नही तत्त्वजिज्ञासा नही रहेगी भोग वासना तो रहेगी। तो बारबार जन्म और मरणका यह कारण बनेगी।

इसलिये महाऋषि कह रहे है बेटा देख यह केवल भोग देनेवाले है कर्म– कभी मनुष्य को किट पतंग बनाता है तो कभी स्वर्ग भी भेज देता है ऐसे कर्म इसको फूट बोलकी तरह जानो।

वह महान ब्रह्मको कौन जानता है ? जो आचार्यवान पुरुष है शरीरके अन्दर बैठें हो तो कहते है– हे भगवन् मेरेको अविद्याने बाँधके रखा है मेरेको इस तत्त्वको समझाओ– गुरु जब इस तत्त्वको समझायेगा तो समझनेके बाद उस सत्वमे मन देगा तो धीरे धीरे मनकी ब्राह्मी स्थिति बन जायेगी। ब्रह्माऽ हमस्मि महावाक्यसे उत्पन्न वृत्ति बनती जायेगी वैसे वैसे यह वृन्ति गमन जैसे हम कही जाते है तो पैरोसे पहले चलते है की बुद्धिसे ? पहले समझते है की कहाँ जाना है ? तो पहले ज्ञान फिर संकल्प फिर क्रिया। जिसको ज्ञान है हाँ इतने बजे

प्रकाश संन्यास आश्रममे सत्संग होता है– तो संकल्प हुआ तो समयसे पहुँच जायेगा–। संकल्प ही नही हुआ ज्ञान तो है तो वह नही आयेगा– । ज्ञान, संकल्प तब क्रिया इसलिये यह जो क्रिया है ब्रह्माकारवृत्ति समझो । जन्म मरण तों करोडो बार हुआ और नाना प्रकार की योनिसे भोग भी भोग चुके है किन्तु आज तक इन भोगोसे कोई तृप्ति हुई नही ऐसे विवेकसे वैराग्यसे धीरे धीरे वैराग्यको जाग्रत करना पडेगा । कब तक इन भोगोको भोगेंगे ? ऐसे विवेक द्वारा वैराग्यकी बाद लगावे । जैसे खेतको बचानेके लिये पशुओसे किसान बाध लगता है कांटोकी इसी तरह मुमुक्षु वासनासे बचे वैराग्यके द्वारा । मन्त्र कहते है आचार्यंवान पुरुष वेद ।

तो वह ब्रह्मको गुरुपरम्परा प्राप्त ब्रह्मविद्या से जानेगा । एक प्रश्न आया कब जानेगा? जिस समय आचार्य उसको तत्त्वका उपदेश करेगा उसी समय जानेगा की बादमे जानेगा।

कहते है उसी समय जानेगा जब समझ लिया तो ज्ञानकी प्राप्ति हो गई । ज्ञानाग्नि प्रकट हो गई यह कर्म नाश करेगी । प्रश्न आया तब तत्काल मोक्ष होगाकी बादमे मोक्ष होगा ? ज्ञान होतेही अगर मोक्ष हो जाये तो जिस प्रारब्ध कर्मके द्वारा इस शरीरका जन्म हुआ उसकी आयु है कर्मभोग है शेषकर्म है की नही ? तो उसका क्षय तो ज्ञानसे होगा नही यह बाकी रह जायेगा । इसलिये कहना पडेगा तत्काल मोक्ष नही होगा । ज्ञान होगा तो भी शरीर तो रहेगा शरीर तो प्रारब्धसे बना है । शरीर तब तक रहेगा जब तक प्रारब्ध कर्म है विदेह कैवल्य तो शरीर छूटेगा तब होगा । तब तक बीचमें यह कर्म करेगा की नही ? कर्म करेगा तो धर्माधर्म फिर बन गया तो फिर उसका भोग हो गया तो फिर जन्म लेना पडेगा यह तो संसार बन्ध होगा ही नही, किन्तु ऐसी बात नही गुरुमहाराज कहते है– बेटा ऐसे तर्क मत करो–

श्रीमद्‌भगवद्‌गीतामे जो कहा है–

ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा ।(गीता. ४–३७)

कौनसे कर्म दग्ध हो संचित कर्म और क्रियामाण कर्म दग्ध हो गये । संचित कर्म उसको कहते है जिसका इस जन्ममे भोग नही होगा वह संचित । और प्रारब्ध जो कर्म है वह भोग देनेके लिये प्रवृत्त है उसका भोग हो जायेगा उनका तभी नाश हो जायेगा– । कर्मका अपने आप नाश नही होगा ज्ञानसे कर्मका नाश

होगा। यह ज्ञान संचित और आगामी माने क्रियामाण जो कर्म है उसका नाश करेगा। दृढ अपरोक्ष ज्ञान से जीवन्मुक्त हो जाता है।

सर्वात्मना विदेहमुक्ति यह शरीर जहाँ छूटा उसको होता है ऐसा मानते है? ऐसा महान ज्ञानी जो हैं उसके प्रिय जो शिष्य हैं प्रशिष्य हैं उसका ऐसा कोई कर्म रह गया और शरीर छूट गया तो वह कर्म उसके शिष्यको भोगना पडेगा– पुण्यफल तो शिष्यको मिल जायेगा और निरादरकरनेवालेको पापफल मिल जायेगा। ज्ञानी तो निर्लेप हो गया।

हरि: ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. ३२

ॐ पुरुषं सोम्योतोपतापिनं ज्ञातयः पर्युपासते जानासि मां जानासि मामिति । तस्य यावन्न वाङ्मनसि सम्पद्यते मनः प्राणे प्राणस्तेजसि तेजः परस्यां देवतायां तावज्जानाति ।।१।।

ॐ अथ यदाऽस्य वङ्मनसि सम्पद्यते मनः प्राणे प्राणस्तेजसि तेजः परस्यां देवतायामथ न जानाति ।।२।।

ॐ स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति भूय एव मा भगवान्विज्ञापयत्विति तथा सोम्येति होवाच ।।३।।

(छान्दो० ६-१५-१।२)

तो विचार आया पहले कहके आये कि जो आचार्यवान पुरुष है मुमुक्षु वह इस महान ब्रह्मको जानता है और वह जीवभावको छोडके उस महान सत्‌में लीन हो जाता है । जिस सत्‌के आश्रयमें यह सारा ब्रह्माण्ड है । श्वेतकेतु ने प्रश्न किया वह उस सत्‌में कैसे मिलता है मेरेको उस क्रमको समझाओ- हे भगवन्- । तो महाऋषि उद्दालक उसको एक दृष्टान्तके द्वारा समझानेका प्रयत्न करते है । महाऋषि कहते है हे सोम्य एक परिवारमें कोई महावृद्ध है- महावृद्ध वह है जो ८० वर्षके ऊपर है ।

विशाल कोई वटवृक्ष होता है जिसकी शाखा फिर किसी जगह फिर मूल बन जाती है और वह आगे बढ जाता है फिर जटा निकलती है– कलकत्तामें बोट निकल गार्डनमे तीन एकड भूमिमें फैला हुआ ऐसा एक वट वृक्ष है उसकी शाखा– उपशाखा ही मूल बन गई उसका असली मूल कौनसा है यह खोजने जाओगे तो यही मुश्कील हो जायेगा । इसी तरह यह मनुष्य प्राणी एक महावृक्ष है– पुत्र–पौत्र प्रपौत्र ये शाखा– उपशाखा बनती गई इस तरह विशाल परिवार हो जाता है एकदिन महावृक्षको बुखार आ गया– उसमें वह बेहोश हो गया और जिस समय पता लगाकि बेहोश हो गया तो जितने भाइबन्धु है सब पासमे आके घेरके बैठ जाते है सब पूछने लगते है– मेरेको देख रहे हो– ?

अगर देखता है तो अभी इसी दुनियामें है जिसमें हम लोग बठे है । और सब पूछते जाते है– बुढिया भी पूछती है कोनेमें बैठके मेरेको देखते हो ? तेरेको देखते देखते तो ठंडे हो गये अब क्या देखना ? इस तरह हे सोम्य सब अपने अपने परिचयको पूछते है । किन्तु ये कब तक देखेगा सुनेगा ? यह जोअहमास्पद आत्मा है तब तक ।

जब तक इसकी इन्द्रिया बाहर होगी । यह जो इन्द्रिया हम लोगोकी यह आंख देखती है यह तो चक्षु इन्द्रियका रहनेका एक Flat (स्थान) है अगर वह यहाँपर है तो आंख देखेगी– नही तो नही । इस तरह सारी इन्द्रियोकी बात है जिस समय यह जीवात्मा इस शरीरको छोडने लगेगा तो उस समय सब इन्द्रियोको अन्दर कर लेता है ।

अपने उदाहरणके लिये समझो हम किसी कियेके मकानमें रहते है जब चलने लगे तो सारा सामान लपेटने लगते है आनेवाला दूसरा है वह हमारी तैया-रीको देखके समझ जाता है इसी तरह समझो यह जो तुम्हारी इन्द्रिया– चक्षु है यह नाना प्रकारके रूपको देखता है– ऐसेही सारी इन्द्रियोंका जाल बिछा हुआ है इस बंगलेमें से जब जीवात्मा चलने लगेगा तो क्या करेगा पहले इन इन्द्रियोंको लपेटेगा– जो अपनी संपत्ति है उसको तो संभालना पडेगा– ।

यह इन्द्रियोंमें प्रधानइन्द्रिय है वाक्‌इन्द्रिय यह बाकी सबका लीडर है । नेता महत्त्वशाली होता है । नेताको पकड लिया तो सब पकडमें आ गये यहाँ पर श्रुति भी वाणी का नाम लेती है । इस लोकमें कब तक देखेगा– सुनेगा मनुष्य मन्त्र कहता है जब तक वाक् इन्द्रिय मनमें नही मिलेगी वहाँ वाक् इन्द्रिय माने सारी इन्द्रियको समझो । वाक् इन्द्रिय मनमें पहुँच जाती है । उदाहरणसे समझो यह

उस तरह चलता है मानलो कही लड़ाई लगी शत्रुके देशमे है हमारी फौज, और लडाई बन्द हो गई– तो हमारी फौज जो वहाँतक पहुँच गई है वह नही लौटेगी उनको जब सरकारका कोई सन्देश मिला तो चीफ अर्डर करेगा तब लौटेगी– अपने आप भागके नही आयेगी । यहाँ पर मायाकी नगरीमें कमान्डीङ्ग आफिसर है मन और इन्द्रियोंको तो सैनिक समझो । यह सैनिक अपनी जगह पे बैठके लड रहे है अगर इनके अर्डर हुआकी तुम पीछे हटो तो इन्द्रिया सब मिलके पीछे हटेगी और मनके पास पहुँचके खडी हो जायेगी सब की सब अब किसी इन्द्रिय का बाहरसे व्यवहार नही हो रहा है अब आंख देखती नही– कान सुनता नही– वाणी बोलती नही । किन्तु अभी शरीरको छोडा नही तो बाहरकी दुनियाके लिये तो कहेंगे सब बेहोश हो गये । यहाँ पर जीवात्मा यह जो शरीर है इसको कैसे छोडने है यह समझा रहे है मृत्युके समयमें प्राण कैसे छोडता है ।

शरीर छोडनेवाले दो प्रकारके प्राणी– मूढप्राणी– जो मोहासक्त है– वह जब शरीर छोडने लगता है तो जिस योनिका चित्र उसके सामने आयेगा उसके अनुसार सुखी या दुःखी होगा तो– जैसे वर्तमान कर्म होंगे उसके अनुसार योनि सामने आयेगी– । मानो बडी भयंकर योनि व्याघ्र सामने खडा है तो जैसे व्याघ्रसे इस जीवनमें हम डरते है वैसे वहाँ भी डरेंगे तो खट पीछे हो गया तो अब बाहर नही आता– वेहोश हो गया– किसीका शरीर– महीनो तक वेहोश रहता है वह भयंकर योनि सामने आ रही है तो इसको छोडना नही चाहता । और किसी कैसीको ऐसा होता है बडी अच्छी सुन्दर योनि दिख गई तो वह हसते हसते शरीर छोड देगा । मानलो एकव्यक्ति अपने बंगलेमें रहता है कुछ कर्जा है उसके उपर अब कोर्टमें केस चल रहा है बलात् पुलिस उसको फूटपाथ पे खडा करती है तो उसको कितना दुःख होता है ? उसके लिये उसने सबकुछ किया किन्तु कुछ नही हुआ । अब एक ठंडीमें सूकड रहा है एक दयालुने कहा मेरा एक बरण्डा है तूं बरण्डेमे चला आ तब उसको तो कोई दुःख नही वह खुशी खुशी चला आयेगा उसको कोई दुःख नही फूटपाथ छोनेडको ।

यहाँ पर ऐसे ही जीवको जब अपनेसे उत्तम कोटिकी योनि दिखी तो खट शरीर छोडेगा ।

महाऋषि समझा रहे है जब सारी इन्द्रिया मनके पास आ गई तो मनके सामने एक प्रकाश आ जाता है तुम्हारे अन्दर तीन चीजे है मन– बुद्धि और प्राण प्राण क्रिया प्रधान है । जींवन कालमे भी सभी क्रिया प्राणके अधीन ही होगी– । प्राण यदि कमजोर हो गया तो इन्द्रिया भी ठीक कार्य नही करेगी ।

परमात्माने जीवत्माको तीन शक्ति दिया–ज्ञानशक्ति संकल्पशक्ति और क्रियाशक्ति ।

ज्ञानसे समझने है फिर उसके लिये संकल्प करते है यह जरूर लेना है-चाहिये फिर उसके लिये प्रयत्नशील होते है तब क्रिया आती है । इसलिये दार्शनिकोका मतहै जानाति–इच्छति–गच्छति ।

ज्ञान हो गया की अभी इस शरीरको छोडेंगे-तो छोडकर के किधर जाता है तो वह योनि सामने आ जायेगी उसकेबाद में संकल्पशक्ति सामने आगई–फिर क्रिया ।

मनके अन्दर सारी इन्द्रिया पहुच गई तो जानां है तो किधर जाना है तो बुद्धिने निश्चय कियाकी अमुक जगह जाना है । अब चलनेकी बात तो वह आशान है वह क्रिया प्राणमें है इसलिये मन प्राणमें मिला ।

अहम्का नाम प्राण नही–किन्तु गलेसे उपर जितना वायु है वह सब प्राण है । कंठसे नाभी तक उदान उसका काम है नीचेकी चीजक उपरको खींचना अब यदि प्राण उदानको साथमें मिलातो उदानकोउपर खींचेगा उदानका दूसरा नाम है तेज । श्रुति कहती है मन प्राणे प्राणस्तेजसि । बाल्टीमें रंगडाला पीचकारीसे खींचा तो पीचकारी मे रंग आगया नाः शरीरको तो समझो बाल्टी–उसमें अमृतजलरूपी यह प्राणभरा है उदानके द्वारा–अपान–व्यान समान इनको सबको खींचेगा तब प्राण उपरसे जायेगा ।

यदि प्राण बलवान् नही हुआ उदानको खींचनेमें तो उदानको अपान खींचेगा तो नीचेसे प्राण निकल जायेगा ।

जिधरसे प्राण जायेगा तुम्हारा उस इन्द्रियको खोल देगा ।

जिसका यह शरीररूपी बंगला है उसको वह खुद खोलके गया तो बंध कौन करेगा ? इसलिये जब जीवात्मा जाता शरीरको छोडके तो किसीकी आख खुल जाती किसीका मुह खुल जाता प्रयत्न करने परभी फिर बंद् नही होता– ।

इसलिये अपने यहां प्राणायाम नामका योग आया–प्राणका जप करो । प्राणको यंही आने जाने देगे तो हमने इसकी किमत ही नही समझी तो ये यंही आता जाता रहेगा ? यह बडा किमती है एकश्वास बाहर नीकल गया और फिर वह अन्दर नही लौटा तो तुम यहा हो की बाहर ? अगर अन्दर नही लौटा कोई नही

सुनेगा ? शरीर चाहे करोडपति बना हुआहै तुम्हारा कोई है यहां ? सब अपने आपको लेकर दूसरेसे प्यार कर रहे है ।

अपने ज्ञानको निर्मल रखे बुद्धिमान मोहसे जीनेकी जरूरत नही है । यह सब हमारे है जबतक प्राण है । जब प्राण नही तो कोई हमारा नही ।

तो ऐसे मन प्राणसे मिलके सब परादेवताके पास आते है कहते है हेभगवन् अबचलना होगा यहासे-तो बस उस उदानने सबको खींचा । समान नाभि मंडलमे और व्यान नामक वायुसारे शरीरमें व्याप्त है–अब जब उदान सबको खींचता है तब शरीर अंकडता है । इस तरह यहासे चले गये, कहते है

तंविद्याकर्मणी समान्वारभेते पूर्वप्रज्ञाच अब शरीर है उस शरीरका आरंभ करनेवाला कौन ? तो कहते जैसी अविद्या होगी कर्म होगा–ऐसे नये जीवके आरंभ होगे ।

श्रुति कहती है पूर्व प्रज्ञा च पूर्वजन्मकी जो वासना है विद्या और कर्म–तीन प्रकारके कर्म राजस–तामस और सात्विक विद्याभी उसके अनुसार होगी और पूर्वजन्मका संस्कारभी वैसा आयेगा उसका नाम है प्रारब्धकर्म ।

हरि: ॐ तत्सत्

ॐ

प्रवचन सं. ३३

ॐ पुरुषं सोम्योत हस्तगृहीतमानयन्त्यपहार्षीत्स्तेयमकार्षी
त्परशुमस्मै तपतेति स यदि तस्य कर्ता भवति तत एवा-
नृतमात्मानं कुरुते सोऽनृताभिसन्धोऽनृतेनात्मानमन्तर्धाय
परशुं तप्तं प्रतिगृह्णाति स दह्यतेऽथ हन्यते ॥१॥
अथ यदि तस्याकर्ता भवति ततएव सत्यमात्मानं कुरुते
स सत्याभिसन्धः सत्येनात्मानमन्तर्धाय परशुं तप्तं प्रतिगृ-
ह्णाति स न दह्यतेऽथ मुच्यते ॥२॥
स यथा तत्र नादाह्येतैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा
तत्त्वमसि श्वेतकेतो इति तद्धास्य विजज्ञाविति विजज्ञा-
विति ॥३॥ इति षष्ठोऽध्यायः ॥

(छान्दो. ६-१६-१।३)

तो कल इस बातको स्पष्ट कियाथा कि विद्वान और अविद्वान दोनो यहांसे जायेंगे-यह शरीर दोनोको छोडना है तो दोनोके प्राणमें फर्क क्या ? यह प्रश्न आया ।

अज्ञानी जब यहासे गयातो वह वासनासे गया तो जैसी वासना होगी वैसी योनि मिलेगी ।

तामसी वासना होगी तो पशु-पक्षी-सिंह व्याघ्र इत्यादि जीवयोनिमें प्रवेश कर जायेगा ।

रजोगुण सहित सत्त्वगुण–सत्त्वप्रधान वासना होगीतो ये मनुष्यादि शरीरमें चला जायेगा और मनुष्य जन्म भी अच्छे मातापिताकी गोदसे जन्म लेगा– ।

किन्तु विद्वान् ज्ञानबान् जब जायेगा तो जिस अज्ञानसे बंधा ये जीव बना था तो यह अज्ञान छूट गया तो वह सत्में मिल गया जैसे घडेको तोडदिया तो वह घटाकाश महाकाशमें मिल गया ।

न स पुनरावर्तते–वह पुनः नही लौटेगा ।

ऐसा महान जो परमात्मा है वह सूक्ष्म है वह सत्य है ऐसे इस सत्यको मुमुक्षु बुद्धिमें ले आवे । इस सत्यमें मन आना चाहिये वही आत्मा है–अनात्मा-से मन पीछे हट गया, विषय सब अनात्मा है ।

कामान् यः कामयते मन्यमानः
स कामभिर्जायते तत्र तत्र ।
पर्याप्तकामस्य कृतात्मनस्त्विव–
हैव सर्वे प्रविलीयन्ति कामाः ।।

नाना प्रकारकी कामनायें (वासनायें) जीवके अन्दर है उन कामनाओंको पकडके यह जीव चिन्ता करता है अब मन उस कामनाओंमें लीन हुआ है तो उस कामनाप्रधान योनिमें जन्म लेगा । वह कामना उसको जीत लेती है जो उसका आदर करता है और फिर उसके अनुसार उस योनिमें जन्म देती है । जैसे हम मार्किटमें जाते है किस इच्छाको लेके जायेंगे ? जिसको लेके जायेगें उसीको ही खोजेंगे–जबतक वह चीज नही मिलेगी चैन नही मिलेगा । वह मिल जायेगी तब शान्ति मिलेगी । इसी तरह जिस जिस कामनामें शरीर छोडेगा उसके अनुसार जन्म मिलेगा– । जिसने सारी कामनाओंको अपनेमें लीन कर लिया है– उसका फिर जन्म नही होगा ।

यह शरीर जो है सारा तुम्हारी आत्मामें अमृत बना हुआ है जब यह इसमेंसे नीकलेगा तब कहेंगे मुरदा है ।

तो कर्मके सम्बधसे यह चेतनमें लीन हुआ शरीर अमृत जैसा प्यारा लगता तो जैसे शरीर प्रकृतिके नियमसे लीन है ऐसे तुम्हारी वासनाये लीन हो जाये– वह तो ज्ञानसे होगी चेतन आत्माको प्रधान मानोगे तो संसारसे विख्यात हो जाओगे । नही तो मरमरके जायेगा– मरमरके फिर आयेगा ।

महाभारतमें एक बडी सुन्दर कथा आती है। महामुनि निदाधथे, जो महाऋषि पुलस्त्यके पुत्र थे उनके गुरुदेवका नाम था ऋभु जो परमेष्टि ब्रह्माके मानस पुत्रथे । निदाघ पुलस्त्य महाऋषिका पुत्र था किन्तु कर्मासक्त था.। वह कहता है भगवन् बिना कर्मके क्या होनेवाला है ? कोई कोई प्राणी कर्ममें मोह बांधके बैठते है बिना कर्मसे कुछ होगा नही ऐसी नीतिहै यज्ञादि जो वैदिक कर्म है उसमेंभी मोह हो जाता बहुत लोगोंका वैदिक कर्म तो करने चाहिये किन्तु मोह पकडके नही करने चाहिये नही तो बुद्धि बाहर ही घुमती रहेगी । परमार्थ चिन्तामें बुद्धि आयेगी ही नही । तो महाऋषि ऋभुने निदाधको आत्माका उपदेश दिया । सत् चित् आनन्दरूप आत्माके अतिरिक्त सत्य कोई वस्तु नही । शरीर जो कुछ भी प्रिय है चेतन आत्माकी छाया में प्रिय है । निदाधकी इसबातको समझाया वंशी बजाते है ना ? उसमें छिद्र है भिन्न भिन्न है मुह लगाके हवा दे दिया जैसे ऊंगली घुमाओगे वैसे वैसे भिन्न भिन्न स्वर भेद हुआ तो संगीत बन जायेगा । हवा मुहसे जारही है वह तो एक है किन्तु उन छिद्रोसे जो स्वर नीकले उसमें नाना भेद । यह जो नाना भेद है वह वायुमें है ? वायु एक ही है वायुमें कोई भेद नही किन्तु स्वर है जुदेजुदे चेतन है परमआत्मा सर्वभूतोंका अंतरआत्मा उसमें कोई भेद नही किन्तु उसकी उपाधि भिन्न है इसलिये जुदा जुदा अहंकार जीवोमें चल रहा है। महामुनि बेटा तुम इस आत्मामें मनकी प्रतिष्ठा करोअब ऐसा उपदेश करके चले गये । फिर दिव्य हजार वर्षके बाद फिर लौटके आये सोचा देखो तो जरा चेलाकी हालत क्या है ? निदाघ बुढ्डा तो गया है । कर्मकांडी ये अतिथिदेवो भव अगर कोई अतिथि घरमे नही आवेतो दरवाजेमें खडे रहने थे जितनी देरी तक गौ दूरी जाये उतनी देरी तक खडे रहनेदे और कोई आया तो ले आये अब ये दरवाजेपे इसतरह खडा है इसने ऋभुको आते देखा किन्तु पहचाना नही ।

हे भगवन् पधारीये भोजन करे–। अर्घ्य, पाद्य इत्यादि देकर कहता है भोजन तैयार है हे भगवन् भोजन करो । ऋभु कहने लगा क्या क्या तैयार है कहने लगा हे भगवन् जवकी लपसी बाटी और सातु । पुराने जमानेमें बडा भोजन था वैदिक भोजन । ऋभु कहने लगा हमारी तो मीठा भोजन करनेकी इच्छा है खांडका बना हुआ कोई भोजन–ऐसा जो कहा तो निदाघ बडे प्रसन्न हुएके अपनी रुचि स्वयं बतला रहे है इसमें अच्छी बात क्या होगी ? अपनी घरवाली को बुलाके कहते है हे प्रिय यह जो हमारें अच्छे अतिथि आये है इनको तुम कोई हलवा बनाके खीलाओ तो वह घरवाली भी बडी भद्र थी तत्काल प्रसन्नतासे तैयार किया खुब खिलाया ।

अब हाथ धोके आ गये । निदाघने भी भोजन लेलिया फिर आके निदाघ पूछता है हे भगवन् तृप्ति हुई की नही । हे भगवन् आपका मन प्रसन्न है की नही? आप कहांके रहनेवाले हो ? किधर आप जा रहे हों ?

अब तक कुछ नही पूछां था अतिथि दूसरी अग्नि है । चलते चलते रास्तेसे अग्निकी उत्पत्ति हो जाती है तो अग्नि की प्रधामता तो है और तुमने आतेही प्रश्न पूछा और क्रोध आ गया तो बूरा परिणाम होगा । इसलिये प्राचीन जमानेमें परंपरा थी हाथमूह धुलाओ पानी पीनेको दो-तो पानी अग्निको ठंडा कर देगा तो अब उसने बात करो तो ठीकसे बात करेगा । गुजरातमें अब भी यह परंपरा है प्यारसे बिठाया पानी दिया । हे भगवन कहांके रहनेवाले हो-तो ऋभुने कहता है जिसके अन्दर अतृप्त होगी उसीको तृप्ति होगी मेरे अन्दर अतृप्ति कोई है नही तो तृप्ति कहां से आयेगी । असंतोष तो मनमे है ।

मनमें संतोष आयेगा मेरे मे तो कोई असंतोष की बात ही नही तो संतोष कहांसे आयेगा । भूख लगेगी वहीतो खाता है मेरेको तो भूख ही नही लगी है खानातो प्राणका धर्म है । वेदान्तमे षड्उर्मियां मानी जाती है स्थूलदेहमें जन्म मरण प्राणमें भूख प्यास और मनमें शोक-मोह-अब बताओ तुम्हारे मे तो कुछ भी नही । जिस समय हम इससे अपनेको मिला देते है मनको मिला देते है तो मनका शोक मोह अपनेमें आ गया । किन्तु जिस समय आप गाढ निद्रामें चलेगये सबसे प्यारे हो गये ऐसे कोई उर्मी नही ऐसे ऊचे ज्ञानमें चले जोओगे वेदोमें श्रुति है ।

तत्र क्व मोहः क्व शोकः एकत्वमनुपश्यतः ।

क्या शोक है क्या मोह है एकत्वमे । यह जो अद्वितीय चिदात्मा है इसमें जब मन रम गया तो शोक-मोहसे पार हो गया । ऋभु कहता है तेरेमें ये धर्म नही तेरेसे तु क्या प्रश्न करता है । अगर विचार करके देख जो तूंने मेरेको समझा वह मैं नही । जो तुने अपने को समझा वह तूं नही ।

शरीर जब नही रहेगा तब भी तु रहेगा तो शरीरको पकडके कितना परिचय देगा ?

आज जो शरीरकी सकल है आकार है वह २० वर्ष पहेले रहा ? गायब हो गया और जो नही था वह अपना हो गया इसलिये तुम्हारेको तत्त्वज्ञानमें निष्ठा रखनी चाहिए । अरे भोजन भी इसलिये करना पडता है कि जैसे कोई सीमेन्टेड

घर है उसमे प्लास्टर भी करना पडे पानी भी छीडकना पडे इसी तरह यह अन्न पानीका पुतला है इसको अन्न पानी देना पडेगा जब तक इसमें बैठे है । हमारा क्या मतलब है ये उसके बिना रहेनेवाला नही इसलिये उसको देते जाते है । और कोई बढियासे बढिया खीलाये कोइ घटिया से घटिया देता है ।

निदाघ बडी नम्रतासे सब पूछता है हे भगवन्? आप मेरा भला करने आये है आप होतो कौन हो ? पहचाना नही अभीतक हम तुम्हारे आचार्यपाद ऋभु है तो निदाघ बडी श्रद्धासे साष्टांग दण्डवत प्रणाम करता है । मेरा उद्धार करनेके लिये दया करके आप आये हो–थोडी देर के बाद फिर ऋभु उठके चले गये ।

बहुत वर्षो के बाद फिर आये निदाघके पास तो जहां जनताका भेला लगा है बडी उची सवारी पे कोई राजा प्रवेश कर रहा है निदाघ कोइ एक गली के कोनेमें खडा है ऋभुने पहचान लिया–बिचारा बुढ्ढा हो गया । ऋभु बोले बाबा तुम तो यहीं के रहनेवाले मालुम पडते हो बतलाओ ते ये क्या है ? ये सब क्या है ? हे भगवन् यह इसनगरके महाराजा इस नगरमें प्रवेश कर रहे है और सारी प्रजा उसके दर्शन के लिये खडी है । अब ऋभु जो थे उन्होने सुना फिर थोडासा प्रश्न करते है ये बताओ यह राजा कौन है और प्रजा कौन है ।

निदाघ कहते है हे भगवान् ये पहाडके शिखर जैसे हाथी पर चढा हुआ है वे राजा है और अगल बगलमें प्रजा खडी है ये जनता है । ये राजा नगरमें प्रवेश कर रहा है । तो ऋभु प्रश्न करता है मैं राजाको हाथीको तो एक ही देख रहा हुं ये बतलाओ हाथी कौन है और राजा कौन है ?

निदाघ कहते है जो सोनेके सिहासन पे बैठा है वो राजा है और नीचे हाथी है ऐसा जब उत्तर दिया तो ऋभुने फिर टेढा प्रश्न किया मेरेको तो मालुम पडा राजा नीचे है और हाथी उपर है उपर नीचेका क्या अर्थ किया अगर हाथीको पहले देखोगे तो राजा बादमे दिखातो हाथी पहले हो गया राजा नीचे हो गया । उपर नीचेकी व्याख्या करो– ? तो निदाघ बुढ्ढा उसकी छातीपे बैठ गया– श्रीमान देख रहे हो मैं उस महाराजकी तरह उपर हुं और तुम हाथीकी तरह नीचे हो । ऋभुके मनमे जरा भी क्रोध नही आया ।

उसने फिर प्रश्न किया अब ये बताओ तुम कौन हो और हम कौन है ? यह जो प्रश्न किया यो निदाघ चमका मैंने इसका अपमान कर डाला और फिर ये

मस्तीसे उत्तर दे रहा है ये हमारे गुरुदेव तो नही है ?

हाथ जोडके प्रार्थना करने लगे– हे भगवन् आप ऋभु महाऋषि तो नही?– तो उन्होने कहाँ हाँ हम तुम्हारी कितनी निष्ठा बनी – श्रद्धा बनी । यह जानना चाहते थे ।

ज्ञानमे निष्ठा तब जायेगी जब तुम्हारी धारणा निश्चित बन जायेगी जैसे अपने सीधा समजो– जैसे कोई जीवनमे मानलो हम लोगका नाम रख जन्मके बाद जगदीश विमल– कमला कान्ति हो– तो हम लोग ऐसा पकड लेते है और निद्रामें कोई बोले तो खट उठके उत्तर देते है । ये क्या है ? नामके साथमें अपनेको मिलाया तादात्म्य करके बैठो है यह ज्ञानकी दृढता है ।

मुमुक्षुके अन्दर ऐसी ज्ञानमे दृढता होवे । महाऋषि ऋभु कहते है हे बेटा तुमने बडी सेवा किया है हमारी और बारबार हम तुम्हारी ज्ञानकी दृढता करनेकी लिये आते है । तुम ऐसे तत्त्वज्ञानमे अपनेको दृढ करो ।

व्यवहार मे भी ज्ञान दृढ करते है जैसे फलानी जगह हमारा बंगला है तो हम वही पहुँचते है की नही ? दूसरी जगह क्यों नही जाते । लोक जीवनसे भी अपने ज्ञानको सुनिश्चित रखोगे तभी व्यवहार चलेगा अगर ज्ञानको सुनिश्चित नही रखेगे ज्ञानके अन्दर भ्रम है तो लोक जीवन हमारा किसी महत्त्वका नही रहेगा ।

भगवान कृष्ण अर्जुनको कहते है ज्ञानवान् मुमुक्षुकी दृष्टि कैसी होवे यद्यपि नामरूपको पकडनेवाली दृष्टि जो है वह भेद पकडे बिना छोडेगी नही । अपने जीवनमें सीधा समझो कानको पकडोगे तो उसको कान ही समझना पडेगा नाक तो नही समझोगे– जिस अंगको हम देखेंगे उस अंगको उसी रूपमे नाम करके व्यवहार करना पडेगा । नाम रूपमें भेद दृष्टि है किन्तु यह आँख जिससे जी रही है क्या उससे यह कान नाक– मुह नही जी रहा है ? जो एक आँखकी आत्मा है वही सारे शरीरकी आत्मा है वह चेतन आत्मामे कोई विषमता नही ।

भिन्न भिन्न नामरूपमे समताकी दृष्टि क्योंकि यह तत्त्व सामने है उसमे भेद नही जैसे आकाश समान है ।

इसलियें भगवान श्रीकृष्ण अर्जुनको समझाते हुए कहते है

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः ।
ये भजन्ति तु मां भाक्त्या मयि ते तेषु चाऽप्यहम् ।।

(गीता० ९-२९)

हम संपूर्ण भूतोमे सम है हमारे अन्दर विषमता नही । भय कब आता है जब मन लग जाता है ।

जीवके पासमें मन है इसलिये भेद है परमात्माके पासमे मन नही इसलिये भेद नही इसका कोई प्यारा नही कोई दुश्मन नही । तुमारा कोई प्यारा कोई दुश्मन क्योंकि हम मनसे देखते है । मनमे किसीके प्रति राग है वह प्यारा राग नही वह द्वेषी हो गया । हम प्यारकी भाषाको मनसे पकडते है तो कहीं प्यार झगडा ।

. परमात्मा में कोई विषमता नही– भक्तके उपर खुश होते है विरोधी के उपर खुश नही ऐसी बात नही ।

ये भजन्ति ध्यायन्ति– ध्यानके द्वारा उसका मन मेरेको पकडता वह भक्त मेरेमें आ गया और मैं भगत में चला गया । ज्ञानीका मन जो है मेरेको अपनी ओर खींच लेता है– इसका मतलब यह नही की वह मेरेको प्यारा है– किन्तु उनका मन होता वह मेरेको खींच लेता है तो मनके अन्दर जो भेदकी दिवार है उसको जो तोड देता है तो उसको हम मिल जाते है

मनके अन्दर अज्ञानकी दिवारको जिसने तोड दिया तो हम दूर कहाँ है । अभाने अवाधक आवरण वस्तु तो ठीक है किन्तु भान नही होगा– जैसे उदाहरणके लिये समझो दश नौ जवान लडके विदेश जानेको नीकले रास्तेमे किसी नदीको पार करना पडा तो पार करके अपनेको गीनने लगेकी सब पार उतर गये कि नही तो एक खडा हो गया और नौ को तो गीन लीया अब दस त तब होगा जब लौटके आयेगा अन्दर अपनेको भी पकडेगा किन्तु तब तक अन्दर आके अपनेको पकडेगा नही दस तो दिखेगा ही नही अब दूसरा आया उसने भी ऐसे ही किया– नौ को तो और करके गीनता है अपनेको हम करके सोचता है उसको तो गीनने की जरूरत ही नही– अब दसवाँ गायब हो गया– ऐसे करके सब बैठ गए– रोने लगे– । दूसरा नौ जवान घोडे पे चडके आ रहा था– उसने देखा– सबको तो पास में आके पूछने लगा– क्यों रो रहे हो–? क्या बात है ?

तो एकने सारी कथा सुनाई– कि भाई विदेश जा रहे थे– पार होते हमारा एक दोस्त डूब गया इसलिये रो रहे हैं– तो उसने नजर मारी तो दशों वहां पर है और ये रो रहे हैं– स्कुधीन हो गयाहै– । स्कुको कसना है तो उससे कहा अरे दशवाँ डूबा नही है– तो तुरन्त रोनेवाले चूप हो गये । सबने कहाँ दशवाँ कहा है दिखादो- तों उसने गीना और कहा दशवाँ तुं हैं– नवको तो सीधा गीन लीया– कहाँ दसवा तेरा स्वरूप ही है ।

श्वेतकेतुको फिर महाऋषि कहते है–अन्त मे तुमको सत्यज्ञानी का दृष्टान्त देता हुं सुन्–जो चोर है, अगर वह मिथ्यावादी हो तो तप्त परशु छुते ही दग्ध होकर मरजाता है, यदि चोरी करनेवाला वह नही है तो उससे नही जलता । इसी प्रकार तुमको सत्याभिसन्ध बनना पडेगा । 'तत्त्वमसि' महावाक्य से तुम अपनेको सद्‌रूप ही जानो । जीवभाव की निवृत्ति करके ब्राह्मी वृत्ति मे मग्न रहो । तब श्वेतकेतुने समझ गया ।

इस प्रकार नौ वार दृष्टान्त सहित उद्दालक ने श्वेतकेतुको समझा कर 'तत्त्वमसि' महावाक्यद्वारा कृतार्थ किया । यही एकत्व भाव मे आप सव जाग्रत रहें, मेरी शुभ–कामनाएं एवं शुभाशीर्वाद है ।

हरि : ॐ तत्सत्

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	२४	समझगे	समझेंगे
३	३	श्रीमद् भागवद्	श्रीमद्भगवद्
,,	६	आपको	आप
,,	२६	करने	करते
,,	२७	वहेते	कहते
४	२३	अधय	अधम
५	३	चेतना	चेतन
७	२०	शातन्मना	शान्तमना
९	१३	प्रसगमे	प्रसङ्गमे
१४	६	दशन	दर्शन
१७	१५	अदर	अन्दर
१९	२	वश	वंश
२४	१६	रही	नही
२६	५	अन्तम्	अनन्तम्
२६	१३	फुलजाहा	फुलजाता
३१	९	धारेमें	वारेमें
३५	२	जगलसे	जंगलसे
३७	१८	वहारसे	बाहरसे
३९	१८	प्रारब्व	प्रारब्ध
,,	३०	योंक्कि	क्यों कि
४०	२	वऽहम्	वाऽहम्
,,	१४	चजू	चलू
,,	१७	छोडहा	छोडता
,,	१९	चहेराभी	चेहरा भी
,,	२०	चहेरेमे	चेहरे मे
,,	२१	चहेरा	चेहरा

	४	नई	नही
"	१३	केको	लेके
"	१५	कम	कर्म
२	१	रहेने	रहते
३	८	कोह	कोई
"	९	हयारे	हमारे
"	१२	डीक	ठीक
"	१६	जांवते	जानते
४	३	नेरा	तेरा
"	९	हीना	होता
"	२३	म्राद्रि	म्रादि
"	२५	देखज	देखता
५	३	समझा	समझो
"	१३	जंने	जैसे
"	२३	फर्म	फर्क
६	१	प्रता	प्रति
"	६	कोय	कौन
"	६	मनुत्य	मनुष्य
"	७	पणी	पक्षी
"	१०	ढेद	भेद
"	१८	टन	तन
"	१९	समजो	समझो
"	२०	म	मन
"	२१	ते	सी
"	२१	सकडी	लडकी
	१२	द्रश्टा	द्रष्टा
	१५	रहेना	रहना
	१	उयदेश	उपदेश
	२	रहंने	रहते
	२	सोचने	सोचते
	३	ट्दालक	उद्दालक
	४	कहने	कहते

,,	५	पहेले	पहले
,,	६	ऐक	एक
,,	७	बोयानो	बोयाते
,,	८	दिम्वेगा	दिखेगा
,,	८	षृक्ष	वृक्ष
,,	६	पहेले	पहले
,,	११	कहेने	कहते
,,	१०	श्राचार्य, कहेने	आचार्य, कहते
,,	११	यात्र	मात्र
,,	११	सन	सत्
,,	१३	निर्दिशेषम्	निर्विशेषम्
,,	१४	,,	,,
,,	१५	मीला	पीला
,,	१८	अस्तिवा	अस्तित्व
,,	,,	पहेले	पहले
,,	२३	पडेका	पडेगा
,,	२७	निर्दिशेषम्	निर्विशेषम्
,,	२८	निरजनम्, श्रोए	निरञ्जनम्, और
,,	२६	सुनने	सुनते
५१	६	जागा	जाता
,,	१२	समक	समय
५५	८	हृदयथे	हृदयके
,,	२३	यनादि	अनादि
५६	५	अनुमाननीब	अनुमेय
,,	७	अनुमाननीय	अनुमेय
,,	२८	क्वा	क्या
५६	१२	मोल	मोक्ष
६०	१	भूबमे	भूलमे
,,	१६	पेरड	पेर
६१	१६	जन्ती	गल्ती
,,	१७	उनये	उनके
६३	१	म	मे

,,	५	द्रष्ट	द्रष्टा
६	११	वावर	पावर
७	२८	मिछ्या	मिथ्या
६	१	ऐषा	ऐसा
,,	३	व्रलेऽवा	ब्रह्मैवाऽ-
,,	८	इच्चा	इच्छा
,,	१२	चनकी	चनेकी
,,	१५	संबंधरो	संबंधसे
,,	२२	इरना	इतना
,,	०३	ववाती	बताती
०	३	जूठी	झूटी
,,	१२	श्याम	स्याम
,,	१८	फुटमे	फ़ुटमे
,,	२	बुट्टा	बुड्ढा
७१	६	द्रसके	इसके
८०	२	कीमल	कोमल
८१	१	उर्ध्वस्रोत्न	ऊर्ध्वस्रोत
,,	५	ऐषी	ऐसी
८६	८	परात्	परा
००	२१	प्या	प्यार
११	२४	शीर	क्षीर
१२	१	वहें	वह
१५	१	सगाने	संगसे
१६	१६	भखन	भगवन्
,,	१६	पुक्त	युक्त
,,	१७	वाजीसे	वाणीसे
०	१८	डडा	ठंडा
४	१३	समार्सन	सामान
,,	,,	पर्पमे	पर्समे
१	११	दृष्टासेन्त	दृष्टान्तसे
७	६	अवमहमस्मि	अयमहमस्मि
	२१	निर्मयता	निर्भयता

द. नं. १४३५

Nepal Sanskrit University पुस्तकालय

१८४	[illegible]	ॐत्योर्मा	ॐ मृत्योर्मा
१८५	[illegible]	द्गगमय	सद्गमय
१८७	२५	स्वाह्	स्वाद
१९१	६	निशका	निःशंक
१९२	३	श्रावान्तर	अवान्तर
,,	७	याज्ञवाक्य	याज्ञवल्क्य
,,	१३	अह	यह
,,	१४	चात्मा	आत्मा
,,	२०	हृदनस्थ	हृदयस्थ
,,	,,	केतन	चेतन
२०८	१	बेटान्नाऽत्वंसि	बेटा न त्वमसि
,,	११	भूलहै	मूल है
,,	१२	भूलसे	मूलसे
२०९	३	धर्मो	धर्म
२११	१७	महाॠषि	महाॠषि कहते हैं
,,	१९	इस	दस
२१३	२२	विवेशष	विशेषण
२१५	१३	ओर	और
२२२	२६	श्वत	शाश्वत
२२३	२४	सवथा	सर्वथा
२२९	२२	के	कि
२३०	४	ब्रह्मा	ब्रह्म
२३१	१२	गादमे	बादमे
२३४	२६	वाकी	वाणी
२३५	२५	छोनेडको	छोडनेको
२४१	२०	क्व मोहःक्व शोका	को मोहः कःशोक
२४३	११	हफारी	हमारी